प्रारंभिक शिक्षा में पत्रोपाधि (डी.एल.एड.)

Diploma in Elementary Education (D.El.Ed.)

हिन्दी शिक्षण स्तर–2

द्वितीय वर्ष

(प्रायोगिक संस्करण)

प्रकाशन वर्ष–2018

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, छत्तीसगढ़, रायपुर

प्रकाशन वर्ष–2018

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् रायपुर छत्तीसगढ़

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

सुधीर कुमार अग्रवाल (भा.व.से.)

संचालक, राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर

पाठ्य सामग्री समन्वय

आर. के. वर्मा

डेकेश्वर प्रसाद वर्मा

विशेष सहयोग

यू.के. चक्रवर्ती

विषय संयोजक

आर.एस.बघेल

डेकेश्वर प्रसाद वर्मा

तकनीकी सहयोग एवं सामग्री संकलन

विद्या भवन सोसायटी उदयपुर, छत्तीसगढ़ शिक्षा संदर्भ केन्द्र, रायपुर

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् रायपुर उन सभी लेखकों/प्रकाशकों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता है जिनकी रचनाएँ/आलेख इस पुस्तक में समाहित है।

प्राक्कथन

विद्यालय में अध्ययनरत् बच्चे भविष्य में राष्ट्र का स्वरूप व दिशा निर्धारण करेंगे। शिक्षक बच्चों को कुम्हार की भाँति गढ़ता है और वांछित स्वरूप प्रदान करता है। इस गुरूतर दायित्व के निर्वहन के लिए शिक्षकों को बेहतर तरीके से तैयार करना होगा।

''शिक्षा बिना बोझ के'' यशपाल समिति की रिपोर्ट (1993) ने माना है कि शिक्षकों की तैयारी के अपर्याप्त अवसर से स्कूल में अध्ययन–अध्यापन की गुणवत्ता प्रभावित होती है। इन कार्यक्रमों की विषयवस्तु इस प्रकार पुर्ननिर्धारित की जानी चाहिए कि स्कूली शिक्षा की बदलती आवश्यकताओं के संदर्भ में उसकी प्रासंगिकता बनी रहे। इन कार्यक्रमों में प्रशिक्षुओं में स्व–शिक्षण और स्वतंत्र चिंतन की क्षमता के विकास पर जोर होना चाहिए।

कोठारी आयोग (64–66) से ही यह बात की जाने लगी थी कि शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए शिक्षकों को बतौर पेशेवर तैयार करना अत्यंत जरूरी है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूप रेखा–2005 ने भी शिक्षकों की बदलती भूमिका को रेखांकित किया है। आज एक शिक्षक के लिए जरूरी है कि वह बच्चों को जाने, समझे, कक्षा में उनके व्यवहार को समझे, उनके सीखने के लिए उपयुक्त माहौल तैयार करे, उनके लिए उपयुक्त सामग्री व गतिविधियों का चुनाव करे, बच्चे की जिज्ञासा को बनाए रखे, उन्हें अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करे व उनके अनुभवों का सम्मान करे।

तात्पर्य यह कि आज की जटिल परिस्थितियों में शिक्षकों की भूमिका कहीं अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण व महत्वपूर्ण हो गई है। इसी परिप्रेक्ष्य में शिक्षक–शिक्षा को और कारगर बनाने की आवश्यकता है। शिक्षक–शिक्षा में आमूल–चूल बदलाव की आवश्यकता बताते हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूप रेखा–2005 में शिक्षकों की भूमिका के संबंध में कहा गया है कि सीखने–सिखाने की परिस्थितियों में उत्साहवर्धक सहयोगी तथा सीखने को सहज बनाने वाले बनें जो अपने विद्यार्थियों को उनकी प्रतिभाओं की खोज में, उनकी शारीरिक तथा बौद्धिक क्षमताओं को पूर्णता तक जानने में, उनमें अपेक्षित सामाजिक तथा मानवीय मूल्यों व चरित्र के विकास में तथा जिम्मेदार नागरिकों की भूमिका निभाने में समर्थ बनाए।

प्रश्न यह है कि शिक्षक को तैयार कैसे किया जाए? बेहतर होगा कि विद्यालय में आने के पूर्व ही उसकी बेहतर तैयारी हो, उसे विद्यालय के अनुभव दिए जाएँ। इसके लिए शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम व विषयवस्तु को फिर से देखने की जरूरत है। इसी परिप्रेक्ष्य में डी.एल.एड. के पाठ्यक्रम में बदलाव किया गया है।

पाठ्यसामग्री का लक्ष्य शिक्षण विधि से हटकर शिक्षा की समझ, विषयों की समझ, बच्चों के सीखने के तरीके की समझ, समाज व शिक्षा का संबंध जैसे पहलुओं पर केन्द्रित है। पाठयक्रम में शिक्षण के तरीकों पर जोर देने के स्थान पर विषय की समझ को महत्व दिया गया है। साथ ही शिक्षा के दार्शनिक पहलू को समझने, पाठ्यचर्या के आधारों को पहचानने और बच्चों की पृष्ठभूमि में विविधता व उनके सीखने के तरीकों को समझने की शुरुआत की गई है।

चयनित पाठ्यसामग्री में कुछ लेखक/प्रकाशकों की पाठ्य सामग्री प्रशिक्षार्थियों के हित को ध्यान में रखकर ज्यों की त्यों ली गई है। कहीं–कहीं स्वरूप में परिवर्तन भी किया गया है, कुछ सामग्री अंग्रेजी की पुस्तकों से लेकर अनुदित की गई है। हमारा प्रयास यह है कि प्रबुद्ध लेखकों की लेखनी का लाभ हमारे भावी शिक्षकों को मिल सके। इग्नू और एन.सी.ई.आर.टी. सहित जिन भी लेखकों/प्रकाशकों की पाठ्यसामग्री किसी भी रूप में उपयोग की गई है, हम उनके हृदय से आभारी हैं। हम विद्या भवन सोसायटी उदयपुर, दिगंतर जयपुर, एकलव्य भोपाल, अजीम प्रेमजी फाउण्डेशन बैंगलुरू, आई.सी.आई.सी.आई. फाउण्डेशन पुणे, आई.आई.टी. कानपुर, छत्तीसगढ़ शिक्षा संदर्भ केन्द्र रायपुर के आभारी हैं जिनकी टीम ने एस.सी.ई.आर.टी. और डाइट के संकाय सदस्यों के साथ मिलकर पठन–सामग्री को वर्तमान स्वरूप प्रदान किया।

अंत में पाठ्यसामग्री तैयार करने में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े सहयोगियों का हम पुनः आभार व्यक्त करते हैं। पाठ्यक्रम तैयार करने व पाठ्य सामग्री के संकलन व लेखन कार्य से जुड़े लेखन समूह सदस्यों को भी हम धन्यवाद देना चाहेंगे जिनके परिश्रम से पाठ्य सामग्री को यह स्वरूप दिया जा सका। पाठ्य–सामग्री के संबंध में शिक्षक –प्रशिक्षकों, प्रशिक्षार्थियों के साथ–साथ अन्य प्रबुद्धजनों, शिक्षाविदों के भी सुझावों व आलोचनाओं की हमें अधीरता से प्रतीक्षा रहेगी जिससे भविष्य में इसे और बेहतर स्वरूप दिया जा सके।

धन्यवाद।

संचालक
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, छत्तीसगढ़,रायपुर

विषय–सूची

इकाई	अध्याय	पेज न.
इकाई–I	**बच्चों में भाषा विकास–**	**01-41**
1	भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य : कुछ प्रचलित मान्यताएँ	02-12
2	बालक की मातृभाषा एवं भाषाई क्षमता	13-20
3	भाषा शिक्षण के उद्देश्य	21-27
4	भाषा की कक्षा कैसी हो?	28-41
इकाई–II	**पुस्तकालय एवं बाल–साहित्य**	**42-85**
5	पुस्तकालय का उपयोग क्यों व कैसे	42-45
6	कक्षा में अन्य पुस्तकें	46-50
7	कहानी कथन कौशल	51-56
8	बाल साहित्य माने क्या?	57-60
9	क्या–क्या हो बच्चों की एक किताब में	61-63
10	संकलित बाल साहित्य एवं गतिविधियाँ	64-85
इकाई–III	**साहित्य की अनुभूति**	**86-149**
11	साहित्य की अनुभूति	87-149
इकाई–IV	**भाषा व विचार – व्यक्तिगत विकास में भाषा की भूमिका**	**150-178**
12	भाषा व विचार	151-157
13	भाषा और विचार का संबंध	158-162
14	भाषा व्यक्ति के लिए क्यों आवश्यक है?	163-171
15	भाषा का सीखने – सिखाने से संबंध	172-178
इकाई–V	**हिन्दी भाषा व उसका व्याकरण**	**179-192**
16	हिन्दी भाषा व उसका व्याकरण	179-192

इकाई – I

बच्चों में भाषा विकास

अध्याय : 1. भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य : कुछ प्रचलित मान्यताएँ :

अध्याय : 2. बालक की मातृभाषा एवं भाषाई क्षमता :

अध्याय : 3. भाषा शिक्षण के उद्देश्य :

अध्याय : 4. भाषा की कक्षा कैसी हो? :

अध्याय – 1

भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य : कुछ प्रचलित मान्यताएँ

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
  - भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य
    - कक्षा–1
    - कक्षा–2
  - भाषा शिक्षण के प्रति वर्तमान दृष्टिकोण
    - भाषा माने क्या?
    - भाषा सीखने–सिखाने के उद्देश्य व प्रक्रिया।
    - भाषा टुकड़ों–टुकड़ों में व चरण दर चरण सीखी जाती है।
    - भाषा व बोली।
    - भाषा नकल से सीखी जाती है।
    - भाषा सिखाने का एक मात्र साधन पाठ्यपुस्तक है?
    - बच्चों की क्षमताओं में विश्वास।

परिचय :

भाषा और भाषा शिक्षण के प्रथम वर्ष के कोर्स में हमने यह जानने का प्रयास किया था कि बच्चे जब विद्यालय आते हैं तब वे भाषा के मामले में एक वयस्क होते हैं। बच्चों में भाषा सीखने की जन्मजात क्षमता होती है। वे न केवल दो या तीन भाषाओं को समझ एवं बोल लेते हैं वरन् उनका सही–सही उपयोग भी कर लेते हैं। जब बच्चे के पास इतनी भाषायी क्षमताएँ हैं तो फिर स्कूल/कक्षा में भाषा सीखना–सिखाना कैसा हो? बहुत लम्बे समय से भाषा शिक्षण के उद्देश्य को महज सुनने–बोलने–पढ़ने–लिखने संबंधित कौशलों तक सीमित देखा जाता रहा है। लम्बे समय तक पाठ्यपुस्तकें, कक्षा–शिक्षण, शिक्षक–प्रशिक्षण व मूल्यांकन की कवायदें भी इन्हीं मुद्दों पर केन्द्रित रही हैं। इन क्षमताओं व कुशलताओं पर अतिरिक्त फोकस के परिणाम स्वरूप भाषा शिक्षण की कक्षाएँ भी नीरस और ऊबाऊ नजर आती हैं और पाँच वर्षों की प्राथमिक शिक्षा पूरी कर लेने के बाद भी कई बच्चों की मौखिक अभिव्यक्ति कुंद पड़ जाती है और वे पढ़ना–लिखना भी नहीं सीख पा रहे हैं। स्कूली शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य बच्चे को इस प्रकार से साक्षर बनाना होना चाहिए कि बच्चा समझने के साथ पढ़ने व लिखने की क्षमता हासिल कर सके। धीरे–धीरे वह पढ़ने–लिखने में आत्मनिर्भर बने व स्वयं ही ज्ञान के विभिन्न स्रोतों तक पहुँचने, उनको पढ़कर समझने, विश्लेषण करने की काबिलियत प्राप्त कर सके। सवाल यह उठता है कि इस लक्ष्य तक पहुँचने में बच्चों की मदद कैसे की जाए? कैसे उनको पढ़ने–लिखने में आत्मनिर्भर बनाया जाय? इस अध्याय में हम इन्हीं कुछ मुद्दों तथा भाषा सीखने–सिखाने के उद्वेश्यों के बारे में बात करेंगे। यहाँ यह भी समझने का प्रयास है कि कैसे हमारी भाषा की समझ, बच्चों के प्रति नजरिया, उनके सीखने के प्रति नजरिया भाषा शिक्षण को प्रभावित करता है।

उद्देश्य :

- भाषा शिक्षण के प्रति शिक्षकों के नजरिये को समझ पाएँगें।
- भाषा माने क्या को व्यापकता में समझ पाएँगे।
- भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को समझ पाएँगे।

- भाषा–शिक्षण टुकड़ों–टुकड़ों में ना सिखाकर समग्रता में सिखाएँ के बारे में समझ बना पाएँगे।
- भाषा शिक्षण में पाठ्यपुस्तक के साथ–साथ अन्य पठन सामग्रियों के महत्व को समझ पाएँगे।

भाषा शिक्षण का वर्तमान परिदृश्य

आपने प्राथमिक कक्षाओं में वर्णों की पहचान और वर्णों को लिखना सिखाने पर केन्द्रित भाषा–शिक्षण की कवायद ज्यादातर विद्यालयों में घटते हुए देखी होगी। बहुत ही कम विद्यालयों मे देखने को मिलता है जहाँ पर किया जाने वाला शैक्षणिक कार्य सही मायनों में बच्चों की भाषाई क्षमताओं के विकास में सहायक हो। भाषा–शिक्षण की शुरुआत में सिर्फ वर्णों की पहचान और वर्णों को लिखना सिखाने पर केन्द्रित अभ्यास कार्य ज्यादातर विद्यालयों में करवाए जाते हैं। भाषायी विकास के लिए बच्चों को ऐसे पर्याप्त मौके उपलब्ध नहीं हो पाते हैं जो उन्हें अपनी भाषा में सोचने, विचारने, कल्पना करने और विश्लेषण को बढ़ावा देते हों। भाषा शिक्षण के वर्तमान परिदृश्य को समझने के लिए भाषा की दो कक्षाओं के दिये गये अवलोकनों को पढ़ते हैं व उन पर चर्चा करते हैं।

कक्षा 1

विद्यालय की साफ–सफाई व शिक्षण सभा के बाद कक्षा–2 में कुछ देर बाद भाषा शिक्षण का कालांश प्रारंभ होने वाला है। यह स्कूल एक आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र में स्थित है। कक्षा कक्ष में बच्चे इधर उधर घूम रहे हैं। शिक्षक बच्चों को अपनी–अपनी जगह पर बैठने को कहते हैं पर कुछ बच्चे अभी भी इधर उधर घूम रहे हैं। कुछ बच्चे पानी पेशाब हेतु बाहर गये हुए हैं। तब तक शिक्षक भाषा पर काम हेतु सामग्री जुटा लेते हैं। भाषा के कालांश का समय प्रारंभ होने पर कक्ष में लगभग सभी बच्चों के होने पर शिक्षक उन्हें गोल घेरे में बैठ जाने को कहते हैं। शिक्षक स्वयं भी बच्चों के घेरे में बैठ जाते हैं। फिर–

शिक्षक – पहले अपन आज की कोई खास बात लिखेंगे। तो आज की बात कौन बताएगा?

बच्चों ने बताना शुरु किया। – देहर गुरूजी बारह बजे पढ़े बर आइस।

दुहु ह तो एक बजे आइस हे।

''ये हर तो तास खेलत रिहिस से (समूह में उपस्थित बालिका की तरफ इशारा करते हुए), लड़की रोने लगी''

''महेश ला रात कुन बुखार धर ले रिहिस हे''

बच्चों ने उत्साह से ये बातें बताई। शिक्षक ने भी स्वयं की बात बताई–''मोर गांव देवरी में तिहार के दिन एक के इहां, उंकर घर के उपर बने पटहउवा ले लइका गिर गे तभो ले उहे के अस्पताल म औला भरती करे बर परगे। धन तो जादा नइ लागिस '' बच्चे इस बात पर आश्चर्य चकित होते हुए पूछने लगे कि बच्चे को कहाँ चोट लगी है। इस पर शिक्षक ने बताया कि मैंने उसे देखा नहीं बस लोगों से सुना है।

अब शिक्षक ने बच्चों को कहा कि वे अपनी–अपनी बात को दीवार पर बनी काली पट्टी या बोर्ड पर लिख दें। शिक्षक ने बच्चों को चॉक दिये और सभी बच्चे अपनी–अपनी बात लिखने लगे। कुछ शब्द या वाक्य बच्चों द्वारा लिखे गये जो कि निम्नलिखित हैं –

बाबा लाला लधिसीब चानुर चामर टाकर पटई बासवला पत पाता कयो सपेस तोता सीता ''एक मड़ा बर बाजे आअ कपटोर पढ़खी

अब शिक्षक ने बच्चों से पूछा ''क्या सभी बोर्ड पर अपनी बात लिख चुके हैं?'' बच्चों ने कहा– हाँ। आज हम नया चित्र लाए हैं। शिक्षक ने बादल का चित्र दिखाते हुए बच्चों से कहा। (चित्र के नीचे बादल लिखा हुआ है।)

शिक्षक – हाँ क्या लिखा हुआ है।

बच्चे एक साथ – बादल......

शिक्षक ने बादल का चित्र दिखाते हुए बच्चों से कुछ बातें की जैसे बादल कैसे लगते हैं? कब दिखते हैं? आदि। इसके बाद शिक्षक ने बच्चों से कहा–अच्छा इसे दीवार पर लगा दें। (दीवार पर पहले से हाथी चींटी आदि चार्ट लगे हुए हैं) शिक्षक पन्ने को लगाने के लिए खड़ा होता है तो सभी बच्चे आकर उसे घेर लेते हैं। शिक्षक बच्चों से पूछते हैं? कि कहाँ लगाएँ तो बच्चे अपनी–अपनी पंसद से दीवार की जगह को चिन्हित करने लगते हैं। आखिरकार शिक्षक बच्चों की पसंद के आधार पर पन्ने को टेप की सहायता से दीवार पर चिपका देते हैं। अब शिक्षक ने सभी बच्चों को पुनः गोल घेरे में बैठाया और आगे की योजना पर बात की। योजना अनुसार शिक्षक बच्चों को समूहवार नाम लेकर बारी–बारी से बुलाते हैं और दिया हुआ काम समझाते हैं। बच्चे अपनी मन चाही जगह पर बैठकर अपना–अपना काम करने में व्यस्त हो जाते हैं।

कुछ प्रश्न :

- आज की कोई खास बात बच्चों से पूछने और चर्चा करने, बोर्ड पर लिखवाने के पीछे शिक्षक की क्या सोच रही होगी?
- आपके अनुसार शिक्षक जिस तरह भाषा शिक्षण पर काम कर रहे हैं उससे बच्चों को भाषा सीखने में कितनी मदद मिल पाएगी?
- क्या आप मानते हैं कि बच्चों के उप समूह बनाने व उप समूहों में बैठ कर चर्चा करने के दौरान शिक्षक की कक्षा में शोरगुल हो रहा होगा? इससे बच्चों का सीखना किस प्रकार से प्रभावित होगा?
- कक्षा में चल रही शिक्षण प्रक्रिया से आप कितने सहमत हैं? अपने सहमत/असहमत होने के आधार प्रस्तुत करें।

कक्षा–2

यह विद्यालय ब्लाक मुख्यालय से लगभग 10 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। विद्यालय नियत समय पर खुला और प्रार्थना के बाद उपस्थिति लेने के उपरान्त शिक्षण कार्य प्रारंभ किया गया। शिक्षक ने कक्षा एक के बच्चों से वर्णमाला वाला पाठ निकाल कर वर्णमाला लिखने के लिए कहा। कुछ बच्चों ने पाठ्यपुस्तक का अंतिम पाठ निकाला और कुछ ने पट्टी पहाड़ा और वर्णमाला लिखना आरंभ कर दिया। बच्चे पंक्तियों में बैठे हुए लिख रहे हैं और शिक्षक ब्लैकबोर्ड के नजदीक कुर्सी लगाकर बैठे हुए हैं। लगभग आधा घंटे बाद कुछ बच्चे ककहरा लिख–लिख कर शिक्षक को दिखाने के लिए जाने लगे। शिक्षक ने बच्चों की कापियाँ ध्यान पूर्वक देखीं और कापियों में कुछ जगहों पर गोले लगाये ओर कुछ जगहों पर सही के निशान। शिक्षक ने जहाँ जहाँ पर घेरे बनाये थे बच्चे उन आकृतियों को पुनः सुधार करके लिख रहे थे।

भोजन अवकाश के बाद शिक्षक बोर्ड पर फिर वर्णमाला लिख देते हैं। और कक्षा के एक छात्र को बोर्ड पर लिखी वर्णमाला को पढ़ने के लिए कहते हैं। छात्र वर्णमाला पर डंडा रखते हुए बोलता है– क कमल का, अन्य बच्चे दोहराते हैं–क कमल का........ख खरगोश का........... ग गणेश का.........। लगभग यह प्रक्रिया एक घंटे तक चली। इसके बाद शिक्षक ने बच्चों को वर्णमाला लिखकर लाने का गृहकार्य दिया।

कुछ प्रश्न :

- आपके अनुसार यह शिक्षक जिस तरह भाषा शिक्षण पर काम कर रहे हैं उससे बच्चों को भाषा सीखने में कितनी मदद मिल पाएगी?
- कक्षा – 2 में चल रही शिक्षण प्रक्रिया से आप कितने सहमत हैं? अपने सहमत/असहमत होने के आधार प्रस्तुत करें।

भाषा शिक्षण के प्रति वर्तमान दृष्टिकोण

आपने देखा कि उपर्युक्त दोनों ही कक्षाओं में भाषा शिक्षण के दौरान भाषा और भाषा शिक्षण के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कई मौक़ों पर शिक्षक चर्चा के दौरान बताते हैं कि कक्षा 5 के बच्चे भी कहानी सुनाना, कविता सुनाना, अपनी बात को बोलकर या लिखकर अभिव्यक्त करना, समझकर पढ़ना इत्यादि काम नहीं कर पाते। ये सब बातें हमें सोचने को बाध्य करती हैं कि भाषा की कक्षा में ऐसा क्या होता है कि हमारे अथक प्रयासों के बावजूद, बच्चों की विभिन्न भाषायी क्षमताएँ विकसित नहीं हो पातीं। सवाल यह है कि हम इसका कारण बच्चों की सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि को मानें अथवा भाषा सीखने–सिखाने के तौर–तरीक़ों व उसमें निहित हमारे नज़रिये को?

पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न मौकों यथा कक्षा अवलोकन व प्रशिक्षणों के दौरान हुए अनुभवों में भाषा शिक्षण के प्रति वर्तमान नज़रिये के कई आयाम उभरकर आये। उनमें से कुछ की चर्चा हमने यहाँ इस लेख में करने की कोशिश की है।

1. भाषा माने क्या?

प्रायः हम ''भाषा माने क्या'' का अर्थ बहुत ही सीमित अर्थों में लेते हैं। यह पूछे जाने पर कि भाषा से आप क्या समझते हैं जवाब होता है; भाषा यानी विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम अर्थात् 'संप्रेषण का साधन।' इस बात पर कभी ग़ौर नहीं किया जाता कि जिन विचारों को संप्रेषित करना है वे कहाँ से व कैसे आते हैं? दूसरे शब्दों में क्या भाषा के बग़ैर हम सोच सकते हैं? कल्पना कर सकते हैं? चीज़ों को अलग–अलग पहचान सकते हैं, उनका वर्गीकरण कर सकते हैं? विश्लेषण कर सकते हैं? हम भाषा का उपयोग कहाँ–कहाँ करते हैं? कैसे करते हैं? हमारा व भाषा का रिश्ता क्या है? यदि इन पहलुओं के बारे में गहराई से सोचा जाए तो यह सूची और लंबी होती जाएगी।

इसका अर्थ यह है कि हममें से अधिकांश लोग जो मानते हैं कि भाषा यानी ''संप्रेषण का माध्यम'', कुछ हद तक ही ठीक है। संप्रेषण के अर्थ के हिसाब से देखें तो भी कम–से–कम बच्चों को कक्षा में अपनी बात कहने, दूसरों की बात सुनने, प्रश्न उठाने, तर्क करने इत्यादि की स्वतंत्रता होनी चाहिए, पर कक्षाओं में तो यह नहीं होता। कक्षा में जो होता है वह है; अध्यापक जो कहे उसको बिना विचारे सुनना, पाठ्यपुस्तक के अध्यायों के पीछे दिये

गये अभ्यास के प्रश्नों के 'सही' उत्तर याद करके उनको हुबहू परीक्षा में वैसा ही लिखना। इसके लिए तो पाठ्यपुस्तक की आवश्यकता ही नहीं होती। उत्तर याद करने के लिए बच्चे कुंजियों का सहारा लेते हैं और इसी वजह से कुंजियों का बाज़ार चलता है। यह थी संप्रेषण की बात जो कि वास्तव में होती ही नहीं। तो बाकी अन्य पहलुओं का क्या हो यह हमें सोचना होगा?

कुछ प्रश्न :

- क्या भाषा सम्प्रेषण का साधन है? आप इस बात से सहमत हैं या असहमत? अपने उत्तर का कारण भी दें।

2. भाषा सीखने–सिखाने के उद्देश्य व प्रक्रिया

किसी भी विषय को सीखने–सिखाने के उद्देश्य सीधे इस बात से जुड़ते हैं कि हमारी उस विषय की समझ क्या है? विषय की समझ न केवल यह निश्चित करने में मदद करती है कि हमें पढ़ाना क्या है? वरन् यह भी निर्णय लेने में मदद करती है कि पढ़ाना कैसे है? 'भाषा क्या है ?' इस प्रश्न की समझ सीमित है, यही समझ भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को निर्धारित करने में भी परिलक्षित होती है।

आमतौर पर भाषा सीखने–सिखाने के उद्देश्य माने जाते हैं–

- ध्वनि रूपों के शुद्ध उच्चारण को समझना।
- शब्दों के शुद्ध उच्चारण को समझना।
- ध्वनि रूपों का उच्चारण करना।
- शब्दों का शुद्ध उच्चारण करना।
- वर्ण पढ़ने की क्षमता विकसित करना।
- शब्द पढ़ने की क्षमता विकसित करना।
- वर्णों और शब्दों को उचित आकार, उचित क्रम में लिखने की क्षमता विकसित करना। (सुन्दर लिखावट)
- विराम चिह्नों का प्रयोग करते हुए लिखने की क्षमता विकसित करना।
- वाक्य पढ़ने की क्षमता विकसित करना।
- व्याकरण का सटीक उपयोग। इनके साथ–साथ नैतिक मूल्यों का विकास करना भी भाषा शिक्षण का एक मुख्य उद्देश्य माना जाता है।

पाठ्यपुस्तक निर्माण और भाषा सीखने–सिखाने के तौर–तरीके भी इन्हीं उद्देश्यों पर आधारित होते हैं। फलस्वरूप भाषा की कक्षा सिर्फ वर्ण, शब्द, वाक्य बोलना, पढ़ना, लिखना सिखाने पर केन्द्रित होकर रह जाती है। न तो उसमें कविताओं व कहानियों के लिए कोई स्थान होता है न बच्चों को बातचीत करने के मौक़े होते हैं और न ही अपनी बात को अभिव्यक्त करने के। चाहे वह मन से लिखना हो अथवा कहना।

3. भाषा टुकड़ों–टुकड़ों में व चरण दर चरण सीखी जाती है।

भाषा को समग्र रूप में देखने की बजाय टुकड़ों–टुकड़ों में देखा जाता है। अतः यह माना जाता है कि भाषा टुकड़ों–टुकड़ों को जोड़कर सीखी जाती है। चाहे ये टुकड़े फिर सुनने, बोलने, पढ़ने, लिखने के हों अथवा अक्षर, मात्रा, शब्द व वाक्य हों। यदि हम फिर से उद्देश्यों पर जाएँ और उनका गहराई से विश्लेषण करें तो उनमें भी यह विभाजन साफ़–साफ़ दिखाई देता है जैसे

- पहले बच्चों को ध्वनियों का उच्चारण समझना सिखाना है।
- फिर साफ व स्पष्ट बोलना।
- उसके बाद अक्षर व वर्ण पढ़ना और उसके बाद लिखना।

और इसी के चलते यह समझा जाता है कि भाषा सिखाने का तात्पर्य है; सुनने, बोलने, पढ़ने व लिखने के कौशल का विकास। यह दृढ़ विश्वास होता है कि बच्चा बगैर सुने नए शब्द व वाक्य बोल ही नहीं सकता। यानी पहले सुनने की प्रक्रिया होगी फिर बोलने की। वास्तव में दोनों प्रक्रियाएँ साथ–साथ चलती हैं।

पढ़ने व लिखने की प्रक्रिया भी कुछ इसी तरह ही होती है। पढ़ने का मतलब होता है अक्षरों को पहचानना और ध्वनियों का उच्चारण कर पाना। इसलिए बच्चे पढ़ने के नाम पर वर्णमाला को रटते रहते हैं, कविताओं व कहानियों को शब्दशः दोहराते रहते हैं। लिखना भी एक स्वतंत्र कौशल की तरह मशीनी ढंग से सिखाया जाता है। बच्चों को अक्षरों की नकल करने के लिए कहा जाता है। शब्दों की नकल करवाई जाती है। हम यदि यह सोचें कि हमें किसी एक ही काम को बार–बार करने को दिया जाए तो हमें कैसा महसूस होगा? लेकिन शुरुआती एक साल में भाषा शिक्षण के नाम पर बच्चे यही कवायद करते रहते हैं।

इन चारों कौशलों को अलग–अलग देखने की वजह से ही शिक्षण प्रक्रिया बोझिल, ऊबाऊ व बार–बार रटने वाली हो जाती है। यदि पढ़ना व लिखना बच्चों के अनुभवों व बातचीत से शुरू होगा तो वह बच्चों के लिए अर्थपूर्ण होगा।

भाषा को टुकड़ों–टुकड़ों में पढ़ाने का एक उदाहरण देखिए–

शिक्षक कक्षा में आए व बच्चों को डाँटकर चुप कराया। शिक्षक ने बोर्ड पर वर्णमाला के कुछ अक्षर यह बताने के लिए लिखे कि अक्षर से शब्द का निर्माण कैसे होता है और शब्द से वाक्य कैसे बनते हैं।

घ, र, च, ल, घर, चल – घर चल

अ, म, न, घर, चल – अमन घर चल

चरण घर, चल – चरण घर चल

उसके बाद शिक्षक ने बोर्ड पर लिखी वर्णमाला के अक्षर व अक्षर से बने शब्द और शब्द से बने वाक्यों को बच्चों द्वारा पढ़वाया। वह प्रत्येक बच्चे को बोर्ड पर बुलाते और बोर्ड पर लिखे हुए को पढ़वाते और साथ में अन्य बच्चों से उन शब्दों को दोहरवाते। इस प्रकार कालांश चलता रहता है।

पूरी प्रक्रिया अक्षरों व शब्दों की पहचान पर ही केन्द्रित रहती है और इनकी पहचान पर इतना ज़ोर होने से वाक्य का अर्थ ही गुम हो जाता है।

केवल इतना ही नहीं, विचार का यह बिन्दु विषयवस्तु से भी महत्त्वपूर्ण रूप से जुड़ा है, चुनी गयी विषयवस्तु को पढ़ना इस तरह से हो कि वह कदम–दर–कदम आगे बढ़े। अंततः विषयवस्तु वर्णमाला, शब्द (पहले कमल फिर कमला) या वाक्य (घर चल, नल पर चल, झटपट कर) और इसी तरह के वाक्य तक सीमित रहती है। बच्चों को ऐसे शीर्षक को पढ़ने के लिए बाध्य किया जाता है जिससे न तो वे अपने अनुभवों को जोड़ पाते हैं, न ही कोई अर्थ निकाल पाते हैं और न ही वे बातचीत करते समय ऐसे वाक्यों का उपयोग कर पाते हैं।

कुछ प्रश्न :

1. बच्चा बगैर सुने नये शब्द व वाक्य बोल ही नहीं सकता। इस बात से आप सहमत हैं या असहमत? कारण भी दीजिए।
2. पढ़ने का अर्थ केवल अक्षरों को पहचानना व ध्वनियों का उच्चारण करना मात्र है या इससे पृथक है? अपने कारण भी दीजिए।

4. भाषा व बोली

एक और महत्त्वपूर्ण मसला है भाषा व बोली का। जिस भी मंच पर भाषा शिक्षण की बात होती है यह मसला जरूर उठता है। बच्चों द्वारा बोली जाने वाली भाषा को दूसरे दर्जे की समझा जाता है। यह माना जाता है कि भाषा तो वह होती है जिसका अपना साहित्य व व्याकरण होता है, उसकी लिपि होती है, वह मानकीकृत व शुद्ध होती है। बच्चे जो भाषा अपने घर से लेकर आते हैं वह भाषा नहीं है क्योंकि वह तो एक क्षेत्र विशेष के लोगों द्वारा बोली जाती है, उसका न तो साहित्य है, न व्याकरण और न लिपि।

अतः स्कूल के पहले दिन से ही बच्चों को मानकीकृत और शुद्ध भाषा सिखाने का प्रयास किया जाता है और यदि बच्चे अपनी घरेलू भाषा का प्रयोग विद्यालय में करते हैं तो उन्हें डाँट दिया जाता है। बच्चे यह समझ नहीं पाते कि उन्हें डाँटा क्यों जा रहा है? घर में, आस–पास परिवेश में हर कहीं वही भाषा बोली जाती है पर स्कूल में अध्यापक के सामने जब वे बोलते हैं तो ग़लत वह क्यों हो जाती है। बात यहीं समाप्त नहीं होती, जैसा कि हमने पहले भी बात की कि भाषा व्यक्ति की संस्कृति व पहचान होती है। बच्चे को अपनी घरेलू भाषा का उपयोग न करने देना उसकी पहचान व संस्कृति पर सीधा प्रहार होता है। बार–बार डाँट खाने के कारण जो बच्चे इतनी बातचीत करते हैं, धीरे–धीरे बात करना ही बन्द कर देते हैं।

यदि भाषा विज्ञान की दृष्टि से देखा जाए तो भी भाषा व बोली में कोई फ़र्क़ नहीं होता। भाषा का भी व्याकरण होता है और बोली का भी। यह बात ज़रूर है कि बोली का व्याकरण लिखित रूप में उपलब्ध नहीं होता पर इसका तात्पर्य यह नहीं कि व्याकरण होता ही नहीं। यही बात साहित्य पर भी लागू होती है। हो सकता है कि कई ''बोलियों (भाषाओं)'' में लिखित साहित्य न हो लेकिन मौखिक साहित्य ज़रूर होता है। भोजपुरी, अवधी, मैथिली–जिन्हें हम बोलियाँ कहते हैं उनमें तो बहुत साहित्य उपलब्ध है। इसी तरह यह कहा जाता है कि भाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है और बोली एक सीमित क्षेत्र में बोली जाती है। यह आप सोचिये कि हिन्दी भाषी लोग ज़्यादा हैं अथवा भोजपुरी और जो भी लोग हिन्दी बोलते हैं वे कितनी शुद्ध हिन्दी बोलते हैं, और रही लिपि वाली बात तो दुनिया की किसी भी भाषा को किसी भी लिपि में लिख सकते हैं उदाहरण के लिए–

Ram Ghar Jata hai (रोमन लिपि)

राम घर जाता है (देवनागरी लिपि)

हिन्दी भाषा को आप रोमन लिपि में लिख सकते हैं। आजकल तो मोबाइल, कम्प्यूटर सभी पर हम यही करते हैं। इस तरह अंग्रेज़ी भाषा को आप देवनागरी में लिख सकते हैं।

राम इज़ गोइंग (देवनागरी लिपि)

Ram is going (रोमन लिपि)

इसी तरह यह भी धारणा है कि एक भाषा दूसरी भाषा सीखने में बाधक होती है। उदाहरणार्थ यदि बच्चा छत्तीसगढ़ी (क्षेत्रीय भाषा) जानता है तो उसका नकारात्मक प्रभाव उसके हिन्दी (मानकीकृत भाषा) सीखने पर पड़ेगा। यह वास्तव में सत्य नहीं है। 'भाषा शिक्षा' के द्वारा हम बच्चे की जिन क्षमताओं को विकसित करना चाहते हैं यथा सोचने–विचारने, अपनी बात कहने, तर्क करने, विश्लेषण करने वो तो उसकी अपनी भाषा में आसानी से विकसित हो सकती हैं और फिर यह कौशल दूसरी भाषा में स्थानान्तरित किया जा सकता है। रही उच्चारण व मानकीकृत भाषा की बात तो उपयुक्त संदर्भ व वातावरण मिलने पर बच्चे स्वयं ही धीरे–धीरे यह सब सीख जाते हैं।

कुछ प्रश्न :

- एक भाषा दूसरी भाषा सीखने में बाधक होती है। इस बात से आप सहमत हैं या असहमत? कारण दीजिए।
- भाषा का भी व्याकरण होता है और बोली का भी व्याकरण होता है। इसे उदाहरण देकर समझाइये।
- दुनिया की किसी भी भाषा को किसी भी लिपि में लिख सकते हैं। उदाहरण देकर समझाइये।

5. भाषा नकल से सीखी जाती है

एक और मान्यता है कि बच्चे भाषा तब सीखते हैं जब उन्हें वह भाषा सिखाई जाती है। यानी उनके सामने ध्वनियों, शब्दों का उच्चारण बार–बार किया जाता है तथा वे नकल करके यह सब सीख जाते हैं। यह मान्यता इतनी दृढ़ है कि कक्षा में भी बच्चों को इसी तरह भाषा सिखाई जाती है। ऐसी एक कक्षा का एक उदाहरण देखिए–

कक्षा–1 में बच्चे बैठे हुए हैं। प्रथम कालांश लगता है, शिक्षिका कक्षा में आती है व कुर्सी पर बैठ जाती है। थोड़ी देर बाद बच्चों से कहती है चलो, अपनी–अपनी स्लेट या कॉपी लेकर मेरे पास आओ, हम हिन्दी पढ़ेंगे।

बच्चे एक–एक करके अपनी स्लेट या कॉपी लेकर उसके पास जाते हैं। वह बच्चे की स्लेट पर 3–4 कॉलम बनाती है व एक कोने में 'अ' लिखकर बच्चे से कहती है ऐसे ही और बनाओ। एक अन्य बच्चे की स्लेट पर वह 'आ' लिखती है और उसे भी यही निर्देश देती है कि ऐसे ही और बनाओ। इसी तरह वह कक्षा के सभी बच्चों को एक–एक वर्ण लिखने को देती है। जब बच्चे दिए गए वर्ण को लिख लेते हैं तो वह दूसरा वर्ण लिखने को दे देती है। इसी तरह कक्षा में कार्य चलता रहता है।

कुछ प्रश्न :

- आपके अनुसार शिक्षिका का वर्ण सिखाने का तरीका कैसा था? यदि आप इस शिक्षिका की जगह होते तो कक्षा में क्या करते?

इस पूरे प्रकरण में एक बार कुछ ऐसा हुआ जो कुछ हटकर था। वह था बार–बार शिक्षिका द्वारा वर्ण लिखकर लाने को कहने पर एक बच्चे ने उनसे कहा मुझे नहीं लिखना है। कुछ और कराइए। लेकिन शिक्षिका के पास कुछ और कराने को नहीं था। अतः उसने एक नया वर्ण फिर से बच्चे को लिखने के लिए दे दिया।

अब इस बात पर गौर करें कि भाषा सीखने की प्रक्रिया के दौरान बच्चे तुतलाते हैं। क्या हम उन्हें तुतलाना सिखाते हैं? वयस्क तो तुतलाकर बोलते नहीं ताकि बच्चों को उनकी नक़ल करने का मौक़ा मिले व बच्चे वैसा

बोलना सीखें। बच्चे नित नए शब्द व वाक्य बनाते हैं क्या हम प्रत्येक वाक्य उनके सामने बोलते हैं? ताकि वे उसकी नक़ल कर सकें और सीख सकें। क्या हम कभी बच्चे को बोलते हैं। ''पापा मुझे मोटरसाइकिल पर घूमने जाना है।''

पापा चॉकलेट खानी है।

बच्ची व वयस्क की बातचीत का एक उदाहरण देखिए।

मेरे दोस्त की बच्ची (3 साल) व उसकी बुआ बातचीत कर रहे थे

बुआ : बोलो मैं अच्छी हूँ

बच्ची : मैं अच्छी हूँ

बुआ : मैं लड़की हूँ

बच्ची : मैं लड़की हूँ

बुआ : मैं गन्दी हूँ

बच्ची : आप गन्दे हो।

अब आप ही सोचिए इस बच्ची को कैसे पता चला कि उसे अपने–आप को गन्दा नहीं कहने के लिए वाक्य में कहाँ व क्या–क्या परिवर्तन करने होंगे? वह यह कहना कैसे सीखी होगी नक़ल से अथवा आपके बताने से अथवा ...? क्या यहाँ कुछ ऐसा हो रहा है जिसको अनुकरण की मदद से समझना कठिन है।

कुछ प्रश्न :

- बच्ची व वयस्क की बातचीत का एक उदाहरण आपने पढ़ा है। क्या आपको लगता है कि यह सब सीखने में बच्ची ने बड़ों की नकल की है। कारण देकर स्पष्ट कीजिए।

6. भाषा सिखाने का एक मात्र साधन पाठ्यपुस्तक है?

शिक्षकों की एक और मान्यता यह नजर आती है कि बच्चों को सिर्फ़ पाठ्यपुस्तक में दी गई विभिन्न रचनाओं को पढ़ना है और वह भी दिए गए क्रम में यानी पहले अध्याय एक फिर दो, तीन.... बच्चे अपनी इच्छा से चुनकर पाठ भी नहीं पढ़ सकते। पाठ पढ़ने के बाद होता है उसके पीछे दिए गए प्रश्नों के उत्तरों को याद करना।

बच्चों के इर्द–गिर्द अनेक भाषाई संदर्भ उपलब्ध हैं। उदाहरण के तौर पर पत्रिकाओं, अख़बारों, विज्ञापनों में लिखे गये विभिन्न निर्देश, सड़कों पर लिखे गये विभिन्न निर्देश इत्यादि कई जगहों पर भाषा का प्रयोग होता है लेकिन इन पर किसी का ध्यान नहीं जाता।

इसके बाद आती है साहित्य की बात। भाषा के 'वृहद् साहित्य' विशेषकर बच्चों की उम्र के अनुकूल साहित्य से उनका कोई परिचय नहीं होता। कक्षा–कक्ष अवलोकन के दौरान हुए एक अनुभव को यहाँ बाँटना चाहेंगे। हमने बच्चों से पूछा, कहानी सुनोगे या कविता? उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। अतः उन्हें एक कहानी सुना दी। दूसरे दिन फिर उसी कक्षा में जाने पर बच्चों ने हमें कविता सुनाने को कहा। जैसे ही मैंने कविता खत्म की उन्होंने कहानी की माँग रख दी। यह उदाहरण बताता है कि बच्चे कहानी, कविता सुनने की इच्छा रखते हैं। चूंकि कक्षा–कक्ष में संबंधित साहित्य का उपयोग नहीं होता इसलिए धीरे–धीरे उनकी रुचि इसमें खत्म हो

जाती है। विभिन्न कविताओं, गद्यों, कहानियों में कही गयी मुख्य बातों को याद करने का अभ्यास ऊबाऊ लगने लगता है विशेषतया तब, जब पहले ही उन्हें ये मुख्य बातें बतायी जा चुकी हों। स्वयं को समझने व स्वयं के दृष्टिकोण को संवर्धित करने का साहित्य का उद्देश्य इसमें कहीं छूट जाता है।

बार–बार यह बातचीत होती है कि भाषा शिक्षण का उद्देश्य पाठ्यपुस्तक के पाठों व उनमें दिए गए अभ्यासों को कर लेना मात्र नहीं है वरन् उसका उद्देश्य है कि बच्चे उनके स्तर के अनुरूप उपलब्ध सभी तरह की सामग्री पढ़ पाएँ; चाहे वे कविता या कहानी की किताबें हों या अख़बार अथवा सड़कों पर लिखे गये निर्देश। वे किसी बातचीत का हिस्सा बन पाएँ व संवाद कर पाएँ। अपने मन से किसी विषय पर लिख पाएँ। पाठ्यपुस्तक से कुछ मदद ज़रूर मिलती है लेकिन उसकी भी अपनी सीमाएँ होती हैं। अतः यह सोचना होगा कि बच्चों में भाषा के प्रयोग की क्षमताएँ बढ़ाने के लिए उन्हें पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त और क्या–क्या करने की आवश्यकता है।

कुछ प्रश्न :

- भाषा सिखाने का एक मात्र साधन पाठ्यपुस्तक है। आप इस बात से सहमत/असहमत हैं? क्यों?

7. बच्चों की क्षमताओं में विश्वास

यह भी धारणा है कि बच्चों का सीखना स्कूल में ही प्रारंभ होता है। स्कूल में आने से पहले बच्चों को कुछ नहीं आता। एक प्रशिक्षण के दौरान कुछ शिक्षकों से हुई बातचीत में उनका कहना था कि शहरी बच्चे तो फिर भी कुछ पढ़ना लिखना जानते हैं लेकिन गाँव के बच्चे, ग़रीब बच्चे जिनके माता–पिता अनपढ़ हैं वे तो कुछ भी नहीं जानते। उन्हें तो सब कुछ स्कूल में आकर ही सीखना होता है।

प्रत्येक बच्चा अपने परिवार और आस–पास बोली जाने वाली अपनी भाषा के नियमों को, ध्वनि, शब्दों व वाक्यों को बातचीत के स्तर पर जानता है। बच्चा न केवल वर्णमाला, शब्द या वाक्य ही बोलना जानता है बल्कि प्रश्न पूछते वक्त वाक्य की संरचना में कहाँ बदलाव की जरूरत है यह भी जानता है। अपने पिता को संबोधित करते समय और घर पर आये अतिथि से बातचीत करते समय बोलने के तौर–तरीकों में वह अंतर कर पाने में सक्षम होता है। यहाँ तक कि बच्चे एक व्यक्ति से काम लेने के समय कैसे बोलना है, यह भी जानता है। कौन उन्हें यह तौर–तरीके सिखाता है?

ऊपर वर्णित क्षमताओं को नजरअंदाज करते हुए बच्चों को वर्णमाला और शब्द सिखाये जाते हैं। बातचीत के सारे नियमों को जानकर बच्चा स्कूल आता है और एक साथ बोलने को नजरअंदाज करता है।

असल में भाषा शिक्षण की कक्षाओं का उद्देश्य है कि बच्चे अपनी बात को कह सकें, दूसरे की बातों को सुनकर या पढ़कर अपनी टिप्पणी दे सकें, कहानियों और कविताओं को पढ़कर उसका रस ले सकें। उन कहानियों और कविताओं में अपनी छवि देख सकें या उन्हें अपने आपसे जोड़ सकें। भाषा सिखाने के केन्द्र लिपि, वर्तनी, सुन्दर लिखाई व व्याकरण बन जाते हैं। लेकिन कक्षा में भाषा से खेलने, उसमें डूबने, उसे महसूस करने और आत्मसात करने का अवसर ही नहीं रहता है। असल में बात यह है कि यह सब कुछ करने के लिए धैर्य की ज़रूरत है पर स्कूलों में इतना धैर्य कहाँ, वे तो जल्द से जल्द सिखाने में लगे रहते हैं। बच्चों की बातचीत कक्षा–कक्ष या अध्ययन–अध्यापन के लिए एक संसाधन बन सकती है। लेकिन कक्षा–कक्ष में बच्चों को बातचीत करने से रोका जाता है। इसके अलावा शिक्षक का पूरा ध्यान कक्षा में बच्चों को शांत करने और उच्चारण ठीक करने में रहता है। यह अहसास करने की आवश्यकता है कि अगर बच्चों को छोटी–छोटी टोलियों में बाँटकर उन्हें किसी विषय–वस्तु पर बातचीत का अवसर दिया जाए तो उससे काफ़ी कुछ समस्या का समाधान ऐसे ही हो जाएगा।

हमें लगता है कि भाषा की कक्षा में भाषा सिखाते समय दो–तीन बातों को अमल में लाएँ तो ज़्यादा अच्छा होगा। पहली बात पढ़ने–लिखने की जो सामग्री हो वह सार्थक हो और बच्चे के स्तर की हो। दूसरी बात यह है कि जो सामग्री दी जाए वो परिचित भाषा में हो। तीसरी बात शिक्षक बच्चों के साथ सार्थक संवाद करें, उनकी बातों को प्यार से सुनें और उन्हें लोगों की बातचीत सुनने का मौका भी दें ताकि वे अपने लिए कुछ व्याकरण के नियम और शब्द स्वयं से ढूँढ़ सकें। आख़िरी बात यह है कि भाषा को अक्षर, उच्चारण, व्याकरण आदि में बाँटने से कोई मतलब नहीं निकलता है। ना ही ये सब किसी निश्चित क्रम में सीखे जा सकते हैं। भाषा सीखने का एक ही तरीक़ा है उसका ज़्यादा से ज़्यादा उपयोग किया जाए जैसे– बोलने में, तर्क करने में, कल्पना करने में, सृजन करने में। पढ़ने–लिखने इत्यादि के पर्याप्त अवसर मिले तो भाषा सीखना कोई मुश्किल काम नहीं है।

कुछ प्रश्न :

- भाषा की कक्षा में भाषा सिखाते समय हमें किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
- प्रायः हम यह मानते हैं कि बच्चे भाषा स्कूल में आकर ही सीखना शुरू करते हैं? अपने अभिमत को कारण सहित बताएं।
- कक्षाओं में भाषा–शिक्षण के क्या–क्या उद्‌देश्य होने चाहिए।

अध्याय – 2

बालक की मातृभाषा एवं भाषाई क्षमता

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
  - बच्चे की क्षमता
  - बच्चे भाषा संबंधी सभी स्थितियों को संभाल सकते हैं
  - बोलने के लिए क्या चाहिए
  - अवधारणाएँ व बालक
  - वाक्य संरचना व बच्चा
  - यह सब कैसे सीखा गया है
  - क्या बालक अनुकरण (नकल करके) से सीखता है
  - सीखने वाले बालक की विशिष्टताएँ (अथवा लक्षण)
  - विशिष्टताओं के निहित प्रभाव
  - बच्चों की भाषाओं को स्वीकार करें
  - बच्चों को सम्मान और एक सकारात्मक आत्म छवि चाहिए।

परिचय :

एक बच्चा भाषा का प्रयोग नये विचारों को ग्रहण करने और अपनी अवधारणाओं को बनाने के लिए करता हैं। विभिन्न विषयों से सम्बंधित सभी प्रकार के विचार एक चार वर्ष के बच्चे द्वारा ग्रहण किये जाते हैं वह इन पर बातचीत भी कर सकता है। इसके अतिरिक्त बच्चा तर्क निर्माण करने, अपने अधिकारों की रक्षा करने, परिस्थितियों का विश्लेषण करने और साथ ही सपनों व कल्पना के संसार का निर्माण करने में भी भाषा का उपयोग करता है। बच्चे की भाषा और भाषायी क्षमताओं पर अविश्वास के कारण कक्षागत प्रक्रियाओं में बच्चों के शाला आने से पूर्व के अनुभव, ज्ञान–संसार व उसकी अपनी भाषा को स्कूल में पर्याप्त जगह व सम्मान नहीं मिल पाता है जिससे बच्चे शाला से दुराव महसूस करते हैं। यदि हमारे विद्यालयों में आयोजित किए जाने वाले सीखने–सिखाने के क्रियाकलाप, शिक्षण सहायक सामग्री, स्कूल की साज–सज्जा आदि में इन बातों का ध्यान यदि हम रख सकें तो भाषा शिक्षण की कक्षाएँ सहज व रोचक बन पड़ेंगी, और प्राथमिक स्तर के बच्चे स्कूल में स्वयं को ज्यादा सहज व सुरक्षित महसूस कर पाएँगे।

इस इकाई में बच्चों की भाषाई क्षमताओं, भाषा विकास के लिए आवश्यक बातों और भाषा सीखने से जुड़ी कुछ प्रचलित मान्यताओं को समझने का प्रयास करेंगे।

उद्देश्य :

- बच्चों को भाषायी क्षमताओं को गहराई से समझ पाएँगे।
- बच्चों के सीखने में कौन से घटक महत्वपूर्ण हैं, के बारे में समझ पाएँगे।
- भाषा शिक्षण में बच्चों की भाषाओं के महत्व को समझ पाएँगे।

बच्चे की क्षमता

भाषा शिक्षण के दौरान इस बात की अनदेखी की जाती है कि बच्चा एक अति सक्षम जीव होता है। प्रारंभिक कक्षाओं में अध्यापक का ध्यान भी बच्चों की इस क्षमता की ओर नहीं जाता। वास्तव में चार साल का बच्चा तो भाषायी दृष्टि से एक वयस्क के

समान अपनी भाषा में संवाद करने, अवधारणाएँ बनाने व तर्क करने में सक्षम होता है। इसके अलावा भी वह और बहुत कुछ कर सकता है; जैसे वह कईं तरह के शारीरिक काम कर सकता है, स्थान संबंधी अवधारणाओं को समझता है व उनका उपयोग करता है, कल्पना करता है, अनुमान लगाता है। वह संख्याओं और मात्राओं को भी समझता है। सारी क्षमताएँ बच्चा अपने आस–पास के संसार से सहज अंतःक्रिया करते हुए स्वयं ही अर्जित कर लेता है। इन सभी अर्जित क्षमताओं में सबसे जानी–मानी क्षमता है ''भाषा''।

भाषा के बग़ैर मनुष्य की कल्पना करना मुश्किल है और ना ही भाषा के बग़ैर हम बच्चों की सीखने की प्रक्रिया के बारे में सोच सकते हैं। यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि बच्चों में अपने आस–पास व दुनिया की समझ को विकसित करने में भाषा का योगदान महत्त्वपूर्ण होता है लेकिन केवल भाषा ही इस विकास के लिए जरूरी है यह कहना मुश्किल है। वर्तमान में यह मुद्दा क़ाफ़ी चर्चित भी है। इसमें कोई संदेह नहीं कि भाषा हमारे जीवन और हमारी पहचान का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। हिस्सा इस अर्थ में कि न केवल यह हमारे विकास में योगदान देती है, हमें परिभाषित भी करती है।

बच्चा भाषा संबंधी सभी स्थितियों को संभाल सकता है

विद्यालय में आने वाले बच्चे की क्षमता को समझने के लिए हमें यह मानना ही होगा कि वह अपने आस–पास के सभी लोगों से ठीक से बातचीत कर सकता है, घर में होनेवाली सभी गतिविधियों में कुशलतापूर्वक भाग ले सकता है। वह न केवल अपने सामाजिक, सांस्कृतिक व भाषिक वातावरण के जटिल घटकों के साथ जुड़ा होता है अपितु वह उनसे संप्रेषण करने में भी समर्थ होता है। वह संदर्भ के अनुसार भाषा का उपयोग करना जानता है। यह संदर्भ कोई अनुभव हो सकता है अथवा एक परिस्थिति जिसका बच्चा स्वयं हिस्सा हो। संदर्भ विशेष को ध्यान में रखते हुए बच्चा अपनी भाषा का उपयोग करता है, और संदर्भ बदलने पर भाषा में उपयुक्त परिवर्तन भी कर लेता है। उदाहरण के लिए, बच्चा यह भली–भाँति जानता है कि किस अवसर पर, किस व्यक्ति से कैसे बात करनी है? यहाँ ऐसा नहीं कहा जा रहा कि बच्चा बातचीत करते समय गलती नहीं कर सकता। वह ग़लती कर सकता है लेकिन इस ग़लती का कारण यह नहीं होता कि बच्चे को परिस्थिति विशेष के अनुसार बातचीत करने के तौर–तरीक़े नहीं आते बल्कि इसका कारण यह होता है कि वह स्थिति को ढंग से समझ नहीं पाता।

वह यह अच्छी तरह जानता है कि यदि उसे अपने से उम्र में बड़े किसी व्यक्ति से कुछ माँगना है तो उसे थोड़ा नरमी से बात करनी होगी। यदि किसी वजह से ऐसा नहीं करता तो पूछने पर वह आपको इसका कारण भी बता सकता है। कौन बड़ा है, कौन छोटा यह महसूस करने तथा चतुराई से स्थितियों को अपने पक्ष में करने की क्षमता भी बच्चे में होती है। वह अपनी इच्छाओं, भावनाओं को व्यक्त करने और अनुभवों को बाँटने हेतु भाषा का धाराप्रवाह उपयोग करता है। ये सभी काम क़ाफ़ी जटिल हैं। यदि हम यह सोचें कि इस तरह के हरेक कार्य को अंजाम देने के लिए और क्या–क्या करना पड़ता है? और फिर उसकी भी एक सूची बनाएँ तो यह सूची चौंका देनेवाली होगी।

कुछ प्रश्न :

- भाषा संबंधी किन–किन स्थितियों को बच्चे संभाल सकते हैं?
- ऐसे ही दो उदाहरण आप अपने घर या आस–पास से देवें जहाँ बच्चों को भाषा संबंधी स्थितियों को संभालने का मौका हो।

बोलने के लिए क्या चाहिए

बोलने की क्रिया स्वयं में सरल होती है। आइए, देखते हैं कि इसके अन्तर्गत क्या आता है। मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि वार्तालाप का अर्थ है विचारों का आदान–प्रदान। जिस विचार को हम संप्रेषित करना चाहते हैं वह ग्राह्य (समझने योग्य) होना चाहिए। इसके लिए ज़रूरी है कि हमें जो बोलना है उसका एक चित्र हमारे पास हो और हमें पहले से ही सचेत रहना चाहिए कि किस विषय पर चर्चा होने जा रही है। यदि विचार किया जाए कि किसी विषय पर चर्चा में भाग लेने हेतु क्या आवश्यक है तो हम पाएँगे कि इस प्रक्रिया में, पूर्व अनुमान लगाना सम्मिलित है कि जब एक व्यक्ति बोल रहा है तो दूसरा व्यक्ति क्या कर रहा है। और जब बालक अपना पहला शब्द कहता है तो फिर दूसरा शब्द और उसके बाद और शब्द तो आप समझ सकते हैं कि वह क्या कह रहा है। कभी–कभी बालक के वाक्य समाप्त करने से पूर्व ही हम अपनी प्रतिक्रिया तैयार कर लेते हैं। कभी–कभी किसी व्यक्ति के द्वारा वाक्य पूरा करने से पहले ही हम समझ जाते हैं कि वह क्या कह रहा है और उत्तर देना प्रारम्भ कर देते हैं। यदि वास्तव में इस विषय पर विचार किया जाए तो हम स्पष्ट रूप से अपनी विशाल क्षमताओं को पहचान पाएँगे, विशेष रूप से हम जो कुछ कहना चाहते हैं उसके कहने की क्षमता को एवं कब, क्या कहना है इस क्षमता को। हमारे व्याख्यान में जिह्वा का भ्रमित होना इस तथ्य को भी दर्शाता है कि किसी विषय को बोलते हुए ठीक उसी समय हम अपने अगले शब्द के विषय में भी सोच रहे होते है जिसे हम बोलने जा रहे हैं।

अवधारणाएँ और बालक

बच्चा विचारों को ग्रहण करने व अवधारणाओं को बनाने के लिए भाषा का उपयोग करता है। विभिन्न विषयों से संबंधित लगभग सभी तरह की अवधारणाएँ बच्चा अपने अनुभवों से स्वयं अर्जित कर लेता है। उदाहरण के लिए, सामाजिक व पारिवारिक रिश्तों संबंधी अवधारणाएँ परिवार में कौन बड़ा है, कौन छोटा, बड़े छोटे के बीच संबंध, कौन–कौन से रिश्ते, अलग–अलग रिश्तों से अपेक्षाएँ, उन अपेक्षाओं में अंतर की वजहें इत्यादि। वह कृषि, पौधे का जीवन, त्यौहार, घर के काम–काज संबंधी अवधारणाएँ भी समझता है। इन सभी से संबंधित उपलब्ध जानकारियों को वह एक स्पंज की भाँति सोख लेता है।

शायद हम बड़ों को लगे कि इनमें से कुछ जानकारी तो बच्चे के सीखने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है अतः इसे सीखना ही चाहिये। दूसरी तरफ़ हमें कुछ जानकारी अनुपयुक्त लगे और हम चाहें कि बच्चा ये ना सीखे, पर बच्चा तो सब कुछ सीख लेता है।

इन सभी के साथ–साथ जब वह बातचीत करना भी सीख लेता है तो फिर उसके सीखने की गति आगे बढ़ती ही चली जाती है। चाहे फिर लोगों के नाम हों अथवा पेड़–पौधों, जानवरों के नाम या फिर कब, कौन आया? कौन, कहाँ जा रहा है? एक व्यक्ति का दूसरे से रिश्ता, बाजार में किस तरह बातचीत होती है, इत्यादि। इनके अलावा और भी कई चीज़ों के बारे में वह बातचीत कर सकता है। तर्क करने, अपने अधिकारों के लिए लड़ने, स्थिति का विश्लेषण करने, अपने स्वयं के कल्पित संसार को रचने में वह भाषा का धडल्ले से प्रयोग करता है। जिन शब्दों को वह जानता है उनका उपयोग करते हुए वह दुनिया का ख़ाका बनाता है और अपने सपने भी।

वाक्य संरचना व बच्चा

अवधारणाओं को जानने के संदर्भ में बच्चे की क्षमताएँ क्या–क्या हैं? सिर्फ यह समझना ही महत्त्वपूर्ण नहीं है। वरन यह समझना भी महत्त्वपूर्ण है कि बच्चे के पास अचेतन स्तर पर ही सही पर वाक्य संरचना व संवाद की प्रक्रिया की भी पूरी समझ होती है। बातचीत की पूरी प्रक्रिया में बच्चा जानता है कि कब, कहाँ, क्या कहना है, कब ऊँची आवाज़ रखनी है कब नीची।

यदि बच्चा किसी परिस्थिति का वर्णन करता है तब परिस्थिति के अनुरूप वह क्रिया के सभी रूपों का सही इस्तेमाल करता है। यदि भाषा में संज्ञा व सर्वनाम के कई रूप होते हैं तो वह इनका भी सही–सही उपयोग करता है। अपनी स्वयं की भाषा में वह काल, एक वचन अथवा बहुवचन, लिंग योजक शब्दों के सही रूपों के प्रयोग में कोई चूक नहीं करता।

यदि हम हिन्दी और अंग्रेजी के कुछ वाक्यों (लगभग दस) को लें और उनका विश्लेषण करें तो हम यह महसूस कर पाएँगे कि ये वाक्य जो कि अलग–अलग संदर्भों से चुने गये हैं, जिनका प्रयोग बच्चा करता है, इन वाक्यों में शब्दों को व्यवस्थित करने हेतु व किन शब्दों को एक साथ रखना है यह समझने हेतु एक असाधारण योग्यता और अवचेतन स्तर का ज्ञान होना आवश्यक है। एक चार साल के बच्चे द्वारा उपयोग में लाये गये वाक्य यह संकेत देते हैं कि बच्चे में सूक्ष्म अंतर कर पाने की योग्यता होती है।

हमें इस पर भी विचार करने की आवश्यकता है कि बालक लगातार नये शब्दों के संपर्क में आता है। एक बार जब वह किसी शब्द और उसके अर्थ को जान लेता है तब वह शब्द की गहरी समझ विकसित करने हेतु अलग–अलग संदर्भों में इसका प्रयोग करता है।

यद्यपि शब्द के विभिन्न रूपों से उसका कोई पूर्व परिचय नहीं होता। लेकिन धीरे–धीरे वह अपने–आप शब्द के विभिन्न रूपों का निर्माण करने लगता है। इन विभिन्न रूपों का निर्माण भी वह नियमानुसार ही करता है, वो नियम जो अवचेतन स्तर पर वह जानता है। इनमें से कई नियमों को विभिन्न भाषाविदों द्वारा मान्यता दी गयी है, कुछ व्याकरण की पुस्तकों में शामिल किए गए हैं लेकिन बहुत से ऐसे नियम भी हैं जो अभी भी खोजे और चिह्नित किये जाने हैं।

भाषाविद हमेशा इस कोशिश में लगे रहते हैं कि वे भाषा के लिए एक बेहतर व्याकरण और ऐसे नियमों को बना पाएँ जो अलग–अलग संदर्भों को सम्मिलित कर सकें। पर भाषा के नियमों के निर्मित होने और अभिव्यक्त होने के बहुत समय पूर्व से ही भाषा के स्थानीय वक्ता अपनी आपसी समझ के माध्यम से भाषा के विभिन्न नियमों का उपयोग करते आए हैं। निःसन्देह इन सभी नियमों की व उनमें हुए नये परिवर्तनों की अच्छी–खासी समझ बच्चे के लिए उपलब्ध होती है।

कुछ प्रश्न :

- अपने आसपास के किसी तीन से चार वर्ष के बच्चे द्वारा बोले जाने वाले 10 वाक्यों की सूची बनाएँ।
- क्या बच्चे ने इनमें से कोई वाक्य गलत बोला है?
- ये सब बच्चों ने कैसे सीखा?

यह सब कैसे सीखा गया है

ऐसे पर्याप्त प्रमाण हैं जो संकेत देते हैं कि मानवीय अन्तःक्रियाओं के अभाव में भाषा क्षमता का विकास नहीं होता। ऐसे भी पर्याप्त प्रमाण हैं जिनके आधार पर हम कह सकते हैं कि भिन्न–भिन्न पृष्ठभूमियों और समुदायों से आने वाले बच्चे विभिन्न प्रकार की क्षमताएँ अर्जित करते हैं और उनका अनुभव उनके ज्ञान को प्रभावित करता है। यद्यपि सीखना एक समान नहीं होता, तथापि अक्सर देखा गया हैं कुछ समान लक्षण हैं और किंचित समान अवस्थाएँ हैं। वयस्क लोग बच्चों को उनकी सीखने की प्रक्रिया में सहायता करने का प्रयास करते हैं। जो तरीक़ा उन्हें सर्वश्रेष्ठ लगता है, वे उसका प्रयोग करते हैं। कुछ मामलों में या तो बच्चों की तरह बोलकर उन्हें आराम

का अहसास कराते हैं या फिर बच्चे को जो बोलना है उसे कई भागों में बाँटकर आसान बनाते हुए बच्चों द्वारा उनकी नक़ल करने और उसे बार–बार दोहराने का अभ्यास कराया जाता है अथवा गलतियों में सुधार करते हुए सही वाक्य को बार–बार दोहराने के लिये कहा जा सकता है। सुधारने के बारे में हम वाद–विवाद कर सकते हैं। यह स्पष्ट है कि इन क्रियाओं में बालक के प्रति हमारी चिंता झलकती है और यह मान्यता भी कि वह स्वयं को महत्त्वपूर्ण अनुभव करे। यह मान्यता (स्वीकारोक्ति) और साथ ही प्रोत्साहन बच्चे के सीखने में बहुत महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

परन्तु, यह भी स्पष्ट है कि केवल मार्गदर्शन से कुछ अधिक नहीं सीखा जा सकता। इस प्रक्रिया में बालक का जितना विकास हो सकता है वह उससे कहीं अधिक ज्ञान और क्षमता रखता है। बच्चों की कितनी ग़लतियों को सुधारनें में हम सहायता कर सकते हैं? सीखने में हम बच्चों का कितना मार्गदर्शन करते हैं? हम यह भी जानते हैं कि हम जो बात नहीं चाहते बच्चा उसी को सबसे जल्दी सीखता है। बच्चा ऐसी अनेक बातें सीख लेता है जिन्हें हम चैतन्य रूप से जानते तक नहीं। बालक के इस अपार ज्ञान के आधार पर हम कह सकते हैं कि यह सब सीखने हेतु बच्चे द्वारा जानबूझकर कोई सक्रिय प्रयास अथवा योजना नहीं बनाई जाती बल्कि यह उसकी समाज से नैसर्गिक अन्तःक्रिया एवं तत्परता है जो यह सब कुछ सीखना संभव बनाती है। यदि बच्चे की इस क्षमता के निर्माण की बात करें तो यह तथ्य महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि बच्चे के लिए मानव पर्यावरण अस्तित्व में है और वह अपने से संबंधित अनेक व्यक्तियों के साथ अंतःक्रिया व विचारों का आदान–प्रदान करता है।

क्या बालक अनुकरण (नकल करके) से सीखता है?

जब हम यह मान लेते हैं कि बालक मानव संसार के साथ पारस्परिक संपर्क से सीखता है तो हम यह भी समझ सकते हैं कि पारस्परिक संबंधों की प्रकृति उसके ज्ञान को प्रभावित कर सकती है। ''बालक नकल करने से सीखता है।'' यह एक प्रसिद्ध मत है। इस पर एक दृष्टि डालना महत्त्वपूर्ण होगा क्योंकि ऐसा मानना हमारे द्वारा बालकों के लिए निर्मित अनेक अनुभवों पर प्रभाव डालता है। यदि मनुष्य नकल करके अथवा अनुकरण से सीखता है तो सीखने की प्रक्रिया को इस प्रकार निर्मित किया जा सकता है–

आप जो कर रहे हैं, बालकों को उसे देखने दीजिए। उन्हें आपकी नक़ल करने के लिए कहें गलतियाँ करे तो उसमें सुधार कर दें। उसे लगातार उसी कार्य को दोहराने के लिए भी कहा जा सकता है जिसमें वह ग़लती करता है। यह स्पष्ट है कि विद्यालय जाने से पूर्व ही बालक द्वारा जो ज्ञान अर्जित कर लिया गया है उसे देखते हुए यह एक उचित प्रक्रिया नहीं है। जो वाक्य उसने किसी को बोलते हुए सुना है केवल उस आधार पर बालक वार्तालाप में भाग नहीं ले सकता और अपने सभी वाक्यों की रचना नहीं कर सकता। बच्चे ऐसे बहुत से वाक्य बोलते हैं जो इससे पहले उन्होंने कभी नहीं सुने होते क्योंकि जिन संदर्भों में बच्चा बोलता है ऐसा नहीं हो सकता कि वैसे ही समान संदर्भ उसके सामने पहले कभी आये हों। हालाँकि हम यह तो नहीं कह सकते कि हमारी सीखने की प्रक्रिया की वर्तमान समझ को आगे बढ़ाने के लिए, बच्चे द्वारा अपनाई गई उपर्युक्त वर्णित सीखने की प्रक्रिया निरर्थक है। फिर भी यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की प्रक्रियाओं से बच्चे के पूरे ज्ञान का बहुत छोटा भाग ही प्रभावित होता होगा।

सीखनेवाले बालक की विशिष्टताएँ (अथवा लक्षण)

अपने आस–पास की जाँच पड़ताल मानव की सीखने की प्रक्रिया का प्रमुख पक्ष है। इस खोज में वह संसार का अधिक से अधिक अनुभव प्राप्त करना चाहता है और उसके साथ अपने संबंधों को और विस्तृत (प्रगाढ़) करना चाहता है। उसके भीतर नवीन वस्तुओं का अनुभव करने, नये कार्य करने और चुनौतियों को समझने योग्य बनने की उत्तेजना होती है।

दूसरा प्रमुख पक्ष है कार्यों को करने का दृढ़ निश्चय (जिद) और आसानी से हार नहीं मानना। एक बालक चलना सीखते समय खड़ा होने का प्रयास करता है। वह गिर जाता है परन्तु चलना नहीं त्यागता। जब बालक बोलना सीखता है तो पाता है कि उसे कोई नहीं समझ रहा है। यह भी स्पष्ट नहीं कि वह स्वयं कितना समझता है फिर भी वह लगातार अपने–आपको सीखने की चुनौती देता रहता है। अतः कह सकते हैं कि जिन चीज़ों को बच्चे सीखना चाहते हैं उन्हें सीखने के लिए वे लगातार संघर्ष करते हैं।

तीसरी प्रमुख विशेषता है कि कार्यों को स्वयं करने एवं स्वयं ही सब कुछ अभिव्यक्त करने की इच्छा अथवा चाह। किसी कार्य का परिणाम बालक के लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना महत्वपूर्ण यह कि इस प्रक्रिया में उसकी भूमिका क्या थी अथवा क्या होगी।

चौथा पहलू है– बालक की असीमित जिज्ञासा; जैसे–क्या हो रहा है, किसको समस्या है, क्या समस्या है इत्यादि। बचपन से ही मानव अपने चारों ओर की स्थिति के विषय में सब कुछ जानने की इच्छा रखता है। वह संसार के साथ अधिक कुशलता से व्यवहार करने की क्षमता को प्राप्त करना चाहता है, इसलिए अत्यधिक जिज्ञासु होता है। जिज्ञासा सम्भवतः वह निहित गुण अथवा लक्षण है जिसकी परिणति खोजने की इच्छा और इसी के साथ कार्यों को स्वयं करने की इच्छा के रूप में होती है। यही वह अभिरुचि अथवा विशेषता है जो बालक को नये अनुभवों, नवीन परिस्थितियों और चुनौतियों का सामना करने एवं साहसीकृत करने के लिये उद्यत करती है। वह उन वस्तुओं को खोजने से भी नहीं डरता जो उसके माता–पिता नहीं खोजना चाहते। वह अपनी जिज्ञासा के अनुरूप दृढ़निश्चय और स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करता है।

विशिष्टताओं के निहित प्रभाव

ये चार विशिष्टताएँ वयस्कों के साथ उस तरह के पारस्परिक संबंधों की ओर संकेत करती हैं जिनसे बालकों को सीखने में सहायता मिलती है। इनके अन्तर्गत बालक को खोजने, स्वयं कार्य करने, अपनी इच्छा और निश्चय को पहचानने और साथ ही उसकी योग्यता का सम्मान करने के संबंध में जागरूकता सम्मिलित है। इनमें यह निहित है कि वयस्क समझे कि बालक अपने अनुभव को आत्मसात् करके और अधिक क्रिया करते हुए सीखेगा। वयस्क लोग बालक को ऐसा करने का अवसर प्रदान कर सकते हैं और यह सुनिश्चत कर सकते हैं कि बालक जो चुनौतियाँ ले रहा है वे विपत्तिजनक तो नहीं हैं।

कक्षा–कक्ष एक ऐसा स्थान है जहाँ पर बच्चों के एक समूह के लिए शिक्षा की व्यवस्था की जाती है, एक ऐसे समूह के लिए जो आवश्यक नहीं है कि एक ही प्रकार की पृष्ठभूमि अथवा अनुभव रखता हो। यहाँ बच्चे क्या सीखें इसकी कुछ अपेक्षाएँ होती हैं। अध्यापक प्रायः बच्चों की भाषा और संस्कृति को समझ अथवा पहचान नहीं पाते। बालक और उसके अध्यापक का संबंध घर में वयस्कों के साथ बालक के संबंध से बहुत भिन्न होता है और उनकी चिंताएँ भी भिन्न होती हैं। विद्यालय में उपलब्ध समय और अवसर सीमित होते हैं। प्रत्येक बालक को यह अनुमति नहीं दी जा सकती कि वह जो करना चाहता है करे और उस समय जो विशेष उसे पसंद हो वही सीखे। हमें कक्षा–कक्ष के संभावित निहितार्थ के बारे में विचार करने के लिए इन विभिन्नताओं को समझना और महसूस करना होगा।

बालक में चार विशेष गुण होते हैं जो इस प्रकार है– (1) असीमित जिज्ञासा (2) स्वतंत्रता की ललक या इच्छा (3) अनुसंधान और प्रयोग करने की चाह और साथ ही (4) स्वयं कार्य करने की इच्छा। स्कूल में बच्चों को सीखने के अवसर उपलब्ध कराने में ये चार गुण आधारभूत माने जाने चाहिए। ये आधार विभिन्न स्थितियों में भिन्न तरीकों से उभर कर आएँगे।

बालकों के द्वारा भाषा सीखने के संदर्भ में हमें यह मानने की आवश्यकता है कि बालक के पास पहले से ही घर की भाषा का उपयोग करने की बहुत क्षमता होती है। उसके पास एक विशाल शब्दकोश है, अपनी भाषा में पूर्णवाक्य रचना करने की योग्यता है और उस भाषा में वार्तालाप करने की क्षमता है। हमें यह भी मानना होगा कि कार्यों को स्वयं करने हेतु बालक को अवसर चाहिए अर्थात् स्वयं के विचारों को व्यक्त करना, भाषा का अलग ढंग से प्रयोग करना और दृष्टिकोण हेतु तर्क बनाना। अपने अध्यापक की यांत्रिक (बुद्धिरहित) रूप से नकल करना या अन्य दूसरे की नकल करना बालक की कुछ भी सहायता नहीं करता क्योंकि यह न तो बालक को चुनौती देता है और न ही उसे इसमें रुचि हो सकती है। भाषा क्षमता के निर्माण हेतु इस बात की आवश्यकता है कि बालक अनेक प्रकार की स्थितियों का सामना करने में सक्षम हो सके। वह अधिक जटिल तर्कों का निर्माण कर सके, अधिक जटिल विचारों के साथ व्यवहार कर सके और संवाद को लम्बे समय तक चला सके, जिसमें कि अमूर्त विचार भी सम्मिलित हैं। अतः बच्चों के लिए यह सब प्राप्त कराने हेतु हमारी कक्षा–कक्ष प्रक्रियाओं को उनके लिए आवश्यक स्थान एवं अवसर उपलब्ध कराने होंगे।

कुछ प्रश्न :

- उपर्युक्त चार विशेषताएँ जो कि हर बालक को सीखने में मदद करती है। इन्हें ध्यान में रखते हुए बच्चों को किस–किस प्रकार के सीखने के अवसर उपलब्ध करवाए जा सकते हैं। साथियों के साथ चर्चा करके लिखिए।

बच्चों की भाषाओं को स्वीकार करें

हमें यह मानना होगा कि बालक तब अच्छी तरह सीखता है जब वह अपने चारों ओर की उन वस्तुओं के बारे में खोजबीन करता है जिन्हें वह जानता है और इसलिए उसके साथ अपनापन रखता है। वाक्यों का निर्माण करने में, नई प्रकार की स्थितियों में सहभागिता करने में और जिस भाषा का वह प्रयोग कर रहा है उसमें योग्यता पाने हेतु एक निश्चित मात्रा में आत्मविश्वास की आवश्यकता होती है। यदि कक्षा–कक्ष की भाषा का बच्चे की भाषा से कोई लेना–देना नहीं है और वहाँ की भाषा उन शब्दों पर आधारित नहीं हैं जिन्हें बच्चा जानता और समझता है तो ऐसा कोई तरीक़ा नहीं कि वह खोजबीन के लिए स्वयं में विश्वास महसूस कर सके और नई चुनौतियों को ले सके। इस प्रकार वह ज्ञानार्जन प्रक्रिया में विश्वासपूर्वक सहभागी नहीं रह पाता और उसे एक कैचअप खेल खेलना होता है और वह भी बिना पर्याप्त अवसर और समय के।

कक्षा–कक्ष में सामान्यतः विभिन्न भाषाओं वाले बच्चे होते हैं। इसलिये अध्यापक के लिए एक प्रमुख सिद्धान्त यह है कि वह सभी बच्चों के लिए एक सम्पर्क भाषा की पहचान कर उसे सीखे। कक्षा–कक्ष में संवाद उसी भाषा में हो जिससे कि भाषा के उपयोग करने की योग्यता सशक्त बन सके जैसे– तर्क, कल्पना, आत्मविश्वास, संप्रेषण, ज्ञान का विस्तार इत्यादि में। संप्रेषण की कमी को दूर करने का भार अध्यापक द्वारा ही उठाया जाना चाहिए।

बच्चों को उनकी अपनी भाषा का उपयोग करने तथा कक्षा में उपस्थित सभी भाषाओं के साथ खेलने की अनुमति दी जानी चाहिए। वे स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए विभिन्न भाषाओं के शब्दों का उपयोग कर सकते हैं और इसके द्वारा संवाद कराने की श्रेष्ठतर योग्यता विकसित कर सकते हैं।

कुछ प्रश्न :

- कक्षा में बच्चों की अपनी भाषाओं के उपयोग के क्या–क्या फायदें होंगे?
- कक्षा–कक्ष में एक से ज्यादा भाषाओं वाले बच्चे होते हैं। तो इन अलग–अलग भाषाओं का भाषा सीखने–सिखाने में क्या–क्या इस्तेमाल/उपयोग हो सकता है?

बच्चों को सम्मान और एक सकारात्मक आत्मछवि चाहिए

एक बालक द्वारा आत्मविश्वास महसूस करने के संदर्भ में दूसरा आवश्यक बिन्दु है, सकारात्मक आत्मछवि। बालक की संस्कृति, भाषा तथा उसकी पहचान का सम्मान किया जाना चाहिए। जब इनका सम्मान होगा केवल तभी वह बालक स्वयं से खोजना सीख पाएगा और अपनी इच्छा और जिज्ञासा का अभ्यास कर पाएगा। वह जो कहता है अथवा महसूस करता है उसका सम्मान किया जाएगा। इस विश्वास के अभाव में सीखने अथवा ज्ञानार्जन के कोई भी महत्वपूर्ण लक्षण उस बालक/बालिका के व्यवहार में परिलक्षित नहीं होंगे।

इसके प्रभाव तथा परिणामों को समझने के लिए तथा कक्षा–कक्ष में क्या किया जा सकता है, इन संभावनाओं पर विचार कीजिये; शायद कुछ किया जा सकता है। बोर्ड पर एक वस्तु (अथवा किसी भी प्राणी) का चित्र बनाएँ और फिर बच्चों से पूछें कि वे इसे क्या नाम देंगे। बच्चों द्वारा सुझाये गये सभी नामों को बोर्ड पर लिखिये। इसके पश्चात् बच्चों से कहें कि अपनी भाषा में इस चित्र के बारे में वे क्या जानते हैं और समझते हैं, बोलें। यदि बच्चा स्वयं सम्पर्क भाषा धाराप्रवाह रूप से नहीं बोल सकता तो कक्षा में ऐसे बच्चे होंगे जो कि कही गई बात को समझा सकते हैं। फिर भी, यह समझ स्पष्ट होना चाहिए कि बालक जब तक चाहे अपनी भाषा में ही बोले। ऐसे कई अभ्यास किये जा सकते हैं जिनसे किसी घटना, किसी गतिविधि अथवा अन्य किसी विषय पर बात करने का मौका मिले। बच्चों को किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में वर्णन करने के लिए कहा जा सकता है जिसे वे पसन्द करते हैं अथवा उनके जीवन में आये एक ऐसे क्षण के बारे में जिसे वे सदा ही याद रखना चाहेंगे।

अध्याय – 3

भाषा शिक्षण के उद्देश्य

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
  - भाषा शिक्षण के उद्देश्य (NCF आधार पत्र से)
    - जो कुछ वह सुनता है उसे समझने की दक्षता
    - समझ के साथ पठन की योग्यता होनी चाहिए न कि मात्र डिकोडीकरण की
    - सहज अभिव्यक्ति
    - सुसंगत लेखन
    - विभिन्न रजिस्टरों पर नियंत्रण
    - भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन
    - सृजनात्मकता
    - संवेदनशीलता
  - भाषा–शिक्षण के उद्देश्य कक्षा 1 से 2
    - उद्देश्य
  - भाषा–शिक्षण के उद्देश्य कक्षा 3 से 5
    - बच्चों में पुस्तकों के प्रति रुचि जागृत करना
    - पूर्व अर्जित भाषायी कौशलों का उत्तरोत्तर विकास करना
    - भाषा को अपने परिवेश और अपने अनुभवों को समझने का माध्यम मानना और उसका सार्थक उपयोग कर सकना
  - व्याकरण
    - उदाहरण–1
    - उदाहरण–2

परिचय :

एन.सी.एफ 2005 'आरंभिक शिक्षा हेतु पाठ्यक्रम व भारतीय भाषाओं के शिक्षण' के आधार पत्र से संकलित इस अध्याय में प्राथमिक शिक्षा में भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को विस्तार से समझने का प्रयास किया गया है। दिये गये उद्देश्यों में यह बात कहना जरुरी है कि सारे उद्देश्य पूर्णतया एक दूसरे से पृथक नहीं किये जा सकते। हमें अपना दिशाबोध बनाये रखने हेतु इन्हें पृथक–पृथक समझना तो आवश्यक है, पर इनकी पृथक–पृथक प्राप्ति सम्भव नहीं हो सकता है। अतः शिक्षण में इन उद्देश्यों में से कभी कुछ या कभी –कभी समस्त उद्देश्यों को एक साथ लेकर चलने की आवश्यकता होगी।

उद्देश्य :

- प्राथमिक कक्षाओं में भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को समझ पाएँगे।
- प्राथमिक कक्षाओं में व्याकरण शिक्षण कैसे हो? की समझ बना पाएँगे।

भाषा शिक्षण के उद्देश्य (NCF आधार पत्र से)

बच्चे अच्छी खासी विकसित भाषिक व्यवस्था के साथ ही स्कूल आते हैं, इसलिए इसे ध्यान में रखते हुए ही स्कूली पाठ्यचर्या में भाषा शिक्षण के उद्देश्य तय किए जाने चाहिए। स्कूल का सबसे महत्त्वपूर्ण लक्ष्य बच्चे को इस प्रकार से सक्षम बनाना है कि बच्चा समझने के साथ पढ़ने व लिखने की क्षमता हासिल कर सके। साथ ही द्विभाषिकता और पराभाषिक चेतना को बढ़ावा देना हमारा प्रयास होना चाहिए। विद्यार्थियों में विनम्रता व नम्यता की क्षमता विकसित करना जरूरी है ताकि वे सभी प्रकार की स्थितियों में सहिष्णुता व आत्मसम्मान के साथ संवाद स्थापित करने की क्षमता प्राप्त कर सकें।

यद्यपि भाषा–विज्ञानी सिद्धान्तों और आनुप्रयोगिक भाषा विज्ञान की अंतःक्रिया ने कई तरह की शिक्षण पद्धतियों व सामग्रियों को जन्म दिया है, लेकिन भाषा की कक्षाएँ अभी भी ऊबाऊ बनी हुई

हैं और व्यवहारवादी ढाँचे का ही अनुसरण कर रही हैं। वे भाषाएँ जिनसे बच्चा परिचित होता है यानी जिनके साथ स्कूल में प्रवेश करता है उनमें विशेष प्रगति नहीं कर पाता है। द्वितीय भाषा (जैसे अंग्रेजी) के मामले में 6 से 10 साल तक लगातार पढ़ाए जाने के बावजूद बच्चे आधारभूत आरंभिक स्तर की दक्षता भी हासिल नहीं कर पाते और शास्त्रीय अथवा विदेशी भाषाओं के मामले में तो केवल कुछ चुनी हुई चीजों का रट्टा मारने का चलन जारी है। ऐसा नहीं है कि इन बातों पर अध्ययन नहीं हुए हैं। ज़रूरत है हम विशिष्ट संदर्भों को समझें, फिर कुछ उद्देश्य तय करें और उनके अनुसार उपयुक्त तरीके व सामग्री विकसित करें।

बहुत लंबे समय से हम भाषा शिक्षण के उद्देश्य को महज सुनने–बोलने–पढ़ने–लिखने (एस.एल.आर. डब्ल्यू.) के मद्देनजर देखते रहे हैं। हाल ही में हमने संप्रेषण कौशलों, उच्चारण विविधता और स्वर प्रशिक्षण, आदि के बारे में गंभीरता से बात करना शुरू किया है। इन क्षमताओं या कुशलताओं पर अतिरिक्त ध्यान देने से बड़ा ही नुकसान हुआ है। इस आधार पत्र में यद्यपि हम इसी ढाँचे के तहत उद्देश्यों पर बात करेंगे, लेकिन हम भाषा दक्षता के मामले में ज्यादा समग्रतावादी दृष्टिकोण अपनाने की वकालत भी करते हैं। आखिर जब हम बोल रहे होते हैं तभी सुन भी रहे होते हैं और जब हम लिख रहे होते हैं तभी पढ़ भी रहे होते हैं। साथ ही कई परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं (जैसे मित्र मिलजुल कर नाटक पढ़ रहे होते हैं और इसके लिए कुछ नोट करते हैं) जिसमें हमारी भाषा क्षमता के सभी पहलू और संज्ञानात्मक योग्यताएँ एक साथ काम कर रही होती हैं। हमारे कुछ लक्ष्य इस प्रकार हैं :

(क) **जो कुछ वह सुनता है उसे समझने की दक्षता :** एक शिक्षार्थी को जो कुछ कहा गया है उसे समझने के लिए उसमें वक्ता की ओर से आनेवाले विभिन्न गैर शाब्दिक संकेतों को ग्रहण करने की क्षमता होनी चाहिए। उसमें गैर शाब्दिक संकेतों के द्वारा सुनकर और समझकर संबंध जोड़ने और अनुमान लगाने की कुशलता होनी चाहिए।

(ख) **समझ के साथ पठन की योग्यता होनी चाहिए न कि मात्र डिकोडीकरण की :** उसे विभिन्न व्याकरण सम्मत, अर्थगत और लिपि संकेतों के प्रयोग द्वारा आरेखित तरीके से संबंधित विषयवस्तु से पठन की आदत विकसित करनी चाहिए तथा अपने पिछले ज्ञान के साथ जोड़कर निष्कर्षों द्वारा अर्थ निर्माण के योग्य होना चाहिए। उसे पठन के लिए आत्मविश्वास विकसित करना चाहिए तथा विवेचनात्मक दृष्टिकोण के साथ पढ़ते समय प्रश्न भी सामने रखने चाहिए।

(ग) **सहज अभिव्यक्ति की क्षमता :** उसे विभिन्न परिस्थितियों में अपने संप्रेषणात्मक कौशलों को प्रयोग में लाने में समर्थ होना चाहिए। उसके खजाने में अभिव्यक्ति के कई तरीके होने चाहिए जिन में से वह चुन सके। उसे इस योग्य भी होना चाहिए कि वह तार्किक, विश्लेषणात्मक तथा रचनात्मक ढंग से परिचर्चा में शामिल हो सके।

(घ) **सुसंगत लेखन :** लेखन एक यांत्रिक कौशल नहीं है। इसमें विभिन्न संबंध युक्तियाँ अर्थात् तत्संबंधी विषयों के द्वारा उस विषय को संयोजित करने एवं पर्यायवाची इत्यादि के प्रयोग द्वारा विचारों को सुसंगत ढंग से संयोजित करने की योग्यता के साथ–साथ व्याकरण, शब्द–ज्ञान, विषय, विराम–चिह्नों पर पर्याप्त नियंत्रण इत्यादि कौशल सम्मिलित हैं। शिक्षार्थी को अपने विचार सहज एवं व्यवस्थित ढंग से प्रकट करने का आत्मविश्वास विकसित करना चाहिए। विद्यार्थी को अपने लिए विषय का चयन करने, विचारों को व्यवस्थित करने और श्रोता–बोध की दृष्टि से लिखने के लिए प्रोत्साहित एवं प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। यह केवल तभी संभव है जब उसका लेखन एक प्रक्रिया के रूप में दिखाई दे न कि एक उत्पाद के रूप में। उसे विभिन्न उद्देश्यों से और विभिन्न परिस्थितियों में अनौपचारिक से पूर्णतः औपचारिक रूप तक लेखन का प्रयोग करना आना चाहिए।

(ङ) विभिन्न रजिस्टरों पर नियंत्रण : भाषा का प्रयोग कभी भी एक तरह से नहीं होता है। इसके असंख्य प्रकार, अर्थ भेद एवं रंग होते हैं जो विभिन्न परिस्थितियों और विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार होते हैं। विभिन्न स्वर स्तरों (रजिस्टरों) के रूप में जानी जानेवाली विभिन्नताएँ, एक विद्यार्थी के शब्द/वाक्य भंडार का एक अंश होना चाहिए। विद्यालय के विषयों के अतिरिक्त विद्यार्थी को विभिन्न प्रयोजनों जैसे– संगीत, खेलकूद, फिल्म, बाग़वानी, निर्माण कार्य, पाककला इत्यादि में प्रयोग की जानेवाली विभिन्न भाषाओं, शब्दों और वाक्यों को समझने और उनके प्रयोग में भी दक्ष होना चाहिए।

(च) भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन : भाषा की कक्षा में विभिन्न शिक्षण तकनीकियाँ अपनाई जानी चाहिए। कराए जानेवाले कार्य इस प्रकार से होने चाहिए कि उनसे बच्चा वैज्ञानिक प्रक्रिया के तमाम अवयवयों जैसे– आँकड़ों का संकलन, आँकड़ों का अवलोकन और उनकी समानताओं और विभिन्नताओं के आधार पर उनका वर्गीकरण एवं परिकल्पना करने, इत्यादि के अनुसार अग्रसर हो। इस प्रकार बच्चे की संज्ञानात्मक योग्यताओं को विकसित करने में भाषा विज्ञान के ये उपकरण महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। इससे व्याकरण के मानक नियमों को बेहतर ढंग से सीखा जा सकेगा तथापि यह प्रक्रिया बहुभाषीय कक्षाओं में विशेष रूप से प्रभावी है।

(छ) सृजनात्मकता : भाषा की कक्षा में एक विद्यार्थी को अपनी कल्पना और सृजनात्मकता विकसित करने के लिए पर्याप्त स्थान मिलना चाहिए। कक्षा का लोकाचार और शिक्षक–विद्यार्थी संबंध बच्चे में आत्मविश्वास विकसित करता है जिससे पाठ्यसामग्री के आदान–प्रदान और गतिविधियों में बिना अवरोध के दोनों ही सृजनात्मकता का प्रयोग करते हैं।

(ज) संवेदनशीलता : भाषा की कक्षा द्वारा विद्यार्थियों को हमारी समृद्ध संस्कृति विकसित करने एवं समकालीन जीवन के विभिन्न पहलुओं से अवगत करवाने के बेहतर अवसर उपलब्ध होते हैं। भाषा की कक्षा और पाठ्यसामग्री से विद्यार्थियों को अपने इर्द–गिर्द लोगों एवं राष्ट्र के प्रति संवेदनशील बनने के अधिक अवसर भी प्राप्त होते हैं।

> ...एक शिक्षार्थी एक भाषा के व्याकरण को सहज निर्मित करने में तभी सक्षम होगा जब उसे चिंता रहित परिस्थितियों में ऐसी सामग्री उपलब्ध करवाई जाएँ/जो कि वह समझ सके। जैसा कि क्राषेन (1985) ने सुझाव दिया, ''निवेश केवल तभी ग्राह्य बनेंगे यदि अभिवृत्तियाँ सकारात्मक हों और अभिप्रेरणा सुदृढ़ हो।''

भाषा–शिक्षण के उद्देश्य कक्षा 1 से 2

बच्चे के व्यक्तित्व निर्माण में मातृभाषा का महत्वपूर्ण योगदान है। मातृभाषा को बच्चा अपने माता–पिता एवं अन्य परिजनों से सुनकर अनायास ही सीख लेता है और उससे उसका सहज संबंध स्थापित हो जाता है। भाषा प्रत्येक बच्चे के दृष्टिकोण, उसकी रुचियों, क्षमताओं, यहाँ तक कि मूल्यों और मनोवृत्तियों को भी आकार देती है। भाषा सोचने, महसूस करने और चीजों से जुड़ने का एक उत्तम साधन है। भाषा ही बच्चे को समझदार, विचारवान, सभ्य और शिक्षित बनाती है। मातृभाषा में ही बच्चे का मस्तिष्क सबसे पहले क्रियाशील होता है। अतः मातृभाषा बच्चे की पहली उपलब्धि और सहायिका है। यही कारण है कि सभी शिक्षाशास्त्री एकमत हैं कि प्राथमिक स्तर की शिक्षा में संप्रेषण का माध्यम मातृभाषा ही होना चाहिए। प्राथमिक शिक्षण में मातृभाषा की महता को शोध द्वारा स्थापित किया जा चुका हैं। विद्यालय बच्चों के लिए ऐसा स्थान है जो कई दृष्टियों से घर से भिन्न है। विद्यालय के अपने नियम–कायदे हैं। बच्चे कुछ घंटों के लिए अपने परिवार से दूर हो जाते हैं। परंतु बच्चे अपने साथ बहुत कुछ लेकर विद्यालय आते हैं – अपनी भाषा, अपने अनुभव एवं दुनिया को देखने का अपना दृष्टिकोण आदि। इन्हीं सबका उपयोग करते हुए शिक्षक को बच्चों से आत्मीय संबंध बनाना पड़ता है ताकि विद्यालय के नवीन परिवेश में बच्चे अपनापन अनुभव करें। बच्चों के घर की भाषा और विद्यालय की भाषा के बीच

के संबंध को उसकी विविधता एवं लचीलेपन के साथ देखना अत्यंत आवश्यक है। प्रत्येक बच्चे की भाषा अपने आप में पूर्ण होती है इसलिए उसे किसी मापदंड पर आँकना उचित नहीं है।

बच्चे घर–परिवार एवं परिवेश से प्राप्त बोलचाल की भाषा के अनुभवों को लेकर ही विद्यालय आते हैं। पहली बार स्कूल में आनेवाला बच्चा शब्दों के अर्थ और उनके प्रभाव से परिचित होता है। लिपिबद्ध चिह्न और उनसे जुड़ी ध्वनियाँ बच्चों के लिए अमूर्त हैं, इसलिए पढ़ने का प्रारंभ अर्थ से ही हो और किसी उद्देश्य के लिए हो। यह उद्देश्य कहानी सुनकर, पढ़कर आनंद लेने के रूप में भी हो सकता है। धीरे–धीरे बच्चों में भाषा की लिपि से परिचित होकर अपने परिवेश में उपलब्ध लिखित भाषा को भी पढ़ने समझने की जिज्ञासा उत्पन्न होती है। भाषा शिक्षण की इस प्रक्रिया के मूल में बच्चों के बारे में यह अवधारणा है कि बच्चे दुनिया के बारे में अपनी समझ और ज्ञान का निर्माण स्वयं करते हैं। यह निर्माण किसी के सिखाए जाने या जोर जबरदस्ती से नहीं बल्कि बच्चों के स्वयं के अनुभवों और आवश्यकताओं से होता है। इसलिए बच्चों को ऐसा वातावरण मिलना जरूरी है जहाँ वे बिना किसी रोक–टोक के अपनी उत्सुकता के अनुसार अपने परिवेश की खोज–बीन कर सकें।

यही अवधारणा बच्चों के भाषिक कौशलों पर भी लागू होती है। स्कूल में आने पर बच्चे प्रायः स्वयं को बेझिझक अभिव्यक्त करने में असमर्थ पाते हैं क्योंकि जिस भाषा में वे सहज रूप से अपनी राय, अनुभव, भावनाएँ आदि व्यक्त करना चाहते हैं वह स्कूल में प्रायः स्वीकृत नहीं होती। भाषा शिक्षण को बहुभाषी संदर्भ में रखकर देखने की आवश्यकता है। कक्षा में बच्चे अलग–अलग भाषाई–सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आते हैं। कक्षा में इनकी भाषाओं का स्वागत किया जाना चाहिए और उनमें बच्चों से सहज अभिव्यक्ति क्षमता का उपयोग करते हुए हिंदी पढ़ाई जानी चाहिए। शिक्षक बहुभाषिकता की महत्ता को समझकर कक्षा में उसका उपयोग करें, तभी वह बच्चों को अपने परिवेश में स्थित सांस्कृतिक और भाषिक विविधता के प्रति संवेदनशील बना सकता है। आज बहुभाषिकता को बच्चे के व्यक्तित्व विकास के लिए संसाधन के रूप में विकसित करने की आवश्यकता है।

उद्देश्य

1. बच्चों में अपने अनुभव और विचार बताने की इच्छा और उत्सुकता जगाना;
    - बच्चे स्कूल के वातावरण में अपनापन महसूस करें।
    - वे घर की भाषा और स्कूल की भाषा में आपसी संबंध बनाते हुए उसको विस्तार दे सकें।
    - बच्चों को प्रश्न पूछने, अपनी बात कहने का भरपूर मौका मिले।
2. बच्चों में दूसरों की बात सुनने में रुचि और धैर्य पैदा करना, उनसे सुनी बात पर टिप्पणी दे पाना;
3. बच्चे द्वारा अक्षर जोड़कर पढ़ने की बजाय समझकर पढ़ना;
    - परिवेश में उपलब्ध संदर्भों, चित्रों और छपी हुई सामग्री से परिचित होने के कारण बच्चा अनुमान से पढ़ने का प्रयास कर सकेगा।
4. बच्चों द्वारा अपनी दुनिया तथा अपने पूर्वज्ञान की मदद से पाठ्यसामग्री और स्कूली परिवेश में उपलब्ध लिखित सामग्री से अर्थ ग्रहण करना, जैसे –
    - पढ़ने की प्रक्रिया को दैनिक जीवन की (स्कूल और बाहर की) ज़रूरतों से जोड़ना, जैसे–कक्षा और स्कूल में अपना नाम, अपनी मनपसंद पाठ्यसामग्री और पाठ्यपुस्तक का नाम पढ़ना।

- परिवेश में उपलब्ध छपी हुई सामग्री (चित्र और शब्द) को देखकर बच्चे संदर्भ से परिचित होने के कारण अनुमान लगाकर पढ़ने का प्रयास कर सकते हैं।

5. सुनी और पढ़ी कहानियों और कविताओं से अपने अनुभव जोड़ पाना और उसके बारे में बात करना।
   - बच्चे अपने अनुभव संसार और काल्पनिक संसार को बेझिझक और सहज ढंग से अभिव्यक्ति कर सकें।
   - सुनी हुई कहानियों को अपने शब्दों और अपने अंदाज में दूसरों को सुना सकें।

6. चित्रकारी को स्वयं की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाना
   - बच्चे स्वाभाविक अभिव्यक्ति के लिए किसी भी प्रकार का रेखांकन कर सकते हैं।

7. लिपि चिह्नों को देखकर और उनकी ध्वनियों को सुनकर और समझकर उनमें सहसंबंध बनाते हुए लिखने का प्रयास कर सकें।

कुछ प्रश्न :

- आपकी राय में कक्षा 1 व 2 के लिए भाषा शिक्षण के ये उद्देश्य क्यों ठीक हैं?
- क्या आप इस सूची में कुछ और जोड़ना चाहेंगे? तो क्या?
- उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों में से किन्हीं दो उद्देश्यों को चुनिये व बताइए कि इन उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु आप कक्षा में क्या प्रयास करेंगे?

भाषा–शिक्षण के उद्देश्य कक्षा 3 से 5

तीसरी कक्षा तक आते–आते बच्चे स्कूल से परिचित हो जाते हैं और वहाँ के वातावरण में घुलमिल जाते हैं। स्कूल का वातावरण और दूसरे बच्चों का साथ उन्हें हिंदी भाषा में निहित स्थानीय, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक विविधताओं से परिचित कराता है। इसके अतिरिक्त वे अन्य भाषाओं के प्रति संवेदनशील भी हो जाते हैं।

इस स्तर पर बच्चों की भाषा से जुड़े कौशलों की प्रकृति में गुणात्मक बदलाव आएगा। उनमें स्वतंत्र रूप से पढ़ने की आदत विकसित होगी। पढ़ी हुई सामग्री से वे संज्ञानात्मक और भावनात्मक स्तर पर जुड़ेंगे और उसके बारे में स्वतंत्र और मौलिक विचार व्यक्त कर सकेंगे। यहाँ तक आते–आते लिखना एक प्रक्रिया के रूप में प्रारंभ हो जाता है, और वे अपने विचारों को व्यवस्थित ढंग से लिखने लगते हैं।

उद्देश्य

1. बच्चों में पुस्तकों के प्रति रुचि जागृत करना–
   - पाठ्यपुस्तक की विधाओं से परिचित होना और उनसे प्रेरित होकर उन विधाओं की अन्य पुस्तकें पढ़ना।
   - मुख्य बिंदु/विचार को ढूँढ़ने के लिए विषय–सामग्री की बारीकी से जाँच करना।
   - विषय सामग्री के माध्यम से नए शब्दों के अर्थ जानने की कोशिश करना।

2. पूर्व अर्जित भाषायी कौशलों का उत्तरोत्तर विकास करना

- दूसरे के विचारों को सुनकर समझना और अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकना।
- दूसरों के विचारों को पढ़कर समझने की योग्यता का विकास करना।
- पठन के द्वारा ज्ञानार्जन एवं आनंद प्राप्ति में समर्थ बनाना।
- अध्ययन की कुशलता का विकास करना।
- स्वतंत्रता और आत्मविश्वास के साथ लिख पाना।
- मनपसंद विषय का चुनाव कर लिख सकना।
- विषयवस्तु और विचारों के प्रस्तुतीकरण में लेखन की तकनीक का विकास करना।
- दूसरों की अभिव्यक्ति को सुनकर उचित गति से शब्दों एवं वाक्यों को लिख सकना।

3. भाषा को अपने परिवेश और अपने अनुभवों को समझने का माध्यम मानना और उसका सार्थक उपयोग कर सकना।

- कक्षा में बच्चों को बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक संदर्भों से जोड़ना।
- बच्चों की कल्पनाशीलता और सृजनात्मकता को विकसित करना।
- भाषा के सौंदर्य की सराहना करने की योग्यता का विकास करना।

व्याकरण

बच्चों की भाषा में इस बात के पर्याप्त संकेत मिलते हैं कि वे अपनी भाषा का व्याकरण अच्छी तरह जानते हैं। पर व्याकरण की सचेत समझ बनाने के लिए यह आवश्यक है कि बच्चों को उसके विभिन्न पक्षों की पहचान विविध पाठों के संदर्भ में और आसपास के परिवेश से जोड़कर कराई जाए। व्याकरण की अवधारणाओं की अमूर्त परिभाषाएँ याद करने से ज्यादा महत्वपूर्ण हैं उन्हें वास्तविक संदर्भों में समझना। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यपुस्तकों के अभ्यास प्रश्न, कक्षा में शिक्षक द्वारा इस्तेमाल की जानेवाली व्यावहारिक गतिविधियाँ और युक्तियाँ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। व्याकरण के पक्षों की समझ चरणबद्ध क्रम में विकसित की जा सकती है : पहला चरण पहचान का है और दूसरा चरण प्रयोग का है।

उदाहरण 1 : कक्षा 3 में नामवाले शब्दों के बारे में बच्चों को पाठ और कक्षा के परिवेश के संदर्भ में (जैसे, किताब, रोटी, मेज, पंखा, रसीद, रिबन, जूता, दीवार, छत आदि) बताया जा सकता है। कक्षा 4 में बच्चे ऐसे शब्दों का वाक्य में प्रयोग कर सकते हैं या किसी बच्चे द्वारा बनाई गई कहानी, घटना आदि में नामवाले शब्द ढूँढ़ सकते हैं। कक्षा 5 में नामवाले शब्दों को संज्ञा का नाम दिया जा सकता है और कक्षा 6 में बच्चों को संज्ञा के भेदों के बारे में बताया जा सकता है।

उदाहरण 2 : पाठ्यपुस्तक के अभ्यास–प्रश्नों में या कक्षा में शिक्षक द्वारा एक प्रकार के शब्दों की सूची दी जा सकती है जिसका अवलोकन करके बच्चे उन में होनेवाले बदलावों को पहचान सकते हैं– (एक) गेंद– (तीन) गेंदे – (एक) गिलास– (पाँच) गिलास (एक) सड़क– (कई) सड़कें– (एक) भैंस – (कई) भैंसें। बच्चों द्वारा इन परिवर्तनों को पकड़ पाना भाषा के नियमबद्ध स्वरूप को समझ पाने की दिशा में पहला कदम है।

कुछ प्रश्न :

1. रमेश का कहना है कि बच्चे जब स्कूल आते हैं तो उनको व्याकरण का पर्याप्त ज्ञान होता है क्या आप रमेश की बात से सहमत है? हाँ/नहीं अपने उत्तर का कारण भी दीजिए।

2. निम्नलिखित कथनों के बारे में आपकी क्या राय है?

   - बच्चों को व्याकरण पढ़ाना तब शुरु करना चाहिए जब वे भाषा का प्रयोग (पढ़ने में, लिखने में, बोलन में) धड़ल्ले से करने लग जाय।
   - कक्षा में शुरुआत बच्चों की मातृभाषा से ही होनी चाहिए।

3. क्या कक्षा पाँच तक आते–आते बच्चे उपर्युक्त वर्णित उद्‌देश्यों के अनुसार सीख पाते हैं? कितना सीख पाते है? और कितना नहीं? और किस वजह से नहीं सीख पाते?

अध्याय – 4

भाषा की कक्षा कैसी हो?

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्‌देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
    - भाषा की कक्षा कैसी हो? कुछ उदाहरण
    - उदाहरण–1 सार्थक और सक्रिय लिखित माहौल विकसित करने के प्रयास
    - कक्षा में लिखित परिवेश से जुड़े हुए कुछ तथ्य
        - उपस्थिति चार्ट
        - सुबह का संदेश या आज का संदेश
        - शब्द दीवार
        - कैलेण्डर
        - पहेली का कोना
        - कविता का कोना
        - कहानी
        - उदाहरण–2 मुझे क्या मालूम हुआ?

परिचय :

भाषा की अच्छी कक्षा में क्या–क्या हो? यह एक विचारणीय मुद्‌दा है। अधिकांशतः भाषा की कक्षाएँ पाठ पढ़ाकर उसके प्रश्न–उत्तर लिखने तक ही सीमित रहती हैं। पूर्व अध्याय में हमने भाषा–शिक्षण के उद्‌देश्यों के बारे में पढ़ा है और आप यह समझ सकते हैं कि पाठ पढ़ना व उसके प्रश्न उत्तर करना भाषा के विभिन्न उद्‌देश्यों को प्राप्त करने में कितनी मदद करते हैं अथवा नहीं करते हैं। यह जरुरी है कि भाषा की कक्षा को पाठ्‌यपुस्तक व प्रश्न–उत्तर तक सीमित न रखा जाए वरन् उसे बच्चों के आस–पास की दुनिया, उनके अपने अनुभवों से जोड़ा जाय। साथ ही उनको सोचने, अपनी सोच को व्यक्त करने, अपने शब्दों को अर्थ देने के मौके उपलब्ध कराए जाएँ।

लेकिन यह कैसे हो? यही समझने के लिए इस अध्याय में दो लेख हैं। पहला लेख प्रारंभिक साक्षरता परियोजना के तहत बच्चों को पढ़ना–लिखना सिखाने हेतु जो विभिन्न प्रयास किये गये उस बारे में है। लेख में यह बताया गया है कि इस परियोजना के तहत किये गये इन प्रयासों के पीछे क्या नजरिया था? व पूरे प्रयास के दौरान इससे जुड़े समूह के क्या अनुभव रहे? यह लेख किसी कक्षा–विशेष के दौरान क्या हुआ? इस बारे में बात नहीं करता बल्कि पूरे कार्यक्रम के दौरान किन–किन बिन्दुओं पर फोकस किया गया व उससे पढ़ना–लिखना सीखने में बच्चों को कैसे मदद मिली इस बारे में हुए अनुभवों को आपके समक्ष रखता है। वहीं दूसरा लेख एक कक्षा मे शिक्षक ने बच्चों के साथ कैसे कार्य किया? उस बारे में है।

उद्‌देश्य :

- भाषा की अच्छी कक्षा कैसी हो? के बारे में समझ बना पाएँगे।
- भाषा की अच्छी कक्षा में क्या–क्या हो? के बारे में समझ बना पाएँगे।
- भाषा की कक्षा में बच्चों की भूमिका कैसी हो? को समझ पाएँगे।
- भाषा की कक्षा में शिक्षक की क्या भूमिका हो? की समझ पाएँगे।

भाषा की कक्षा कैसी हो? कुछ उदाहरण

उदाहरण : 1

सार्थक और सक्रिय लिखित माहौल विकसित करने के प्रयास

बच्चे सबसे अधिक लिखना–पढ़ना तब सीखते हैं, जब इन्हें अर्थपूर्ण बनाया जाए और उनके जीवन से प्राप्त अनुभवों और शब्दों के साथ जोड़ा जाए भाषा। सीखने–सिखाने की वर्तमान सोच के पीछे यह अवधारणा है कि बच्चे दुनिया के बारे में अपनी समझ और ज्ञान का निर्माण स्वयं करते हैं। यह निर्माण किसी के सिखाए जाने से नहीं, बल्कि बच्चों के खुद के अनुभवों और सक्रिय खोजबीन द्वारा होता है।

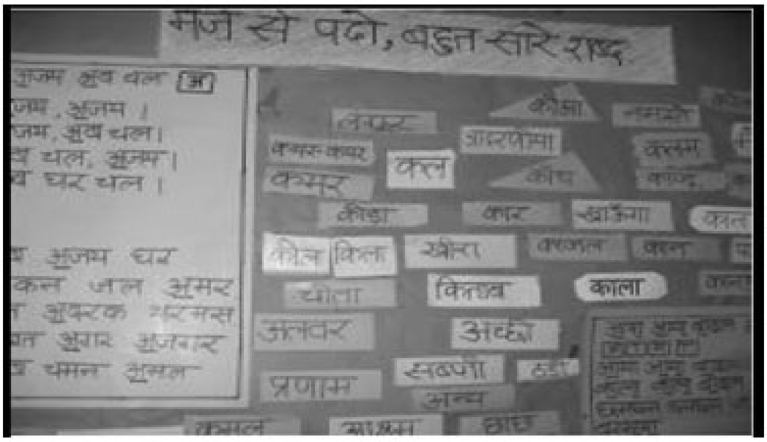

यह माना जाता है कि बच्चे अपने परिवेश से प्राप्त किए गए पूर्व ज्ञान का उपयोग करके लिखित सामग्री से अर्थ ग्रहण करने की कोशिश करते हैं। इस अवधारणा के पीछे यह भी सोच है कि बच्चे अर्थ और समझ बनाने के कुछ सामाजिक नियम घर के परिवेश से प्राप्त करते हैं और फिर इन्हें स्कूल के अनुभवों पर लागू करते हैं। इस सोच के अन्तर्गत एक बच्चे की पृष्ठभूमि, संदर्भ और उसके अनुभव उसके ज्ञान और समझ निर्माण का आधार बन जाते हैं। यही कारण है कि कक्षा के भीतर विभिन्न गतिविधियाँ करवाने की आवश्यकता होती है जो कि बच्चों की विभिन्न प्रकार की भाषा, सोच और पूर्व ज्ञान को जगह दे सकें।

अक्सर यह देखा गया है कि बच्चे लिखने–पढ़ने की प्रक्रिया को केवल पाठ्यक्रम से ही जोड़ लेते हैं और इनसे किसी प्रकार का सार्थक रिश्ता नहीं बना पाते। इसलिए यह बेहद ज़रूरी हो जाता है कि बच्चों को कक्षा के अन्दर मौके देकर उनमें यह विश्वास जगाना कि वे बिना किसी झिझक के अपनी बातें, अपनी कल्पनाएँ, अपनी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी के अनुभव, अपनी चित्रित अभिव्यक्ति को लिखकर, पढ़कर या डिस्प्ले पर लगाकर सबको बता सकते हैं।

लिखित भाषा के समृद्ध परिवेश से अभिप्राय है कि बच्चों को लिखित भाषा के माहौल से घेर लेना, ताकि वे भाषा के लिखित रूप का प्रयोग विभिन्न तरीकों से कर पाएँ। साथ ही, उन्हें कक्षा में अनेक प्रकार की लिखित सामग्री को पढ़ने की स्वतंत्रता प्रदान करना, ताकि वे भयहीन वातावरण में साक्षरता अर्जित कर पाएँ। इसके अलावा कक्षा में विभिन्न गतिविधियों द्वारा बच्चों की घरेलू भाषा को कक्षा में जगह देना और धीरे–धीरे उन्हें शाला की भाषा की ओर ले जाना। कई बच्चों को लिखित भाषा के साथ पहला सम्पर्क कक्षा में प्रवेश होने के बाद ही होता है, विशेषतौर से वे बच्चे, जिनके घरों में लिखने–पढ़ने के मौके नहीं मिलते। कक्षा में लिखित माहौल विकसित करके इन बच्चों के अनुभवों और पूर्व ज्ञान को कक्षा में स्वीकृति मिले ताकि वे सकारात्मक और भयहीन तरीकों से लिखना–पढ़ना सीखें।

कक्षा में लिखित भाषा के समृद्ध परिवेश को विकसित करने के उद्‌देश्य–

- कक्षा के भीतर लिखित माहौल उत्पन्न करना ताकि बच्चे लिखित शब्दों का उपयोग करके उनसे दोस्ती कर सकें।
- लिखित परिवेश के द्वारा बच्चों को पढ़ने–लिखने के अनेक मौके प्रदान करना और इनके द्वारा कक्षा की विभिन्नता को संबोधित करना।
- लिखित शब्दों को बच्चों के आपसी संप्रेषण का एक माध्यम बनाना।
- लिखित शब्दों का बच्चों के जीवन से रिश्ता जोड़ना ताकि वे उनके लिए मायने रखें।
- लिखित परिवेश द्वारा पाठ्‌यक्रम से जुड़े सहयोगी तथ्य प्रदर्शित करके पाठ्‌यक्रम को बच्चों के लिए सार्थक बनाने का प्रयास करना।

कक्षा में लिखित परिवेश से जुड़े हुए कुछ तथ्य

इन तथ्यों के पीछे यह सोच है कि बच्चों को ऐसी लिखित सामग्री से घेर लिया जाए, जो उनके लिए दिलचस्प और अर्थपूर्ण हो, ताकि, बच्चे सक्रिय रूप से लिखने–पढ़ने की प्रक्रिया से जुड़ें। इसके लिए उपयुक्त लिखित तथ्यों का चयन किया गया, और फिर उनसे जुड़ी गतिविधियाँ, खेल और वर्कशीट बनाई गईं, ताकि बच्चे सक्रिय तरीकों से लिखित तथ्यों से जुड़ें।

निम्नलिखित तथ्यों का प्रयोग कक्षाओं में किया गया–

- उपस्थिति चार्ट
- सुबह का संदेश या आज का संदेश
- शब्द–दीवार
- अक्षर चार्ट
- कैलेण्डर
- पहेली का कोना
- कविता का कोना
- कहानी
- शीर्षक के साथ और उनकी आँख के स्तर पर बच्चों के कार्य का स्पष्ट प्रदर्शन
- दीवार पर मुक्त लेखन के लिए जगह
- कक्षा में विभिन्न प्रस्तुतियों के स्पष्ट शीर्षक

उपर्युक्त में से कुछ तथ्यों को विस्तार से नीचे प्रस्तुत किया गया हैः–

उपस्थिति चार्ट

नन्हें बच्चे अक्सर सबसे पहले अपना नाम लिखना सीखते हैं। जिन कक्षाओं में बच्चों की संख्या सीमित थी, वहाँ पर इस प्रक्रिया को कक्षा में बच्चों की उपस्थिति से जोड़ा गया। 'उपस्थिति रजिस्टर' की जगह बच्चों के नाम, एक चार्ट में क्रम में लिखे गए। साथ ही ऊपर एक पंक्ति में तिथियाँ लिखी गईं। इस चार्ट को बच्चों की पहुँच के अनुसार कक्षा की दीवार पर लगाया गया। सबसे पहला नाम कक्षा के शिक्षक का लिखा गया। जैसे–जैसे बच्चे अपना नाम पढ़ना सीखते गए। वे अपनी उपस्थिति चार्ट में स्वयं लगाने लगे। बच्चे एक–दूसरे की सहायता भी करने लगे। कुछ ही दिनों में लगभग सभी बच्चे सबके नामों से परिचित हो गए। अब बच्चों को प्रोत्साहित किया गया कि वे अपने नाम के सामने रोज़ अपनी कोई छोटी बात लिखें या चित्र बनाएँ। शिक्षक भी लिखने लगे। इस प्रक्रिया से बच्चे बहुत उत्साहित हुए। किसी ने लिखा, ''आज मैं आई हूँ''; तो किसी और ने लिखा, ''मैंने बूट पैने हैं''। यहाँ पर गलतियों को सुधारा नहीं गया ताकि बच्चे खुलकर इस वास्तविक, लिखित संप्रेषण में भाग ले सकें।

सुबह का संदेश या आज का संदेश

श्यामपट्ट के एक कोने में अध्यापिका बच्चों के लिए एक संदेश हर रोज़ लिखती है। इस तरह की छोटी बातें, जो वास्तविक हों और बच्चों को प्रतिदिन पढ़ने के लिए आकर्षित करें। जैसे, ''आज मैंने नीली सलवार पहनी है'' या ''आज मैंने तीन बसें देखीं''। हमने पाया कि जिन कक्षाओं में इस गतिविधि को नियमित तरीके से किया जाता है, वहाँ पर बच्चे हर सुबह कक्षा में प्रवेश करने के बाद खूब उत्साहित होकर शिक्षक के लिखित संदेश की प्रतीक्षा करने लगते हैं और फिर तुरन्त ही एक–दूसरे की मदद से इसको पढ़ने के प्रयास में जुट जाते हैं। धीरे–धीरे बच्चों को भी अपनी छोटी–छोटी बातें लिखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और यह कोना कक्षा में वास्तविक लिखित संवाद का एक कोना बनने लगता है।

शब्द–दीवार

कक्षा में शब्द चार्ट पर या दीवार पर चिपकाए जाते हैं। इसका उद्देश्य है कि ये शब्द बच्चों की दृष्टि में रहें ताकि वे इनसे घुल–मिल जाएँ और दोस्ती बना लें। इसके लिए इन्हें केवल दीवार पर लिखना ही काफ़ी नहीं है। इन शब्दों के प्रयोग के लिए कई गतिविधियाँ, शब्द खेल और वर्कशीट तैयार की गई हैं।

हर कक्षा में शब्दों की तीन श्रेणियाँ होती हैं–

- पाठ्यक्रम की विषय–वस्तु और हिन्दी पाठ्यपुस्तक से लिए गए शब्द,
- स्तर 1 के बच्चों के लिए कुछ सरल शब्द,
- बच्चों की असली दुनिया से जुड़े हुए शब्द जो बच्चों से बातचीत के ज़रिए कक्षा में उपलब्ध होते हैं।

ये 'शब्द दीवारें' बच्चों के लिए शब्द देखकर सीखने की प्रक्रिया में सहयोगी ढाँचे का रूप ले लेतीं हैं। निरन्तर रूप से, समय–समय पर नए शब्दों को शब्द–दीवार में प्रदर्शित किया जाता है और बच्चों द्वारा इनका प्रयोग विभिन्न गतिविधियों से जोड़कर भी करवाया जाता है। इन शब्द–दीवारों में बच्चों की घरेलू भाषाओं के कुछ शब्दों को भी शामिल किया जाता है ताकि बच्चों के लिए स्कूल और घर का फ़ासला कुछ कम हो और उन्हें कक्षा में स्वीकृति का अहसास मिले। शब्द–दीवार बच्चों और शिक्षकों, दोनों को फायदेमन्द लगी बल्कि कुछ कक्षाओं में, आधी छुट्टी के समय बच्चे स्वयं ही इन शब्द–दीवारों से जुड़े खेल दिलचस्पी से खेलने लगे थे।

कैलेण्डर

बच्चों द्वारा बनाए गए मासिक कैलेण्डर को कक्षा में लगाया जाता है और फिर उसके साथ स्पष्ट शब्दों में कैलेण्डर से जुड़े कुछ निर्देश या प्रश्न लिखे जाते हैं। जैसे बच्चों को किसी घटना से संबंधित दिन पहचानने के लिए कहा जाता है या उपस्थिति चार्ट से जुड़े प्रश्न लिखे जाते हैं, जैसे महीने में कौन–से दिनों में सब से कम बच्चे उपस्थित थे? इत्यादि। इनको पढ़कर बच्चे कैलेण्डर में से इनके जवाब खोजकर लिखते हैं। कुछ कक्षाओं में शिक्षकों ने कैलेण्डर को मौसम चार्ट से जोड़ा था। इस गतिविधि के दौरान प्रत्येक दिन के सामने उस दिन के मौसम का उपयुक्त, पूर्व निर्धारित चिह्न, बच्चों द्वारा बनाया जाता है। इन्हें गणित के प्रदर्शित लिखित प्रश्नों में शामिल किया जाता है और इन प्रश्नों के जवाब बच्चे कैलेण्डर से खोजकर लिखते हैं। बड़ी कक्षाओं में बच्चों को इस कैलेण्डर से जुड़े सवाल स्वयं लिखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और बाकी बच्चे इनके जवाब ढूँढ़ते हैं। इस तरह कैलेण्डर को कक्षा में वास्तविक और सक्रिय लिखित संप्रेषण का एक साधन बनाया जाता है। कैलेण्डर के पास ही वर्ष के, महीनों के अथवा सप्ताह के दिनों के नामों को यदि शब्द–दीवार में लगाया जाए, तो ये नन्हें बच्चों के लिए फायदेमंद साबित होते हैं।

पहेली का कोना

पाठ्य–पुस्तक से संबंधित पहेलियाँ 'पहेली के कोने' में लिखी गईं और इसके पास बच्चों के जवाब के लिए एक चार्ट लगाया गया। इनके जवाब बच्चे पाठ में से खोजकर लिखते थे। कुछ समय बाद बच्चों को अपनी पहेलियाँ बनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इसके लिए बच्चों को पहेली का एक सरल ढाँचा दिया गया। सबसे पहले कुछ पहेलियाँ पूरी कक्षा के संग श्यामपट्ट पर बच्चों की भागीदारी से निर्मित की गईं। जब बच्चे पहेली के ढाँचे से परिचित हो गए, तब उन्हें अपनी व्यक्तिगत पहेलियाँ बनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया और इन्हें कक्षा में प्रदर्शित किया गया। यह एक बहुत लोकप्रिय गतिविधि थी और बच्चों ने बहुत सारी पहेलियाँ बनाईं और एक–दूसरे की पहेलियों के जवाब ढूँढ़ने में व्यस्त हो गए।

कुछ पहेलियाँ बच्चों की घरेलू भाषा में थीं और कुछ पारम्परिक शैली में। इस तरह बच्चों की रोज़मर्रा की भाषा और तौर तरीकों को कक्षा में एक जगह मिली।

हमने पाया कि वे बच्चे जो अब तक कक्षा की प्रक्रिया में भाग नहीं ले रहे थे, अब कुछ हद तक भाग लेने लगे। यह वास्तव में उनके लिए एक बहुत बड़ा कदम था जिसके लिए उन्हें कक्षा में स्वीकृति मिलनी ज़रूरी थी, ताकि वे खुलकर लिखें। एक प्रस्ताव है कि बच्चों की पहेलियों का संकलन कक्षा की पहेली पुस्तक के रूप में बनाया जाए।

कविता का कोना

बच्चे कविताओं की दुनिया में खुशी से प्रवेश करते हैं और सभी बच्चे प्रदर्शित कविताओं को थोड़े ही समय में याद कर लेते हैं और फिर नई कविताएँ चाहते हैं। कुछ चुनी हुई रोचक कविताओं को बड़े कागज़ पर फोटो–कॉपी करके तीन–तीन रुपये में पोस्टर बन गए। इन्हें 'कविता के कोने' में लगाया गया। समय–समय पर बच्चों को ये कविताएँ पढ़कर सुनाई जाती हैं और फिर बच्चे अभिनय के साथ उनका उच्चारण भी करते हैं। हमारा अनुभव रहा कि कविता की लय और शब्दावली हर बच्चे को आकर्षित करती है। कविता के ढाँचे को बच्चे आनन्द से ग्रहण कर लेते हैं। फिर बच्चों को इन कविताओं के ढाँचे के आधार पर अपनी कविताएँ लिखने के लिए भी प्रोत्साहित किया गया। चूँकि यह एक नई गतिविधि है, पहली बार पूरी कक्षा की भागीदारी से एक कविता का लेखन श्यामपट्ट पर करवाया गया लेकिन जल्द ही बच्चे अपनी व्यक्तिगत कविताएँ लिखने लगे। बच्चों की कविताएँ कक्षा के भीतर प्रदर्शित की गईं और समय–समय पर इन्हें बच्चों द्वारा पढ़वाया गया। कुछ बच्चे केवल एक ही वाक्य लिख पाए परन्तु धीरे–धीरे अपने साथियों की कविताएँ देख–देखकर इनकी कविताओं में और वाक्य जुड़ने लगे। कभी बच्चों को तुकबन्दी वाले शब्द दिए गए और फिर उन्हें कविता लिखने के लिए उनसे जुड़ा एक ढाँचा दिया गया। कविता से जुड़ी गतिविधियाँ भी करवाई जाती हैं, जैसे– कविता के चित्र बनाना या शब्द खेल खेलना।

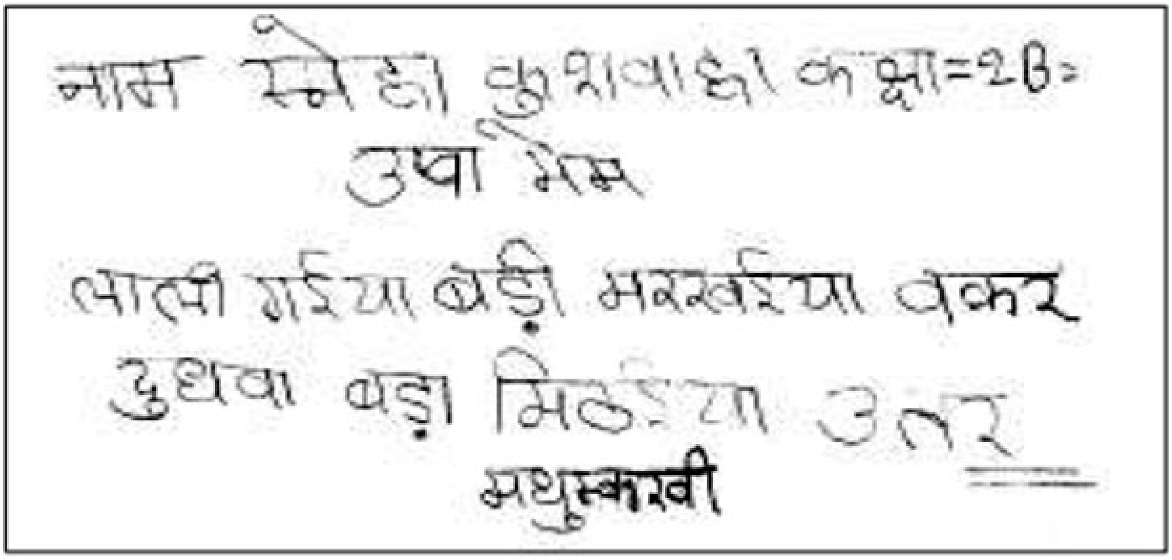

कुछ प्रश्न :

- ''यहाँ गलतियों को सुधारा नहीं गया ताकि बच्चे खुलकर इस वास्तविक लिखित संप्रेषण में भाग ले सकें।'' ऐसा क्यों किया गया है? इस संदर्भ में अपने विचार लिखिये।
- कक्षा दो के बच्चों के लिए यदि आप को शब्द चार्ट बनाने हों तो आप उसके लिए किस तरह के शब्दों को चुनेंगे? व क्यों?
- कक्षा के बच्चों से बातचीत करें और जानने का प्रयास करें कि उन्हें कौन सी पहेलियाँ,कविताएँ, कहानियाँ आती है? उस बातचीत के आपने अनुभव को संक्षिप्त में लिखिये।

अगर आए हो तो मन की बात लिखो

12.4.07 **नाम = सुशील** **कक्षा = IV A**

मन करता है
आसमान में
सेर करूँ

मन करता है।
टीचर बनकर
बच्चों को पढ़ाउँ

मन करता है।
डाक्टर बनकर
बच्चों का ईलाज करूँ

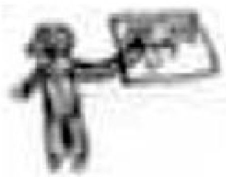

मन करता है।
चित्रकार बनकर
चित्र बनाउँ

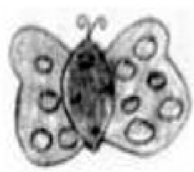

मन करता है।
तितली बनकर
दूर–दूर शेर करूँ

लगभग सभी बच्चे कविताएँ और कहानियाँ बहुत पसंद करते हैं और मौका मिलने पर खुलकर इनसे जुड़ी हुई अपनी बातें विस्तृत रूप से प्रकट करते हैं। इसके लिए कविताओं और कहानियों के चयन की ओर विशेष ध्यान दिया जाना अनिवार्य है ताकि चयनित कहानियाँ और कविताएँ बच्चों के लिए दिलचस्प, आनन्दमय और उपयुक्त हों। हमारी यह समझ है कि बच्चों की मनपसंद कविता और कहानी में उनके अन्दरूनी संसार यानी उनकी कल्पना व अनुभव से रचित संसार को छूने का जादू है और इनसे जुड़ी बातचीत के ज़रिए जल्द ही वे अपनी

काल्पनिक और वास्तविक दुनिया को कक्षा के भीतर ले आते हैं। कहानियाँ, कविताएँ और अन्य लेख बच्चों के लिए कक्षा के भीतर लेखन का सार्थक और सक्रिय माहौल उत्पन्न कर सकते हैं।

कहानी

हर कक्षा में कहानी पढ़ने के लिए समय निर्धारित किया जाता है। बच्चों को कहानी पढ़कर सुनाई जाती है। बच्चे कहानी सुनने या पढ़ने से पहले कहानी से जुड़ी बातचीत करते हैं। वे कहानी के चित्र देखकर अनुमान लगाते हैं कि कहानी में क्या होगा? इस तरह की पूर्व–पठन प्रक्रिया की एक अहम् भूमिका मानी जाती है क्योंकि इसके द्वारा बच्चों का ध्यान केन्द्रित होता है और वे गहराई से कहानी से जुड़ते हैं। बच्चों को कहानी की पुस्तक पढ़ने के लिए भी दी जाती है। इसके साथ, बच्चों को प्रतिक्रिया के लिए हर कक्षा में एक चार्ट लगाया गया है जिसे हमने 'प्रतिक्रिया चार्ट' नाम दिया है। इस पर बच्चे कहानी का शीर्षक और कहानी की बातें अपनी कक्षा के साथियों के साथ लिखकर बाँटते हैं। इस गतिविधि से जुड़ने में बच्चों को काफी समय लगा लेकिन अन्ततः यह बच्चों के लिए एक लोकप्रिय गतिविधि साबित हुई।

कक्षा के लिखित माहौल को सक्रिय और अर्थपूर्ण बनाने में कहानी की अहम भूमिका होती है। कहानियों का बच्चों से एक गहरा जुड़ाव है। कहानियाँ प्रत्येक बच्चे के पूर्व अनुभव और व्यक्तिगत कथन को छूती हैं और बच्चों की अन्दरूनी दुनिया की झलक दिखलाती हैं। बच्चों को वास्तविक और काल्पनिक कहानी बतलाई जाती है या पढ़कर सुनाई जाती है तो उस कहानी से जुड़े उनके अनुभव उनकी व्यक्तिगत कहानियों का स्वरूप ले लेते हैं। बच्चे खुलकर कहानी से जुड़ी हुई अपनी बातों को पेश करने लगते हैं, पहले बोलकर और चित्र बनाकर, फिर धीरे–धीरे लिखकर।

बच्चों द्वारा लिखी कहानियों और लेखों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं–

दानी पेड़ की कहानी सुनने के बाद कक्षा 3 के छात्रों ने इस कहानी से जुड़े अपने भाव और अपने अनुभव लिखकर और चित्र बनाकर व्यक्त किए।

12.4.07 **नाम पूजा कुमारी** **कक्षा IV A**

मेरे पेड़ को चिट्ठी

प्यारे दोस्त

मेरा नाम पूजा कुमारी में कक्षा IV A मै। पढ़ती हूँ। मैं आपसे दोस्ती करना चाहती हूँ

आप मुझे अच्छे लगते है। क्योंकि आप मुझे फल देते हो छाया और पतीयाँ देते है और मेरी कक्षा भी पेड़ से प्यार करती है और पेड़ हवा दते है पेड़ को मै बहुत प्यार करती हू फिर मेरी मम्मी आपके पेड़ से लकड़ी ला के मेरी मम्मी खाना बनाती है

और हम स्कुल में अपनी मैडम को लकड़ी का देते है। आप हमको हरीयाली देते हो

आपकी दोस्त

पूजा कुमारी

नाम– शजास **कक्षा IV D**

जब मै खेलता रहता हु। तो फिर
मेरे पापा को गुस्सा आ जाता है।
तो फिर मेरे पापा कहते है। की
खेल तो बाद में भी खेल सकते
हो जब पढ़ोगे तो तभी जीवन
में आगे बढ़ोगे तुम पेपर में फेल
आओ में तो फिर पीछे ही रह
जाओगे जब में पेपर में फेल आता

हु तो फिर मेरे पापा बहुत मारते है। तो फिर में अपने पापा से नाराज हो जाता हु फिर मेरी मम्मी मुझे मनाने आती है। तो फिर मेरी मम्मी मुझे समझाती है की जब पढ़ते है। तो फिर जब पास हो जाते है। तो फिर इसमें गुस्सा होने कि किया बात है। तब से में पेपर के समय खेलता नहीं हूँ जब से में जादा नही खेलता हुँ।

रूसी और पूसी की कहानी अध्यापिका ने पूरी कक्षा को बड़े हाव–भाव के साथ पढ़कर सुनाई। इस कहानी में एक बिल्ली, जिसका नाम पूसी था, रूसी से नाराज़ हो जाती है। अध्यापिका ने पूसी के व्यवहार पर बच्चों से प्रतिक्रिया माँगी। कहानी की पूसी से जुड़कर, बातचीत 'नाराज़गी' के विषय पर पहुँची। बातचीत के दौरान बच्चों ने अपनी सोच, अपने अनुभव और उनसे जुड़ी भावनाएँ प्रकट कीं और फिर लिखकर व चित्रों द्वारा इन्हें प्रस्तुत किया। कुछ बच्चे एक या दो वाक्य ही लिख पाते हैं, तो कुछ और बच्चे केवल चित्र ही बनाते हैं; लेकिन इन लेखों एवं चित्रों में बच्चों के वास्तविक अनुभवों की और उनके अन्दरूनी संसार की झलक मिलती है, और हर लेख की पृथकता दिखलाई देती है। बच्चों के लेख कक्षा में प्रदर्शित किए जाते हैं। वे एक–दूसरे को और गहराई से पहचानने लगते हैं। वे अपने साथियों की सोच और क्षमताओं से प्रभावित होते हैं, और इन प्रक्रियाओं के दौरान उनके स्वयं के लेखों में धीरे–धीरे सुधार आने लगता है। ज्यों ही वे लिखित शब्दों द्वारा अपनी सोच को पेश करते हैं, वे लिखित शब्दों से घुल–मिल कर, सार्थक रिश्ते बनाने लगते हैं और इस प्रकार से लिखित संसार के साथ एक गहरा रिश्ता कायम करने लगते हैं।

प्रारंभिक साक्षरता परियोजना (ई.एल.पी.), का निरन्तर प्रयास रहता है, कक्षा के भीतर समृद्ध लिखित माहौल विकसित करके बच्चों को वास्तविक और सक्रिय तरीकों से वर्ण, अक्षर, शब्द और लेख से दोस्ती बनाने के कई मौके प्रदान करना, ताकि लिखित संसार उनके लिए मायने रखे और उनकी लिखने–पढ़ने की क्षमताएँ सुदृढ़ बनें।

कुछ प्रश्न :

- इस लेख में दी गई गतिविधियों में से किन्हीं दो गतिविधियों को बच्चों के साथ कीजिए और अपने अनुभव लिखिए–

अपने अनुभव आप इन बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए लिख सकते हैं–

1. बच्चों की संख्या
2. बच्चों की कक्षा
3. आपकी योजना की तैयारी
4. बच्चों की प्रतिक्रियाएँ क्या रहीं?
5. आपने बच्चों को कैसे प्रोत्साहित किया या बच्चों को अभिव्यक्ति के मौके कैसे उपलब्ध कराये।
6. क्या बच्चों को मज़ा आया या उनकी कोई ऐसी प्रतिक्रिया जिसने आपको आश्चर्यचकित किया हो ?

- प्रारंभिक साक्षरता परियोजना (ई.एल.पी.), दिल्ली महानगर पालिका के सहयोग और सर रतन टाटा ट्रस्ट की वित्तीय सहायता से शुरू किया गया एक प्रयास है। परियोजना का कार्य दिल्ली महानगर पालिका के कुछ विद्यालयों में जुलाई 2006 को शुरू किया गया था।

उदाहरण : 2 मुझे क्या मालूम हुआ?

इधर एक शिक्षिका और उसकी पहली, दूसरी और तीसरी कक्षा के बच्चों के बीच हुई कुछ चित्रों पर बातचीत का कुछ अंश लिखा गया है–

मैंने बच्चों से कहा, ''कक्षा पहली, दूसरी और तीसरी के तीन–तीन दोस्त मेरे पास आओ।''

फिर मैंने 9–9 बच्चों को आठ टोलियों में बिठाया और कहा, ''कक्षा एक के बच्चे खुशी–खुशी किताब निकालें। सभी बच्चे इस किताब का मुख पृष्ठ देखें।'

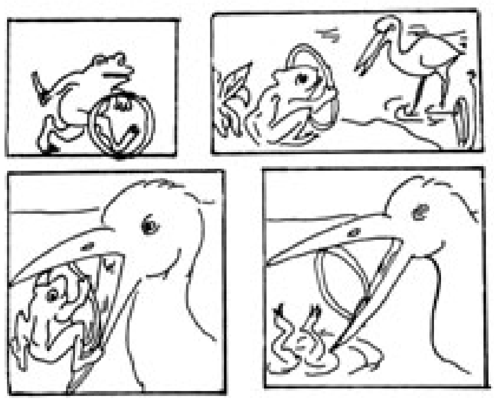

मैंने अपनी किताब को दिखाते हुए कहा, ''इस चित्र में कौन है?'' (मैंने ऊँगली रखकर पूछा)

– ''मेंढक है।''

''मेंढक के दोनों हाथों में क्या है?''

– ''एक हाथ में लकड़ी है।''

– ''दूसरा हाथ खाली है।''

– ''दूसरे हाथ में कुछ नहीं है।''

''मेंढक क्या कर रहा है?''

– ''चक्का चला रहा है।''

अब चित्र को देखो और बताओ कौन–कौन है?

– ''मेंढक और बगुला है।''

''दोनों क्या कर रहे हैं?''

– ''बातें कर रहे हैं।''

– ''बैठे हैं।''

''मेंढक बगुले से क्या बोल रहा होगा?''

– ''तुम्हारी टर्र–टर्र मुझे अच्छी लगती है।''

– ''तुम मुझे अच्छे लगते हो?''

– ''तुम क्या कर रहे हो?''

– ''मैं तुमको खाऊँगा।''

''मेंढक क्या बोला होगा?''

– ''मुझे अभी मत खाओ।''

– ''मैं चक्का चला रहा हूँ।''

अब चित्र को देखो, बगुले ने क्या किया?

– ''मेंढक को पकड़ा।''

– ''चक्के को पकड़ा।''

''मेंढक ने क्या किया?''

– ''मेंढक ने चक्का पकड़ाया।''

– ''बगुले को चक्का पकड़ाया।''

अब इस चित्र को देखो और बताओ, मेंढक ने क्या किया?

– ''वह नदी में कूदा।''

– ''नदी में कूदकर जान बचाई।''

''बगुले का मुँह क्यों खुला रहा?''

– ''उसने चक्का पकड़ लिया है।''

''इसके बाद क्या हुआ होगा?''

– ''मेंढक भाग गया होगा।''

''क्या बगुले का मुँह खुला ही रहा होगा?''

– ''बगुले ने सिर को झटककर चक्का फैंका होगा।''

– ''चक्का निकाल दिया होगा।''

''अच्छा कहानी सुनोगे?'' सारे बच्चों ने ज़ोर से कहा, ''हाँ सुनेंगे।''

''ठीक है तो तुम चित्रों को देखना, मैं कहानी सुनाना शुरू करता हूँ– एक मेंढक उछलता–कूदता जा रहा था, जाते–जाते उसे एक चक्का दिखा। उसने चक्का उठाया और पास में पड़ी लकड़ी उठाई। अब एक हाथ में लकड़ी और दूसरे हाथ से चक्का चलाया। जब चक्का रुकने लगता, तो लकड़ी से धक्का लगाता जाता।

इस तरह चलते–चलते वह नदी के किनारे पहुँचा ही था कि एक बगुले ने उसे देखा और कहा– मैं तुम्हें खाऊँगा।

मेंढक बोला– अभी मैं चक्का चला रहा हूँ। थोड़ी देर बाद खा लेना।

बगुला बोला– नहीं, मैं तुम्हें अभी खाता हूँ। और उसने अपना मुँह खोला। किन्तु मेंढक ने झट से बगुले के मुँह में चक्का पकड़ाया और पानी में कूद गया।

अच्छा, अब आगे क्या हुआ होगा? तुम लोग बताओ।''

कुछ बच्चों ने कहा, ''मेंढक भाग गया और कुछ ने कहा बगुले का मुँह खुला रह गया।''

''अच्छा तुम बताओ आगे क्या हुआ होगा?'' मैंने फिर पूछा। इस बीच कक्षा में अजीब शोर मचा हुआ था।

मैंने दोनों हाथ ऊपर करके पंजों को गोल–गोल घुमाते हुए कहा, ''मेरे जैसे करो।''

बच्चों ने मुझे देखा और मेरी तरह करने लगे। कुछ देर बाद हाथों को नीचे करके तीन तालियाँ बजाईं। सारे बच्चों ने भी ऐसा किया। यह अभिनय एक बार और दोहराया। पूरी कक्षा शांत हो गई।

मैंने अपना सवाल फिर दोहराया। मेंढक नदी में कूद गया और बगुले का मुँह खुला रह गया, उसके बाद क्या हुआ होगा? सब लोग बारी–बारी बताओ?

सभी बच्चों ने बारी–बारी बताया। दस बच्चों ने कहा– मेंढक कूदकर भाग गया और बगुले का मुँह खुला रह गया। आठ बच्चों ने कहा– मेंढक नदी में कूदा और बगुले ने गर्दन को झटका देकर चक्का फैंका/निकाला। बारह बच्चों ने कहा– बगुले ने सिर को झटका दिया तो चक्का गले में अटक गया/पहन लिया।

इन्हीं बच्चों से मैंने पूछा, ''अच्छा, बगुले ने चक्का पहनने के बाद क्या किया होगा?'' चार बच्चों ने कहा– बगुले ने पैर से चक्का निकाला होगा। आठ बच्चों ने कहा– चक्का पहने–पहने घूमता रहा होगा।

अब बताओ ''मेंढक कहाँ रहता है?''

–''पानी में।''

–''ज़मीन पर।''

''बगुला कहाँ रहता है?''

–''पेड़ पर।''

–''ज़मीन पर।''

–''पानी पर।''

''मेंढक क्या–क्या खाता होगा?''

–''कीड़–मकौड़े, अनाज, मछली।''

–''कीड–मकौड़े।''

–''अनाज।''

''मेंढ़क कैसी आवाज़ करता है?''

–''टर्र.टर्र.टर्र।''

''मेंढक किन दिनों में अधिक दिखते हैं और टर्र–टर्र करते हैं?''

–''बरसात में।''

–''पानी गिरता है जब।''

''मेंढ़क कितना बड़ा होता होगा?''

–(हाथों को दिखाकर) ''इतना बड़ा होता है।'' कुछ ने बताया।

''तुमने बगुला कहाँ देखा था?''

–''पेड़ पर।''

–''नदी पर।''

''बगुला किस रंग का होता है?''

–''सफेद होता है।''

''मेंढक के कितने पैर होते हैं?''

–''चार पैर होते हैं।''

''मेंढक की कितनी आँखे होती हैं?''

–''दो आँख होती हैं।''

''अच्छा, अब सभी लोग मैदान में चलो और लाइन से खड़े हो जाओ।''

सभी बच्चे मैदान पर पहुँचकर लाइन से खड़े हो गए। मैंने कुछ बच्चों को व्यवस्थित किया और कहा, ''मेंढक कैसे चलता है?''

सभी बच्चों ने उछलते–कूदते, छलाँग मारते हुए चलकर दिखाया।

''अच्छा, अब यह बताओ बगुला कैसे उड़ता है?''

सभी बच्चे बगुले के उड़ने का अभिनय करने लगे।

इसके बाद मैंने कहा, ''अब सभी कमरे में चलो और अपनी जगह पर बैठो।''

सभी बच्चों के व्यवस्थित बैठने के बाद बच्चों ने कहा, ''यहाँ फर्श पर शब्दचित्र–कार्डों में से मेंढक और बगुले का शब्दचित्र–कार्ड चुनो।''

सभी क्रम से शब्दचित्र–कार्ड चुनने आए। कुछ बच्चों को मेंढक और बगुले के चित्रवाला कार्ड नहीं मिला। वे कहने लगे, ''सर, इसमें मेंढक और बगुले का कार्ड नहीं है।'' तब मैंने श्यामपट्ट पर मेंढक और बगुले का चित्र बना दिया। बच्चों ने पूछा कि इस कार्ड का क्या करें?

''मेंढक और बगुले का चित्र बनाओ, कार्ड पर लिखे उनके नाम लिखो और मुझे दिखाओ। सुनी हुई कहानी का चित्र भी बनाकर दिखाओ।'' मैंने कहा इसके बाद सभी बच्चे चित्र बनाने और शब्द लिखने में जुट गए। कुछ देर बाद बच्चों ने चित्र दिखाए।

– लक्ष्मी नारायण चौधरी (संदर्भ से संकलित)

कुछ प्रश्न :

- शिक्षक ने कहानी के चार चित्रों के आधार पर बच्चों के साथ क्या–क्या गतिविधियाँ कीं? क्रम से लिखिए।
- आपको क्या लगता है, शिक्षक ने बच्चों के साथ पहले चित्रों पर बातचीत क्यों की, सीधे ही कहानी क्यों नहीं सुना दी?
- शिक्षक ने बच्चों को कहानी सुनाने के बाद यह क्यों पूछा– 'अब आगे क्या हुआ होगा?'
- शिक्षक ने कहानी पर बच्चों के साथ किस–किस तरह की बातचीत की?
- छोटे बच्चों को कहानी सुनाना महत्त्वपूर्ण है? क्यों या क्यों नहीं?
- बच्चों को चित्र बनाने का मौका देने से पढ़ने–पढ़ाने की प्रक्रिया में क्या लाभ होते हैं?
- ''मेंढक बगुले से क्या बोल रहा होगा?''
  - ''तुम्हारी टर्र–टर्र मुझे अच्छी लगती है।''
  - ''तुम मुझे अच्छे लगते हो।''
  - ''तुम क्या कर रहे हो?''
  - ''मैं तुमको खाऊँगा।''

  ये सब एक ही चित्र पर अलग–अलग बच्चों के जवाब हैं।

  (i) एक ही चित्र पर ये अलग–अलग जवाब क्यों आए हैं?

  (ii) इनमें से क्या हम किसी एक को सही मान सकते हैं? क्यों या क्यों नहीं?
- आपको क्या लगता है, शिक्षक ने लिखने का काम बच्चों के साथ कहानी पर बातचीत करने के बाद क्यों किया?
- आपको क्या लगता है, क्या ऐसे बच्चे जो अक्षर नहीं पहचानते होंगे, शब्द चित्र– कार्ड से 'मेंढक' और बगुले का नाम उतारकर लिख पाए होंगे? क्यों या क्यों नहीं?

इकाई–II

पुस्तकालय एवं बाल–साहित्य

अध्याय : 1. पुस्तकालय का उपयोग क्यों व कैसे :

अध्याय : 2. कक्षा में अन्य पुस्तकें :

अध्याय : 3. कहानी कथन कौशल :

अध्याय : 4. बाल साहित्य :

अध्याय : 5. क्या–क्या हो बच्चों की एक किताब में :

अध्याय : 6. संकलित बात साहित्य एवं गतिविधियाँ :

अध्याय – 1

पुस्तकालय का उपयोग क्यों व कैसे

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य

परिचय :

अलग–अलग तरह की पुस्तकें व उनसे परिचित होने में पुस्तकालय शिक्षकों व बच्चों की ही नहीं बल्कि हम सबकी मदद करता है। यहाँ पुस्तकालय से यह मतलब नहीं है कि स्कूल का ऐसा कमरा जिसमें बहुत सारी पुस्तकें हों, टेबल, कुर्सी हो व जहाँ जाकर बच्चे किताबें पढ़ें। यदि किसी स्कूल में ऐसा होता है तो अच्छा है, लेकिन यहाँ जिस 'पुस्तकालय' की बात हम कर रहे हैं उसका तात्पर्य है बच्चों को विभिन्न प्रकार की पुस्तकें उपलब्ध कराना तथा साथ ही ऐसे मौके उपलब्ध कराना जहाँ वे इन पुस्तकों से अन्तःक्रिया कर सकें।

पुस्तकों के साथ यह अन्तःक्रिया कैसी होगी? बच्चों की उम्र व स्तर को देखते हुए अन्तःक्रिया में अन्तर होगा। जैसे–शुरुआती स्तर पर (यानी कक्षा 1 व 2 में) बच्चे द्वारा किताबों को उलट–पलटकर देखना, उनके चित्रों को देखना, उन पर बातचीत करना, जो पृष्ठ अच्छा लगे उस पर बहुत सी बातचीत लेकिन जो अच्छा ना लगे उसको छोड़कर आगे बढ़ जाना... इत्यादि चीज़ें करेंगे। इस स्तर पर यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यहाँ उद्देश्य है कि बच्चे विभिन्न तरह की पुस्तकों से रूबरू हों, पढ़ने के प्रति रुचि जगे व थोड़ी–बहुत पढ़ने की शुरुआत हो। कक्षा 3, 4 व 5 में इस अन्तःक्रिया का मुख्य पहलू होगा उन किताबों को पढ़ना, पढ़ी गई कहानियों व कविताओं को अपने दोस्तों को सुनाना... और इसको संभव बनाने के लिए अध्यापक को भी कुछ प्रयास करने पड़ेंगे। यथा बच्चों से पढ़ी गयी किताबों के नाम, क्या पढ़ा, क्या अच्छा लगा इत्यादि के बारे में बात करना।

अब यह प्रश्न ज़रूर उठ सकता है कि बच्चों को विभिन्न तरह की पुस्तकें क्यों दें? ऐसे कुछ शोध हुए हैं जो हमें यह बताते हैं कि विभिन्न तरह की पुस्तकों से अन्तःक्रिया करने से बच्चों को भाषा सीखने में मदद मिलती है। 'पुस्तकों को पढ़ना' व 'भाषाई क्षमताओं का विकास' इनमें संबंध है। जो बच्चे जितनी अधिक पुस्तकें पढ़ते हैं उनकी विभिन्न भाषाई क्षमताएँ यथा पढ़ना, लिखना, संवाद कर पाना बेहतर होती है। हालाँकि इस पर शोध जारी है।

उद्देश्य :

- बच्चों के लिए पुस्तकालय में कैसी पुस्तकें हों? उस पर समझ बना पाएँगे।
- पुस्तकों के साथ अन्तःक्रिया कैसी होगी? उस पर समझ बना पाएँगे।

- पढ़ना–लिखना सीखने–सिखाने में पुस्तकालय की भूमिका समझ पाएँगे।
- पढ़ने की रूचि बढ़ाने में पुस्तकालय के महत्त्व को समझ पाएँगे।
- पुस्तकालय के रख–रखाव में बच्चों की भागीदारी कैसे हो? पर समझ बना पाएँगे।

जब मैं स्कूल में पढ़ता था तो घर में कई तरह की किताबें, पत्रिकाएँ व अख़बार आते रहते थे। घर में हम सभी पुस्तकें पढ़ते थे। मुझे याद नहीं कि जब मैं बहुत छोटा था तो मेरे स्कूल में पुस्तकालय था या नहीं। किन्तु पाँचवीं कक्षा में व उसके बाद मैं जिस–जिस स्कूल में गया वहाँ पुस्तकालय था। यह ज़रूर है कि इनमें से प्रत्येक में वैसा प्रयास नहीं था जैसा कि मेरी पाँचवीं वाले स्कूल में था। इस स्कूल में हम सब लोगों को पुस्तकालय जाना ही होता था। पुस्तकालय से हम पुस्तक ले जा भी सकते थे और वहाँ बैठकर पढ़ भी सकते थे। अलमारियाँ खुली रहती थीं, हम जो चाहे किताब ले सकते थे। कोई बन्धन नहीं, कोई ताला नहीं। मुझे मालूम नहीं कि पुस्तकालय व पुस्तकों को इससे नुक़सान होता था अथवा नहीं, लेकिन मुझे बहुत फ़ायदा हुआ। मेरे दोस्तों, मेरी कक्षा के बच्चों व अन्य जिन्हें मैं जानता था उनमें से किसी ने भी कभी पुस्तक फाड़ने या कोई सुन्दर चित्र काटने का प्रयास नहीं किया। पुस्तक ले जाने का प्रयास शायद कभी किसी ने किया था, ऐसा हमने उड़ते–उड़ते सुना। किन्तु वह मसला हल हो गया और किसी अलमारी पर ताला नहीं लगा। हम सबको कभी पता नहीं लगा कि वह कौन था? और कौन–सी पुस्तक ले जाने का प्रयास कर रहा था। हमारे लिए तो पुस्तकालय में सब कुछ वैसा ही था। हो सकता है, सतर्कता बढ़ा दी गई हो। किन्तु हमें ऐसा दिखता नहीं था।

यह कहानी मैं क्यों सुना रहा हूँ ? इसलिए सुना रहा हूँ कि लाइब्रेरी से जो जुड़ाव हमारा उस समय बना, उसने मेरे साथियों और मुझमें किताबों का रस डाल दिया। पुस्तकें ढूँढ़ने, सँभालने व इस्तेमाल करने की तैयारी करवा दी और उन्हें उलट–पलटकर देखने की हिम्मत दे दी। यह इसलिए ज़रूरी था क्योंकि अपने–आप पढ़ने के लिए, स्वतंत्र रूप से सीखने के लिए पुस्तकों को खँगाल पाना आवश्यक है। स्कूल या पुस्तकालय हमें ज्ञान को स्वयं खँगालने व उसके आधार पर आगे सीखते रहने के लिए तैयार कर सकता है। ज्ञान खँगालने के अलावा एक और बात मैं रखना चाहूँगा। उस उम्र में मुझे कहानी का बहुत शौक़ था। शायद सभी बच्चों को यह शौक़ होता है। पुस्तकालय होने से मैंने अलग–अलग तरह की कहानियाँ पढ़ीं और धीरे–धीरे संपूर्ण पुस्तक जिसमें मात्र एक ही कहानी होती थी उसको भी पढ़ने लगा था। मुझे इसमें बहुत मज़ा आता था। पुस्तक हिन्दी की हो या अंग्रेज़ी की, इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता था। क्योंकि मैंने दोनों तरह की पुस्तकें पढ़ना सीख लिया था। फिर गर्मियों की छुट्टियों में पुस्तकालय ढूँढ़ना और ढूँढ़कर उस पर आक्रमण करना एक महत्त्वपूर्ण व रोचक कार्य होता था। एक तरह की पुस्तकें ख़त्म होने पर दूसरी पुस्तकों तक पहुँचना और बच्चों के साथ उन पर चर्चा करके नए लेखकों, नई तरह की पुस्तकें पहचानना, यह सब करना होता था। कब छुट्टियाँ निकल गईं पता नहीं लगता था। और यह भी याद नहीं रहता था कि कितनी पुस्तकें पढ़ डालीं।

लाइब्रेरी की पुस्तक पढ़ना और दस कहानियों को पढ़ना, पाठ्यपुस्तक पढ़ने से बहुत अलग होता था। कक्षा दस और ग्यारह में जब हम विषयों के बारे में पुस्तकें ढूँढ़ते थे और अलग–अलग पुस्तकालयों में जाते थे तो भी वह कार्य स्कूल द्वारा निर्धारित पुस्तक पढ़ने से बहुत अलग होता था। स्वयं पढ़ने में स्वतंत्रता का अहसास था। हर व्यक्ति अपनी तरह से पुस्तक पढ़ सकता था। उसे पुस्तक का कौन–सा हिस्सा पढ़ना है और कौन–सा बिल्कुल नहीं, कौन–सा सरसरी तौर पर आदि सभी बातें सोचने की ज़रूरत नहीं होती थी। जब जैसा चाहा, जितना चाहा पढ़ लिया। सिर्फ़ वही नहीं पढ़ा जो पाठ्यक्रम में निर्धारित है, और भी कुछ पढ़ा, कुछ और चीज़ें जानी। यह सब करने में मज़ा आता था क्योंकि यह पता था कि कोई यह नहीं पूछेगा कि किसी अध्याय में सोहन ने किस रंग की पतलून पहनी हुई थी, या फिर सोहन को जो टैक्सी ड्राइवर मिला उसका क्या नाम था? आदि ....। जब डर ही नहीं था कि कोई यह पूछ लेगा कि तुमने इस कहानी में क्या सीखा? यह तो सही है कि हर कहानी में कुछ न कुछ ज़रूर सीखते हैं। किन्तु यह ज़रूरी नहीं कि सब एक कहानी से एक ही बात सीखें। मैं

अपने लिए कोई निहितार्थ बनाऊँगा और आप अपने लिए। मुझे कुछ और पसंद होगा आपको कुछ और। और इसके लिए कारण भी अलग–अलग होंगे।

कुल मिलाकर पुस्तकालय आपको पढ़ने की, जानने की, सोचने की, अपना मत बनाने की स्वतंत्रता देता है। वह आपको, आपके दायरे की सीमा व अन्य बन्धनों से मुक्त होने का रास्ता दिखाता है। वह आपकी पढ़ने में रुचि बढ़ाता है। आपको अन्य लोगों के अनुभव व समझ को समझने और उसकी समालोचना करने का मौक़ा देता है। यदि पुस्तकालय यह सब करने की गुंजाइश देता है तो फिर हर स्कूल में और हर कक्षा के बच्चे को पुस्तकालय उपलब्ध होना क्यों अनिवार्य नहीं होना चाहिए। क्या ऐसा हो सकता है कि पुस्तकों तक बच्चे सहज रूप से पहुँच सकें और वे भी ऐसी पुस्तकें जो सुन्दर व मज़ेदार हों? इसकी राह में क्या बाधाएँ हैं? इनसे कैसे निजात पा सकते हैं?

यह शायद आज से 25 साल से भी ज़्यादा पहले की बात है जब हर उच्च प्राथमिक स्कूल के बच्चों के लिए किताबों का एक सेट उपलब्ध करवाया गया था। यह सेट छाँटकर, चुनकर ली गई किताबों का था। बहुत से स्कूलों में ये सेट देर–सबेर पहुँचाने भी गए। किन्तु इनका उपयोग कहीं नहीं हुआ। कुछ प्रधान शिक्षकों ने उन्हें घर रख लिया। कुछ ने इन्हें अलमारी में दबाकर रख दिया ताकि बच्चे किताबें फाड़ न दें। तो कुछ ने इन्हें अलमारी में सजा दिया। ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिला जिसमें बच्चों को इनका उपयोग करने का खुलकर मौक़ा मिला हो। उन्हें शायद यह तो मंज़ूर था कि पड़े–पड़े इन्हें दीमक खा जाए किन्तु यह नहीं कि वे बच्चों के हाथों में पहुँच जाए और उनसे वे फटे। मुझे लगता है इसमें कहीं न कहीं यह भी भावना रही होगी कि बच्चे पाठ्यपुस्तक तो पढ़ते नहीं और वे ये किताबें क्या पढ़ेंगे। या फिर यह भी किताबों से इनका क्या लेना–देना, इन्हें कौन–सा आगे चलकर ज्ञानी बनना है। एक महत्त्वपूर्ण पहलू जो इस सब के पीछे है, वह है हमारा किताबों से क्या रिश्ता है? और हम अपना और अन्य का किस प्रकार का रिश्ता चाहते हैं? मुझे लगता है कि यह प्रश्न पुस्तकालयों के होने, बने रहने व उनके उपयोग को सबसे अधिक प्रभावित करता है।

मेरे विचार से स्कूल में बच्चों तक पुस्तकें पहुँचाने में बहुत बाधाएँ हैं। पहली बाधा है कि इसका पैसा कहाँ से आएगा? दूसरी, यह पहुँचेगी कैसे, तीसरी, इनको रखा कहाँ जाएगा? चौथी, इनको बच्चों को कब देंगे? पाँचवीं, इन्हें सँभालेंगे कैसे? कौन करेगा यह सब? बच्चे क्या इन्हें पढ़ पाएँगे? आदि प्रमुख बाधाएँ हैं।

इन सब बाधाओं के पीछे असली बाधा तो यह है कि हमारी पुस्तकालय के बारे में एक सामूहिक समझ नहीं है कि पुस्तकालय के क्या–क्या लाभ हो सकते हैं? और कैसे वे शिक्षण के कार्य को नए मायने दे सकते हैं? और वास्तव में उसे सरल बना सकते हैं। यह सोचना कठिन नहीं है कि स्कूल में पुस्तकालय का हम किस–किस तरह से उपयोग कर सकते हैं और इसका उपयोग बच्चों के विकास व सीखने के लिए क्यों आवश्यक है? इस पर ढेरों विचार और अनुभव हैं। किन्तु इस प्रश्न पर व्यापक स्तर पर शिक्षकों व पालकों के साथ चर्चा करने की आवश्यकता है। फिर पुस्तकालय उपलब्ध करवाने और उसके सटीक व निर्धारित उपयोग और खुले उपयोग दोनों के बारे में सोचने व साझा समझ बनाने की ज़रूरत है। यह समझ बनने के बाद आगे के द्वार स्वयं खुल जाएँगे।

कुछ प्रश्न :

- आपका पुस्तकालय से संबंधित कोई अनुभव हो तो अपने दोस्तों के साथ बाँटें।
- आपने पिछले एक वर्ष में कौन–कौन सी किताबें या पठन सामग्री पढ़ी हैं? इसमें से किन्हीं चार के नाम लिखिए।
- कौन–सी किताब आपको सबसे अच्छी लगी और क्यों?

अध्याय – 2
कक्षा में अन्य पुस्तकें

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य

परिचय :

एक छोटा अध्ययन जो इस विषय पर एक शिक्षिका ने किया था उसको हमने इस इकाई में सम्मिलित किया है। आप भी अपनी कक्षा में ऐसा अध्ययन करके यह समझने का प्रयास कर सकते हैं कि पढ़ने व भाषाई क्षमताओं में क्या संबंध है? शोध के निष्कर्षों के साथ–साथ यदि गहराई से इस मुद्दे पर विचार करें तो भी पुस्तकों को पढ़ने व भाषाई क्षमताओं के संबंध में दो–तीन बातें मानी जा सकती हैं। वह यह कि इंसान की प्रकृति हमेशा कुछ नया जानने व करने की होती है और पुस्तकें इसका एक ज़रिया बन सकती हैं, दूसरा पढ़ने से ही पढ़ना आता है और पढ़ने की आदत बनाने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि बहुत सी पुस्तकें पढ़ने व उन पर बातचीत के मौके उपलब्ध हों।

उद्देश्य :

- भाषा शिक्षण में कक्षा–कक्ष पुस्तकालय के महत्त्व को समझ पाएँगे।
- पाठ्यपुस्तक के बाहर की सामग्रियों का भाषा शिक्षण में उपयोग को समझ पाएँगे।
- कक्षा–कक्ष पुस्तकालय में बच्चों के योगदान में महत्त्व को समझ पाएँगे।

पिछले लेख में हमने पुस्तक संस्कृति से जुड़ी ज़रूरी समस्याओं और साधनों आदि प्रश्न पर ग़ौर किया। ये सही हैं कि समस्याएँ रही हैं और काफ़ी व्यापक तौर पर रही हैं परन्तु यह भी सही है कि इनका हल भी हमें ही निकालना है और शायद यही छोटे प्रयास हमें और हमारी पुस्तकालय संस्कृति को वहाँ ले जाए जहाँ हमें होना चाहिए। ऐसा ही एक प्रयास यहाँ पर वर्णित किया जा रहा है। जहाँ पर शिक्षिका ने यह कोशिश की कि यदि बच्चे किताबों के पास नहीं जाते या जा पाते तो किस तरह से किताबों को बच्चों के पास ले जाया जा सकता हैं। विद्या भवन बुनियादी माध्यमिक विद्यालय की प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ाने वाली अध्यापिका श्रीमती शहनाज के अपने कक्षा पुस्तकालय के बारे में अनुभव इस प्रकार हैं–

मेरा स्कूल विद्या भवन बुनियादी माध्यमिक विद्यालय, रामगिरि गाँव में स्थित है। और उदयपुर शहर से 7 किलोमीटर दूर है। विद्यालय में इस समय 411 विद्यार्थी कक्षा 1 से 10 तक अध्ययन कर रहे हैं। स्कूल में आस–पास के 8 गाँव से विद्यार्थी आते हैं। मैं पिछले तीन वर्षों (2005) से अपनी कक्षा तीसरी और चौथी के बच्चों को दीगर किताबें देने का कार्य कर रही हूँ। इस संदर्भ में सबसे पहले अपने स्कूल में आनेवाले बच्चों के बारे में बताना चाहती हूँ।

विद्यालय आनेवाले अधिकांश बच्चे निम्न–मध्यम वर्गीय परिवारों से हैं। अधिकतर बच्चों के माता–पिता खेती, दूध बेचने का, ड्राइविंग और मज़दूरी जैसे व्यवसायों से जुड़े हैं। इसलिए बच्चों की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति करना ही कई बार उनके लिए मुश्किल होता है। ऐसी स्थिति में कोई अन्य ख़र्च नहीं उठा पाते हैं। अतः घर में पाठ्यपुस्तकों के अलावा किसी और पुस्तक के होने की कोई संभावना नहीं होती और न ही उनके माता–पिता पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त पुस्तकों की आवश्यकता समझते हैं।

माता–पिता का शैक्षिक स्तर भी 8 वीं से 12 वीं तक का है। इस कारण वे पढ़ाई में पुस्तकालय के महत्त्व को भी बेहतर तरीक़े से नहीं जान पाते। पाठ्यपुस्तकें पढ़कर अच्छे अंक लाना ही बच्चों का काम है। इसके अतिरिक्त किसी अन्य पुस्तक की आवश्यकता बच्चों को नहीं है, वे ऐसा सोचते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चों की भाषा की समझ नहीं बन पाती और उनसे पाठ्यपुस्तकों को पढ़कर समझने की उम्मीद नहीं की जा सकती।

कक्षा में बच्चों की पढ़ने और समझने की समस्या को लेकर बहुत परेशानी होती है। वर्ष 2005 में चौथी कक्षा के साथ काम करते हुए मुझे बहुत दिक़्क़त हो रही थी। मेरी कक्षा में तीन बच्चे ऐसे थे जिन्हें अक्षर–ज्ञान ही था और वे शब्द नहीं पढ़ पाते थे। कई बच्चे ऐसे थे जो शब्दों का उच्चारण तो कर लेते थे परन्तु अर्थ समझना उनके लिए संभव नहीं था। इनकी पढ़ने की समस्या दूर करने के लिए मेरे दिमाग़ में बार–बार एक ही विचार आता कि इनकी पढ़ने की रुचि बढ़े और ये किताबों की तरफ़ आकर्षित हों लेकिन कैसे ? क्योंकि उनके पास पढ़ने के लिए केवल पाठ्यपुस्तकें ही थीं। वो भी एकदम नीरस और बेजान जिसे बार–बार पढ़ना, बच्चों की किताबों से दूरी को और बढ़ा रहा था। घर पर उनके पास कोई किताब होती नहीं है, लाइब्रेरी उन्होंने कभी देखी नहीं, स्कूल की लाइब्रेरी में भी छोटे बच्चों के लिए कोई किताब नहीं होती और न ही रीडिंग का कोई पीरियड दिया जाता है। ऐसे हालात में उनकी पढ़ने की क्षमता को बेहतर करने के लिए मुझे एक रास्ता दिखाई दिया। मैंने अपनी स्कूल की लाइब्रेरी में चकमक की पुरानी किताबें देखी थीं जिनको मैं क्लास में ले आई। बच्चों से कहा कि ये आपके लिए हैं। जब चाहो पढ़ना। ये सुनकर बच्चे चकमक पर टूट पड़े। ऐसा लगा जैसे किसी भूखे को खाना मिल गया हो। मैंने सोचा कि जब ये बच्चे पढ़ने को इतने लालायित हैं तो इनकी इस रुचि को क्यों नहीं बढ़ाया जाए? मुझे लगा कि इनके लिए मुझे क्लास में ही किताबें लाने का इन्तज़ाम करना पड़ेगा। और मैंने अपनी कोशिश शुरू कर

दी। स्कूल की प्रमुख लाइब्रेरी से मैंने कुछ बच्चों के पढ़ने लायक किताबें छाँटी और उनको अपनी क्लास में रख दिया। ये किताबें मेरे नाम से इश्यू की गई थीं इसलिए इनके खोने की ज़िम्मेदारी भी मेरी थी। बच्चे इस बात को समझ रहे थे और वे उसे क्लास में पढ़कर, सँभालकर रख देते। धीरे–धीरे अधिकांश बच्चों का रुझान किताबों की तरफ़ बढ़ने लगा और वे मन लगाकर पढ़ने लगे। कुछ बच्चे किताबों की तरफ़ ध्यान नहीं देते थे क्योंकि उनको किताब पढ़ना ही नहीं आता था। मैंने उनके साथ कुछ गतिविधि करना शुरू किया। चकमक के 'खिलौने का पन्ना' और 'काग़ज़ से बनाओ' वाले पेज से उनको परिचित करवाया और कुछ चीज़ें बनाकर दिखाई जिससे वे बिना निर्देश पढ़े भी संकेतों को समझकर कुछ–कुछ चीज़ें बनाने लगे और किताबों को हाथ में लेने लगे। इससे उनकी किताबों से दूरी कुछ कम हुई।

मैंने अपनी कक्षा के एक कोने में टेबल पर किताबों को एक साथ रख दिया क्योंकि शुरुआत में मेरे पास केवल चकमक किताबें ही थी इसलिए उसे छाँटने की कोई ज़रूरत नहीं थी। बच्चों को सप्ताह के तीन दिन ही केवल एक–एक पीरियड पढ़ने के लिए दिया गया था। परन्तु वे जब भी कक्षा में विषय का अपना काम कर चुके होते तो उन्हें किताबें देखने की छूट थी।

कुछ सप्ताह बाद मुझे लगने लगा कि बच्चों का किताबों से मन भर गया है क्योंकि उनके पास एक ही तरह की किताबें थीं जो सभी की रुचि और पसंद के अनुसार नहीं थी। तब मैंने बच्चों का ध्यान आकर्षित करने के लिए चकमक से कुछ गतिविधि करवानी शुरू की। बच्चों के साथ मिलकर मैंने वर्ग–पहेली हल की, 'काग़ज़ से बनाओ' के तहत हमने मिलकर चीज़ें बनाईं, 'अपना खिलौना बनाओ' वाली एक्टिविटी उन्होंने घर ले जाकर भी की। इस तरह कुछ सप्ताह बच्चे किताबों में लगे रहे। इसी बीच जो बच्चे पढ़ने से जी चुराते थे वे धीरे–धीरे थोड़ा पढ़ने लगे और जो पहले से थोड़ा पढ़ते थे उनकी पढ़ने की गति बढ़ने लगी।

अब बच्चे अगली कक्षा में आ गए थे और यहाँ की भी टीचर मैं ही थी। क्लास लाइब्रेरी के काम को आगे बढ़ाने के लिए इस साल (2006) भी मुझे ही काम करना था। अब तक यह बात स्पष्ट रूप से समझ में आ गई थी कि कुछ बच्चे जिन्हें पढ़ना नहीं आता है वे भी किताबों में कम से कम चित्र तो देखते हैं और चित्रों को पढ़ते हैं, चित्रों पर बातचीत करते हैं। इसलिए उनके लिए वे किताबें ज़्यादा उपयोगी थीं जिनमें केवल चित्र हों और लिखा हुआ कम हो। अब दूसरे प्रकार के बच्चे जिन्हें पढ़ना तो आता था परन्तु उनको पढ़ी गई बात समझ में नहीं आती थी इसलिए चकमक में उनकी कोई ज़्यादा रुचि नहीं थी। उसमें से वे केवल सरल कविताएँ ही पढ़ते थे। कोई भी लम्बा पाठ्य या बड़ी कहानी बच्चे नहीं पढ़ पाते थे। और तीसरी तरह के बच्चे जो पढ़ा हुआ समझ भी पाते थे, उनकी संख्या काफ़ी कम थी लेकिन इनकी रुचि सब तरह की किताबों में थी। वे कविताएँ, कहानियाँ, विज्ञान की बातें, वर्ग–पहली, नाटक आदि सभी तरह की रचनाओं को पढ़ने में रुचि दिखाते थे।

इस प्रकार अलग–अलग तरह के बच्चों के लिए मैंने स्कूल की प्रमुख लाइब्रेरी से तीन–चार प्रकार की किताबें छाँटीं जिनमें केवल चित्रोंवाली (गुब्बारा, कौवा, आम), सरल कहानियोंवाली (नाव चली, बिल्ली के बच्चे आदि) और सीबीटी, एनबीटी आदि की कहानियों की किताबें थीं परन्तु इन सब किताबों की संख्या बहुत ही कम थी। किताबों की देखभाल की ज़िम्मेदारी बच्चों ने अपने ऊपर ले ली। वे अपने पढ़ने के समय में किताबें लेकर पढ़ते और उसे सँभालकर फिर रखते क्योंकि किताबें ज़्यादा नहीं थीं, इसलिए फटते ही फिर वे इसे चिपका देते और रैक पर रख देते। वे जानते थे कि वे ऐसा नहीं करेंगे तो उन्हें पढ़ने के लिए किताबें मिलना मुश्किल है। जब बच्चों को पढ़ने में मज़ा आने लगा तो वे किताबों को घर ले जाने की माँग करने लगे। मैं तो यही चाहती थी कि उनके साथ–साथ उनके घर के लोग भी इसका फ़ायदा उठा सकें। इस काम को मैंने कक्षा मॉनिटर और रोल नंबर से एक–एक की मदद से किया। एक रजिस्टर में बच्चों के नाम का हर पेज लिख दिया और पूरे महीने वे जितनी किताबें घर ले जाते उसका रिकॉर्ड रजिस्टर में रखते। यह काम ज़्यादा नहीं चल पाया। बच्चों ने बताया

कि इश्यू करनेवाले को पढ़ने का समय ही नहीं मिल पाता है। इसलिए इस प्रक्रिया को बदलना पड़ा। फिर बच्चे कौन–कौन सी किताबें घर ले गए उनका रिकॉर्ड भी मैं ही रखती। लेकिन बच्चे कई बार किताबें लाना भूल जाते और इस तरह से साल के अंत में कुछ किताबें खो गईं। इस वजह से लाइब्रेरियन मुझ पर नाराज़ भी हुई।

जब बच्चों ने किताबों के साथ लापरवाही बरती तो उन्हें इस बात का एहसास कराना ज़रूरी था कि वे ग़लत काम कर रहे हैं। इसलिए मैंने सोचा कि जो किताबें खो गईं वो सबसे आख़िरी बार किसे दी गई थी वो उसे जमा कराएँ तभी उसे नई किताब मिलेगी। जब तक किताब जमा नहीं करते तब तक केवल क्लास में पढ़ सकते हैं घर नहीं ले जा सकते। इसका कुछ प्रभाव पड़ा और बच्चे किताबें लाना याद रखने लगे।

प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों का किसी भी चीज़ से मन जल्दी भर जाता है और वे फिर उससे बेरुख़ी दिखाने लगते हैं। इसलिए मैं पूरे सालभर की किताबें एक साथ क्लास में नहीं लाती थी। पत्रिकाओं की तो हर महीने एक–एक कॉपी नई आ जाती थी साथ ही सीबीटी और एनबीटी की किताबें भी। मैं 30–30 का सेट पूरा बदल करके लाइब्रेरी से नया ले आती जिसमें तरह–तरह की कहानियाँ आदि होती हैं। मैंने अभी तक किताबों को इससे ज़्यादा श्रेणियों में नहीं डाला था और मेरे पास ज़्यादा किताबों को रखने की जगह भी नहीं थी, न ही पैसा था। इसलिए हर बार, हर बच्चे की पसन्द को ध्यान में रखते हुए मुझे किताबों का चयन करना पड़ता था। लेकिन हर महीने किताबें बदलने से उनकी किताबों में जिज्ञासा बनी रहती और वे नया कुछ पढ़ने के इन्तज़ार में रहते। ठीक यह बात वेलिंगटन ने लिखी है कि बच्चों का पढ़ने की तरफ़ रुझान बढ़ाने के लिए हर बार नई किताबें शामिल करना ज़रूरी है।

कक्षा पुस्तकालय की उपयोगिता केवल पढ़ने के लिए नहीं है बल्कि इसका उपयोग इससे कहीं अधिक है जैसे बच्चों के पढ़ने और लिखने के कौशल को बढ़ाना। पाठ्यपुस्तकों के अलावा छोटी कक्षा के बच्चों को और अधिक पुस्तकें उपलब्ध कराना और उनको आपस में बातचीत के अवसर उपलब्ध कराना। बच्चे स्वयं अपने स्तर पर पढ़ सकें और अपने पाठ्यक्रम का विस्तार कर सकें।

पिछले वर्ष हम कीड़ों के बारे में पढ़ रहे थे। पुस्तकालय में हमारे पास मकड़ी के बारे में एक किताब थी जिसे मैंने पढ़कर बच्चों को सुनाया। इसके बाद हर बच्चे ने उस किताब को बहुत ध्यान से पढ़ा। इसी तरह पिछले महीने हम अंग्रेज़ी की कक्षा में 'जंतुओं के बच्चे' पढ़ रहे थे। बच्चों ने कक्षा पुस्तकालय की किताबों से ढूँढ़कर वो किताब निकाल ली जिसमें कई जानवरों के उनके बच्चों के साथ चित्र थे और कुछ नए नाम उन्होंने अपने आप सीख लिए।

बच्चों को जब अपने स्तर पर पढ़ने और अपने साथियों के साथ बातचीत करने का मौक़ा मिलता है तो शब्दों का भंडार बढ़ता है, वे कई सारे नए शब्दों को नए–नए संदर्भों में पढ़ते हैं व उनका अपने वाक्यों में प्रयोग करते हैं। साथ ही वे जितना ज़्यादा पढ़ते हैं उतनी ही उनकी समझ बढ़ती है जिससे उनको अपनी पाठ्यपुस्तकों को समझने में भी मदद मिलती है। जब बच्चे स्वयं अपने हिसाब से पढ़ते हैं तो उन्हें बार–बार पढ़ने पर कोई रोकता नहीं है, उनकी ग़लतियों पर उन्हें कोई टोकता नहीं है। इसलिए वे अपनी मन–पसन्द चीज़ों को पढ़ने का आनंद ले सकते हैं। इसके विपरीत जब उन्हें कक्षा में रोक–टोककर पढ़ाया जाता है तो पढ़ना उनके लिए नीरस हो जाता है।

पठन का असर उनकी लेखन क्षमता पर भी दिखाई देता है। जो बच्चे कम किताबें पढ़ते हैं वे लिखने में हिचकिचाते हैं, उनके विचारों की अभिव्यक्ति ठीक से नहीं हो पाती है लेकिन ज़्यादा किताबें पढ़नेवाले विद्यार्थी अपने विचारों को बेहतर तरीक़े से व्यक्त कर पाते हैं।

कक्षा पुस्तकालय का लगातार दो साल तक उपयोग करनेवाले बच्चों की भाषा पर क्या प्रभाव पड़ा इसे समझने हेतु एक लघु शोध बच्चों के साथ किया गया जिसमें उन्हें एक क्लोज़ टेस्ट दिया गया। इसमें बच्चों को पैराग्राफ को पढ़ने के बाद उसमें छूटे हुए शब्दों को पूरा करना था। इस टेस्ट को करनेवाले बच्चों की भाषा के क्लोज़ टेस्ट के अंक को उनके द्वारा पढ़ी गई किताबों की संख्या से संबंध देखा गया। जिन बच्चों ने ज़्यादा किताबें पढ़ीं उन्होंने क्लोज़ टेस्ट में ज़्यादा अंक अर्जित किए। इन्हीं बच्चों का गणित के इबारती सवालों को पढ़कर हल करने का संबंध जाँचा गया जिसमें गणित की संक्रिया का मतलब उनकी समझ में आया कि नहीं। इसमें भी किताबों में रुचि रखनेवालों ने गणित में अधिक अंक प्राप्त किए थे। इससे यह बात समझने में मदद मिलती है कि बच्चों की भाषा की समझ पढ़ने से ही बेहतर होती है और इसका प्रभाव अन्य विषयों पर भी दिखाई देता है।

इसी कार्य को आगे बढ़ाते हुए मैंने पढ़ने का असर लेखन क्षमता पर भी देखना चाहा और पिछले वर्ष इस कार्य को बच्चों के साथ प्रारम्भ किया। पिछले वर्ष कक्षा पुस्तकालय में शामिल बच्चों का स्तर देखने के लिए उनसे कुछ विषयों पर एक–एक पैराग्राफ लिखवाए। साल के अन्त में फिर से उनसे लिखने को कहा गया तो पाया कि 6–7 वाक्य लिखनेवाले बच्चों ने साल के आख़िर में उसी विषय पर 22–23 वाक्य लिखे हैं। और नए विषय पर लिखने की उनकी अभिव्यक्ति बढ़ी है। अभी इस पर आगे कार्य चल रहा है।

कक्षा पुस्तकालय में बच्चों का उत्साह बढ़ता जा रहा था परन्तु नई किताबें शामिल कहाँ से की जाएँ? क्योंकि बच्चों की किताबें कम थीं और नई लाने के लिए कोई व्यवस्था नहीं बन रही थी। अपने सहकर्मियों से भी किताबें एकत्र करने पर 15–20 से ज़्यादा किताबें इकट्ठी नहीं कर पाई। हमने किसी तरह से किताबें जुटाईं। अब हमारे पास किताबें तो हैं मगर मैं इसको लेकर हमेशा सजग रहती हूँ कि नई–नई और बढ़िया किताबें बच्चों को उपलब्ध करा सकूँ। और यह देख सकूँ कि आख़िर बच्चे कैसे उनका उपयोग कर रहे हैं। कक्षा पुस्तकालय पर अध्ययन करने पर यह समझने में बेहद मदद मिली कि हमें यदि बच्चों में पढ़ने की ललक जगानी है तो उनके लिए किताबें उपलब्ध करानी ज़रूरी है।

कुछ प्रश्न :

- आप भी अपनी डी. एड. की कक्षा में एक दिन ऐसा कीजिए जैसा इस शिक्षिका ने किया। अपने पुस्तकालय से किताबें लाइए और दोस्तों के साथ पढ़िए। इस तरह पढ़ने के आपके क्या अनुभव रहे यह बड़े समूह में एक–दूसरे से बाँटिए।
- बच्चों के साथ कक्षा पुस्तकालय में की जा सकनेवाली कोई गतिविधि सोचिए, क़क्षा में करवाइए और अपने अनुभव लिखिए।

अध्याय – 3

कहानी कथन कौशल

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
  - कहानियाँ कहाँ से लाएँ?
  - कहने लायक कहानी
  - ज़रूरत क्या है?
  - कहानियाँ अच्छी तरह सुनने की क्षमता का विकास करती हैं
  - कहानी सुनाने से अंदाज़ लगाने का प्रशिक्षण मिलता है
  - कहानियाँ हमारी दुनिया को फैलाती हैं
  - कहानी सुनाना और पढ़ना
  - कहानी सुनाने का कौशल

परिचय :

भाषायी कौशलों के विकास में कहानी कहना किस तरह मददगार है। कहानियों का स्रोत क्या हों? कहानियाँ कक्षा–शिक्षण का रोजर्मरा का हिस्सा बने, शिक्षकों को कहानियाँ याद हों पर बल हो, नैतिक शिक्षा का उससे कुछ लेना–देना नहीं बल्कि भाषा विकास का सहायक होना, कहानी सुनने–सुनाने से अच्छे श्रोता विकसित होने की संभावना आदि बातों की चर्चा इस लेख में की गई हैं।

उद्देश्य :

- भाषा शिक्षण में कहानी के महत्त्व को समझ पाएँगे।
- अच्छी कहानियाँ क्या हों? पर समझ बना पाएँगे।
- कहानियाँ बच्चे की दुनिया को विस्तार देती हैं पर समझ बना पाएँगे।
- कहानी सुनाने में अंग संचालन के महत्त्व को समझ पाएँगे।

बच्चों को कहानी सुनाना वाकई एक हुनर है। आइए देखते हैं कौन–कौन सी बारीकियाँ होती हैं कहानी सुनाने में।

यह बड़े अफ़सोस की बात है कि हमारे प्राइमरी स्कूलों में पहली दो कक्षाओं के लिए प्रतिदिन कहानी सुनाने की कोई अलग 'घंटी' नहीं होती। यदि ऐसी व्यवस्था होती तो बच्चों को स्कूल में टिकाए रखने की समस्या कम–से–कम एक हद तक सुलझ जाती। बहुत से लोग कहेंगे कि मैं इस समस्या की गंभीरता की अवहेलना कर रहा हूँ। बहुत संभव है कि मेरा सुझाव सुनकर कई ऊँचे अधिकारी हिकारत के भाव से मुस्कुराएँ। उनके विशाल अनुभव और प्रशासनिक ज्ञान ने यह समझ अवश्य उनके दिमाग़ से हटा दी होगी, जो मेरी समझ में उनके पास एक समय में ज़रूर रही होगी, कि कहानी सुनाने का बच्चों पर एक जादुई असर होता है।

यह बहुत ही गहरे अफ़सोस की बात है कि हमारी अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाएँ भी कहानी सुनाने को गंभीरता से नहीं लेतीं हालाँकि उनमें से कुछ अपने पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने के महत्त्व का ज़िक्र ज़रूर कर देती हैं।

मेरे मन में एक ऐसे दिन की कल्पना है जब छोटे बच्चों को पढ़ानेवाले हर शिक्षक से यह अपेक्षा की जाएगी कि कम–से–कम तीस पारम्परिक कहानियों पर उसका अधिकार हो। अधिकार से मेरा आशय है कि ये कहानियाँ उसे अच्छी तरह याद हों ताकि वह उन्हें इत्मीनान और आत्मविश्वास के साथ सुना सके। यह एक ऐसे समाज के लिए कोई बड़ी बात नहीं है जिसके पास हज़ारों कहानियों की एक लंबी विरासत है। तीस ऐसी कहानियाँ, जिन्हें अध्यापक अपनी मर्ज़ी से जब चाहे सुना सके, प्राइमरी स्कूल के पहले दो दर्जों का माहौल बदलकर रख देंगी। शर्त इतनी भर है कि दैनिक पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने को एक सम्मानजनक जगह इस ख़ातिर दी जाए कि कहानी सुनाना अपने आप में महत्त्वपूर्ण है।

कहानियाँ कहाँ से लाएँ?

पिछले पैराग्राफ में मैंने एक विशेषण का इस्तेमाल किया है जिसे मैं अब आगे बढ़ने से पहले स्पष्ट करना चाहता हूँ। मैंने लिखा है कि मैं पारम्परिक कहानियाँ सुनाने के पक्ष में हूँ। युवा अध्यापकों को कहानी सुनाने का प्रशिक्षण देने का मेरा अनुभव बताता है कि जब उनसे सुनाने लायक कहानियाँ तलाशने को कहा जाता है, तो वे प्रायः बच्चों की किसी पत्रिका में छपी हुई कहानियाँ ले आते हैं। उनमें से कुछ लोग कॉमिक्स कथाएँ उठा लाते हैं और कुछ लम्बे चुटकुले और असली घटनाओं के बयान याद करके ले आते हैं। यह सही है कि इस क़िस्म की सामग्री को भी 'कहानी' की श्रेणी में रखा जा सकता है, लेकिन इस तरह की प्रत्येक कहानी से हम प्राइमरी स्कूल में पढ़नेवाले छह या सात साल के बच्चों पर जादुई असर करने की उम्मीद नहीं कर सकते।

परम्परा से मिली हुई कहानियों में ऐसी विशेषताएँ होती हैं जो समकालीन कहानियों में, जिन्हें हम विविध रूपों और माध्यमों में देखते हैं, अनिवार्यतः नहीं पाई जातीं। इन विशेषताओं की चर्चा हम जल्दी करेंगे, लेकिन पहले मैं पारम्परिक कहानियों के कुछ स्रोतों का ज़िक्र करना चाहूँगा। सबसे पहले पंचतंत्र, जातक, महाभारत, सहस्र रजनी चरित्र, विक्रमादित्य की कहानियाँ और विभिन्न इलाकों की लोक–कथाएँ सहज और समृद्ध स्रोतों की श्रेणी में रखी जा सकती हैं। इनके बाद हम कथा सरितसागर, गुलिस्ताँ और बोस्ताँ की कहानियाँ और दुनियाभर की लोक–कथाओं को रख सकते हैं। ये स्रोत आसानी से उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए यदि कोई पाठ्यक्रम में कहानी सुनाने को एक नियमित जगह देना चाहता है तो उसे इन तमाम स्रोतों से चुनी गई कहानियों का एक संकलन बनाना होगा।

कहने लायक कहानी

एक अच्छी कहानी में कौन–सी विशेषताएँ होती हैं, यह जानने के लिए एक सरल रास्ता एक ऐसी कहानी की जाँच करने का है जिसे बच्चे पीढ़ियों से आनंदपूर्वक सुनते आ रहे हैं। पंचतंत्र की शेर और खरगोश की कहानी एक ऐसा उदाहरण है। इस कहानी का कथानक उतना आसान नहीं है जितना हम कहानी से अपने परिचय के कारण मान लेते हैं। क्यों न हम पहले इस कहानी के प्रमुख मोड़ याद कर लें।

कहानी में एक दिन वह आता है जब नन्हे खरगोश को बूढ़े शेर के सामने पेश होना होता है। शेर के दरवाज़े तक पहुँचने में खरगोश ने इतनी देर कर दी है कि शेर भूख के मारे पागल हो रहा है। यह निर्णायक क्षण शेर के साथ किसी भी तरह की सौदेबाजी के लिए एकदम अनुपयुक्त है क्योंकि शेर ग़ुस्से से बुरी तरह भरा बैठा है, लेकिन खरगोश अनुपयुक्त क्षण में अपनी बात रखता है कि उसे इतनी देर कैसे हो गई? रास्ते में एक दूसरे शेर से मिलने की बात पूरी तरह झूठ है, लेकिन यह बात भूखे, नाराज़ शेर के शाही दिमाग़ में बैठ जाती है। अब वह पहले अपने प्रतिद्वंद्वी से निपटना चाहता है और इसके लिए वह खरगोश के साथ उस कुएँ की तरफ़ चल पड़ता है जहाँ दूसरे शेर के रहने की बात उसे बताई गई है। इस दूसरे निर्णायक क्षण में खरगोश अपनी धोखेबाज़ी और शेर की पागल नाराज़गी और ईर्ष्या, जिसे उसी ने जगाया है, पर भरोसा करके आगे बढ़ता है। कुएँ में अपनी परछाईं देखकर शेर आपा खो बैठता है और कूदकर मर जाता है।

आइए, इस पुरानी, परिचित कहानी को ज़रा बारीक़ी से देखें। पहली बात तो यह है कि कहानी की विषयवस्तु में कोई उपदेश नहीं है। उल्टे, यह कहानी सीधे–सीधे इस तरह के गंभीर सवालों से जूझती है– जैसे कि किसी भी पाश्विक ताक़त के सामने या मौत के वास्तविक ख़तरे से अपने को कैसे बचाया जाए? आमतौर पर बच्चों से बातचीत के दौरान हम ऐसे प्रश्नों को नहीं उठाते, लेकिन ज़ाहिर है कि बच्चों की ऐसे प्रश्नों में गहरी रुचि होती है। हम पूछ सकते हैं कि इस रुचि का क्या कारण है? पर इस सवाल की चर्चा मैं कुछ देर में करूँगा। इस बीच मैं एक और बड़ी विशेषता पर विचार करना चाहता हूँ। यह कहानी एक ऐसे छोटे प्राणी की है जो एक बड़े ताक़तवर प्राणी द्वारा पैदा की गई मुसीबत से जूझ रहा है। इस मुसीबत से बचने के लिए छोटा प्राणी एक ऐसी तरकीब का प्रयोग करता है जिसे हम आमतौर पर अनैतिक कहते हैं।

इस तरकीब पर अमल करते समय खरगोश व्यक्तित्व के कुछ उम्दा गुणों की मिसाल पेश करता है। इन गुणों में साहस, खतरे के सामने आत्मविश्वास, किसी घटना के अंतिम क्षण तक अपना दिमाग़ ठंडा रखने की क्षमता और अपने से ज़्यादा ताक़त और उम्रवाले से उचित बर्ताव करना शामिल है।

हमें इस बात पर भी ग़ौर करना चाहिए कि कहानी कितनी तेज़ गति से आगे बढ़ती है। शुरुआत में एक अजीब–सी व्यवस्था लागू की जाती है जिसके तहत रोज़ एक जानवर स्वेच्छा से बूढ़े राजा का शिकार बनेगा। इस तरह की दैनिक व्यवस्था स्थापित होने के बाद जल्दी ही छोटे खरगोश की बारी आती है और कहानी का केन्द्रीय हिस्सा प्रकट होता है। बाक़ी घटनाएँ बहुत तेज़ी से घटती हैं, क्योंकि अपने को बचाने की एक ख़तरनाक रणनीति तय कर लेने के बाद खरगोश एक भी क्षण बर्बाद नहीं कर सकता। कहानी सुनने वाला संवादों के ज़रिए एक के बाद एक स्थिति से 'धक्का खाते हुए' आगे बढ़ता है। यह स्पष्ट रहता है कि सुननेवाले के पास इस बात का कोई विकल्प नहीं है कि वह स्थिति को खरगोश की निगाह से देखे।

यह संक्षिप्त विश्लेषण उन कारणों की पहचान के लिए पर्याप्त है जिनसे इस कहानी को बच्चों के बीच भारी लोकप्रियता मिली है। सबसे पहली बात यह है कि कहानी उन्हें एक ऐसा चरित्र यानी हीरो देती है जिसके साथ वे पूरा तादात्म्य बैठा सकते हैं। यह चरित्र है खरगोश। कहानी में उसकी भूमिका उसी तरह की चुनौतियों और मुसीबतों से गुज़रती है जैसी कि बच्चे अपने दैनिक जीवन में अक्सर महसूस करते हैं। वह छोटा और शक्तिहीन है, उसे एक ऐसा काम करना है जो वह करना नहीं चाहता, उसे एक ऐसे प्राणी के हाथों मारे जाने का डर है जिसके पास पूरी सत्ता भी है और शारीरिक ताकत भी। खरगोश की परिस्थिति के इन पहलुओं से मिलते–जुलते पहलू हर बच्चे की ज़िन्दगी में उभरते रहते हैं। यद्यपि हम उन्हें अक्सर देख नहीं पाते क्योंकि हम माता–पिता और अध्यापक की भूमिकाएँ निभाने में बेहद व्यस्त रहते हैं। उदाहरण के तौर पर हममें से बहुत कम लोग यह जानते हैं कि अचानक होनेवाली मृत्यु का डर बचपन में चिन्ता के सबसे बड़े स्रोतों में शामिल है। किसी बड़े और मज़बूत व्यक्ति से आमना–सामना होने की आशंका भी इसी प्रकार की चिन्ता पैदा करती है।

कहानी शुरू होते ही बच्चों का ध्यान इसलिए खींचती है क्योंकि बच्चे स्वयं को कहानी में देख सकते हैं। इसके बाद कहानी में होनेवाली घटनाओं से उनके आकर्षण को बल मिलता है। नन्हा खरगोश एक रणनीति चुनता है और वह कारगर सिद्ध होती है। वह न केवल उसके लिए सफल होती है, बल्कि समस्या को हमेशा के लिए और सबके लिए ख़त्म कर देती है। छोटे बच्चों को इसी तरह का हल पसंद आता है। खरगोश की रणनीति के आकर्षण का एक और कारण यह है कि वह बच्चे में हमेशा पाई जानेवाली एक भोली–भाली इच्छा पर आधारित है– बहाना बनाने की इच्छा। देरी से आने के खरगोश द्वारा दिए गए बहाने में एक और आकर्षण यह है कि उसका उद्देश्य अपनी जान बचाना नहीं, शेर को मारना भी है। वास्तव में खरगोश की दुविधा इसलिए इतनी कठिन है कि क्योंकि वह अन्यायी को जान से मारे बग़ैर खुद को बचा नहीं सकता। इसी तरह कहानी बच निकलने का एक ज़बरदस्त नाटक पेश करने के लिए, बहादुरी से किए गए नाश का इस्तेमाल करती है। यदि उसमें कोई नैतिकता

है तो वह आत्म–रक्षा की नैतिकता ही है। इस बात को भी हम तभी ठीक से देख सकते हैं जब हम कहानी को बच्चे की निगाह से देखें। यदि हम बड़ों की निगाह से इस कहानी को देखने की ज़िद करें तो हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि यह एक अनैतिक कहानी है– जैसी कि वह दरअसल है भी।

ज़रूरत क्या है?

अब तक यह स्पष्ट हो गया होगा कि बच्चों के लिए एक अच्छी कहानी सुनने का नैतिकता या नैतिक शिक्षा से कोई संबंध नहीं है या कम–से–कम सीधा संबंध नहीं है। अधिक गहरे स्तर पर खरगोश और शेर की कहानी में एक प्रेरक बात है। वह दिखाती है कि ख़तरे के सामने दिमाग़ ठंडा रखने के क्या फ़ायदे हैं। कहानी यह भी दिखाती है कि सोच–समझ और कल्पना से काम लेना कितना महत्त्वपूर्ण है। लेकिन ये बातें पारम्परिक अर्थ में 'नैतिक शिक्षा' नहीं कही जा सकती। वास्तव में महान पारम्परिक कहानियाँ शायद ही पारम्परिक अर्थ में नैतिक शिक्षा देती हों। हमारे लिए ज़्यादा ज़रूरी इस बात पर ग़ौर करना है कि कहानी सुनाने का उद्देश्य बच्चे का नैतिक विकास करना नहीं है। कहानी सुनाने से होनेवाले लाभ काफ़ी अलग हैं, और वे इस प्रकार हैं :

कहानियाँ अच्छी तरह सुनने की क्षमता का विकास करती हैं

अच्छा श्रोता कौन है? वह जो अन्त तक सुनता रहे। यह बात हम बहुत से लोगों के बारे में नहीं कह सकते। यहाँ तक कि औपचारिक बहसों के दौरान भी लोग लगातार टोकते रहते हैं। इसका कारण उनकी यह मानकर चलने की आदत है कि उन्हें पहले से पता है कि बोलनेवाला क्या कहेगा? एक और कारण यह है कि उनमें सुनने का धैर्य नहीं होता। आश्चर्य की बात नहीं कि सुनने को अब सिर्फ़ एक कौशल नहीं, बल्कि एक रवैया माना जाने लगा है जिसे प्रोत्साहित करने के लिए ऊँचे स्तर के प्रबंधन और प्रशासन के कोर्स उपलब्ध हैं। कहानी सुनाने से हमारी ज़िन्दगी के उस निर्णायक दौर में धैर्यपूर्वक सुनने की क्षमता विकसित होती है जब सुनने की आदत और उसमें निहित रवैया जीवनभर चलनेवाली आदतों का रूप ले सकते हैं।

यह बात थोड़ी अजीब है कि अच्छे श्रोता हमारे उस देश में दुर्लभ हो गए हैं जहाँ एक पुरानी और मज़बूत मौखिक संस्कृति रही है। मेरा अंदाज़ है कि इस परिस्थिति का संबंध बचपन में कहानी सुनाने की अवहेलना से है। ऐसा लगता है कि आधुनिक भारत के पास बच्चों को नियमित रूप से कहानी सुनाने का समय नहीं है। इस कमी के परिणाम अब स्पष्ट होते जा रहे हैं।

कहानी सुनाने से अंदाज़ लगाने का प्रशिक्षण मिलता है

अपनी पसंद की कहानियाँ बच्चे बार–बार सुनना चाहते हैं। इसका कारण यह है कि कहानी से एक बार अपना परिचय हो जाने पर वे इस परिचय का इस्तेमाल ग़ौर से सुनने की अपनी बढ़ती हुई क्षमता का परीक्षण करने के लिए करते हैं। स्वाभाविक है कि ये परीक्षण अनजाने में होता है। बच्चों को इस बात से खुशी होती है कि कहानी को दूसरी या तीसरी बार सुनते समय वे सफलतापूर्वक अंदाज़ लगा सकते हैं कि आगे क्या होगा? अंदाज़ के सही सिद्ध होने का आनन्द ही वह इनाम है जो कहानी सुनने से एक अनुभवी श्रोता को मिलता है और यह सिर्फ़ आनन्द नहीं है। इससे कहानी सुननेवाले बच्चे की अंदाज़ लगाने की क्षमता से विश्वास भी बढ़ता है। सर्वांगीण विकास में इस विश्वास की एक गहरी भूमिका होती है– ख़ासकर पढ़ने की क्षमता के विकास में। यह क्षमता स्कूल के शुरुआती दो वर्षों की सबसे बड़ी चुनौती होती है। साक्षरता और पढ़ने की क्षमता के विकास में अंदाज़ लगाने की क्षमता के योगदान की विस्तृत चर्चा मैंने अपनी पुस्तक 'बच्चे की भाषा और अध्यापक' में की है।

अंदाज़ लगाने की क्षमता का महत्त्वपूर्ण योगदान अन्य विषयों, विशेषकर गणित और विज्ञान में भी है। गणित की पढ़ाई में नियमों के इस्तेमाल से समस्या का हल निकालने का सैद्धांतिक महत्त्व है। कहानियों में भी नियम होते हैं। फ़र्क़ यही है कि ये नियम रूपकों की शक्ल में होते हैं। मिसाल के तौर पर कई कहानियाँ इस नियम का पालन करती हैं कि छोटे प्राणी बड़ों को धोखा देकर विजय प्राप्त करते हैं। खरगोश और शेर की कहानी में यही होता है। कहानियाँ सुनते–सुनते बच्चे उनमें निहित नियम पकड़ लेते हैं और यह पकड़ उनकी अंदाज़ लगाने की क्षमता को बेहतर बनाती है।

कहानियाँ हमारी दुनिया को फैलाती हैं

मैं उस दुनिया की बात कर रहा हूँ जिसे हम अपने सिर या दिमाग़ में लेकर चलते हैं। कहानियाँ उसे इस अर्थ में फैलाती हैं कि हम उनके ज़रिए ऐसे लोगों और स्थितियों को जान लेते हैं जिनसे हमारा वास्ता अपनी ज़िन्दगी में कभी नहीं पड़ा।

सवाल है कि ऐसे लोगों या स्थितियों को जानने से क्या फ़ायदा है? फ़ायदा यह है कि वे जीवन का अंग हैं। भले हम व्यक्तिगत रूप से उन्हें न जानते हों पर वे हमें दिमाग़ी रूप से परेशान करती हैं, खासकर बचपन में– लेकिन एक सामान्य अर्थ में यह परेशानी जीवनभर चलती है। उदाहरण के लिए छोटे बच्चे बुरे आदमियों की फ़िक्र करते रहते हैं, भले ही उनके आसपास कोई बहुत बुरा आदमी न हो। इसी तरह वे भीतर यह आशा करते हैं कि उन्हें किसी बेहद होशियार, सुन्दर या अच्छे इंसान से मिलने का मौक़ा मिलेगा। आदर्श रूप की कल्पना और भयंकर विपत्ति का डर, दोनों ही बाल–मनोविज्ञान में शामिल हैं। पारम्परिक कहानियाँ इस मनोविज्ञान को व्यंजित करती हैं, और इसीलिए वे बच्चों को आसानी से खींच लेती हैं। कहानी सुनने से छोटा बच्चा, जो अभी साक्षर नहीं बना है, अपनी वास्तविक दुनिया से कहीं बड़ी दुनिया के कल्पित रूप का अनुभव पा लेता है।

एक बात और भी है कि कहानियों से मिलनेवाला अनुभव बेतरतीब नहीं होता। उल्टे, यह अनुभव हमारी अराजक दुनिया को एक संतोषजनक क्रम या बुनावट में ढाल देता है। एक गहरे अर्थ में यह एक 'नैतिक बुनावट' होती है – लेकिन एक आम अर्थ में नहीं। कमज़ोर जीतता अवश्य है, लेकिन कई बार ग़लत साधनों का प्रयोग करके। भूखे शेर से खरगोश का झूठ बोलना एक उदाहरण है।

कहानी सुनाना और पढ़ना

अंत में, कहानी कहने का महत्त्व हम बच्चे के भाषाई साधनों के विस्तार में देख सकते हैं। शब्द एक बहुत ही निजी सम्पत्ति होते हैं। वे हमें एक बहुत निजी अर्थ में संसार की चीज़ों को अलग–अलग नाम देने की क्षमता देते हैं। लेकिन दूसरी तरफ़ शब्द एक ऐसी सामाजिक सम्पत्ति भी है जिसका इस्तेमाल हम दूसरों से अपने अनुभव बाँटने के लिए करते हैं। शब्दों की यह दो–तरफ़ा प्रकृति ही उन्हें अर्थ देती है। उदाहरण के लिए बच्चे को अपने निजी अनुभव से यह मालूम होता है कि भूख लगने पर शेर को कैसा महसूस हो रहा होगा। कहानी बच्चे को 'भूखा' शब्द का अर्थ इस तरह फैलाने में मदद देती है कि उसमें शेर भी शामिल हो जाए। बच्चे जितनी ज़्यादा कहानियाँ सुनेंगे, उनकी शब्दावली में उतना ही दूसरों के अनुभवों का अर्थ शामिल करने की सामर्थ्य आती जाएगी। इस तरह देखें तो बचपन में सुनी गई कहानियाँ आगे चलकर पढ़ने की क्षमता का आधार बनती हैं।

वास्तव में कहानी के संदर्भ में ऊपर कही गई चारों बातें पढ़ने पर भी लागू होती है। पढ़ने की क्षमता बच्चों का परिचय भाषा में निहित नियमों और संरचनाओं से कराती है। अच्छी तरह पढ़ने की क्षमता होशियारी से अंदाज़ लगाते चलने की आदत पर निर्भर है। भाषा के नियमों से परिचित होकर बच्चे यह अंदाज़ लगा लेते हैं कि वाक्य या कथन में आगे क्या आनेवाला है? इस दृष्टिकोण से कहानी सुनाना बच्चों को साक्षर बनाने के लिए उपयोगी है।

कहानी सुनाने का कौशल

कहानी सुनाने की कला पर अधिकार पाने के इच्छुक व्यक्ति के लिए ज़रूरी है कि वह स्मृति को गंभीरता से कहानी को लें। यदि कहनेवाले को कहानी ठीक से याद नहीं है तो वह अच्छी से अच्छी कहानी को भी चौपट कर सकता है। याद कर लेने से आत्मविश्वास बढ़ता है और कहानी कहनेवाला इत्मीनान महसूस करता है। कहानी सुननेवालों से रिश्ता बनाने के लिए इत्मीनान या चैन बहुत ज़रूरी है। दूसरी बात यह है कि जब कहानी अच्छी तरह याद हो जाती है तो कहनेवाला उसे एक ख़ाके या खाली नक़्शे की तरह इस्तेमाल कर सकता है।

इस नक़्शे को अपनी सुविधा या सुननेवालों के मूड के अनुसार भरा जा सकता है। कहानी को छोटा या बड़ा करना बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। किसी दिन आप चाहते हैं कि जल्दी–जल्दी उस बिन्दु पर पहुँच जाएँ जहाँ खरगोश शेर के सामने खड़ा है। किसी और दिन आपकी इच्छा होती है कि कहानी के पहले हिस्से को फैलाएँ, इस बात की विस्तृत चर्चा करें कि भोजन के इंतज़ार में शेर के मन में कैसे–कैसे विचार आ रहे होंगे? और शेर की गुफा की तरफ़ जाते हुए खरगोश के दिमाग़ में कौन–कौन सी बातें और रणनीतियाँ उभर रही होंगीं?

कहानी को लेकर बच्चों के साथ संवाद कई तरह के विकल्प पेश करता है। आप चाहें तो नाटकीय ढंग से दो आवाज़ों में बोलें, इशारों या मुद्राओं से भी काम लें। संवाद को सजीव बनाने के लिए आप हाथ की कठपुतलियों का प्रयोग भी कर सकते हैं। आप कमरे के एक कोने से दूसरे कोने तक चलकर दोनों भूमिका खुद निभा सकते हैं। ये सभी संभावनाएँ रोचक हैं और वे हमें इस बात की चुनौती देती हैं कि हम एक ही कहानी को साल–दर–साल या एक ही साल में कई बार सुनाते हुए अपनी सामर्थ्य बढ़ाते चलें।

कहानी सुनाना यदि किसी शिक्षक की दैनिक ज़िन्दगी में शामिल है तो वह कभी उबाऊ नहीं हो सकती। पर कहानी को रोज़ की घटना बनाने के लिए यह ज़रूरी है कि हम प्राइमरी स्कूल के पाठ्यक्रम की अपनी धारणाओं को गंभीरतापूर्वक बदलें।

कुछ प्रश्न :

- पुस्तकालय में जाकर कहानियाँ पढ़िए। जो कहानियाँ सबको अच्छी लगीं वे बच्चों को सुनाइए व उनके साथ हुए अपने अनुभव को लिखिए।
- निम्नलिखित वाक्यों को उदाहरण द्वारा समझाइए।
  - कहानियाँ अच्छी तरह सुनने की क्षमता का विकास करती हैं।
  - कहानी सुनने से अंदाज़ा लगाने का प्रशिक्षण मिलता है।
  - कहानियाँ हमारी दुनिया को फैलाती हैं।

अध्याय – 4

बाल साहित्य माने क्या?

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्‌देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
  - चित्र–पुस्तकें
  - लोक कथाएँ
  - कविताएँ
  - गतिविधि पुस्तकें
  - कथेतर साहित्य
  - किशोर साहित्य

परिचय :

बच्चों के लिए बने साहित्य में सरल शब्दों, वाक्यों का प्रयोग इस तरह होना चाहिए, ताकि बच्चे उन्हें समझ सकें। बच्चों के लिए छोटी–छोटी कविताएँ और कहानियाँ छाँटी जाएँ ताकि जितनी देर उनका आकर्षण रहे उतनी देर में वो पूरी हो जाएँ। धीरे–धीरे बच्चों की सुनने की क्षमता, उनकी रुचि को देखते हुए उनकी लम्बाई बढ़ाई जा सकती है। बच्चों की कल्पनाशक्ति बहुत तेज होती है, इसलिए कई बार काल्पनिक कहानियाँ बाल साहित्य में देने के दो फ़ायदे होते हैं, एक तो बच्चे इन्हें पसंद करते हैं, शौक़ से पढ़ते हैं, दूसरा ये उनकी कल्पना शक्ति को भी और सशक्त बनाती हैं, जो फिर भाषा में अभिव्यक्ति को आधार प्रदान करती हैं। इसके अलावा यदि इस तरह की सामग्री भी बच्चों को दी जा सके जिसमें बच्चों की अपनी भाषा हो तो बच्चे इसे बड़े मज़े से पढ़ेंगे और फिर वे भी ऐसी कोशिश कर सकते हैं कि उनके द्वारा बोला गया भी कोई लिखे और उसे पढ़े।

यह तो हुई सामग्री की बात, लेकिन यही काफ़ी नहीं है। इस सामग्री के संकलन का तरीक़ा भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना सामग्री छाँटना। बच्चों को रंग बेहद पसंद होते हैं। अतः बाल साहित्य में रंगों का भरपूर प्रयोग होना चाहिए। पठन सामग्री से सम्बंधित रंग–बिरंगे चित्र भी शामिल किए जाने चाहिए। यदि ऐसा न हो सके तो खाली चित्रों में बच्चे स्वयं रंग भर सकते हैं। कई बार तो बच्चे चित्रों के माध्यम से ही कहानी को समझ जाते हैं या फिर कोई नई कहानी ही गढ़ लेते हैं। साथ ही शब्दों आदि का प्रयोग भी आकर्षक होना चाहिए। कहने का मतलब यह है कि बच्चे पढ़ते बाद में हैं, पहले चित्रों को देखते हैं और कई बार तो किताब उठाने का मुख्य आधार ही मुखपृष्ठ का चित्र होता है। जिस किताब का मुखपृष्ठ अच्छा होता है वे वही किताब उठाते हैं फिर शुरू होती है अंदर से किताब को उलटने–पलटने की प्रक्रिया। जब किताब इस प्रक्रिया से भी गुज़र जाती है तो अन्ततः बारी आती है पाठ्य सामग्री की। अतः किताब का बाहरी कलेवर भी बच्चों को किताबों और साहित्य के पास लाने में बहुत महत्त्वपूर्ण है। एक बार जब बच्चा पाठ्य सामग्री तक पहुँचकर इसका रस और आनन्द लेना सीख लेता है, उसके बाद में तो पढ़ने की यह प्रवृत्ति अनवरत रूप से उसके भाषा का विकास करने और स्वतंत्र रूप से सीखने में मदद करती रहती है।

उद्देश्य :

- बाल साहित्य माने क्या? पर समझ बना पाएँगे।
- अच्छे बाल साहित्य में क्या–क्या शामिल हो? पर समझ बना पाएँगे।
- बाल साहित्य के माध्यम में भाषायी कौशलों के विकास पर समझ पाएँगे।
- बाल साहित्य का संकलन कैसे करें पर समझ बना पाएँगे।

बाल साहित्य का अभिप्राय बच्चों के लिए लिखे जाने वाले साहित्य से रहा है। इसके अंतर्गत इस बात पर भी ध्यान देना जरूरी है किसी कहानी या कविता मात्र में बच्चों के होने से वह बाल साहित्य नहीं हो जाता। इसके लिए जरूरी है कि वह बच्चों के जीवन से जुड़े अनुभवों, उनके द्वन्द्व एवं उनकी कल्पनाओं आदि को ध्यान में रखकर लिखा गया हो। इससे यह बात उभर कर आती है कि बच्चों के साहित्य पर विचार करने के लिए यह जरूरी है कि हमारे मन में बच्चों व बचपन के बारे में एक समझ हो। जिसमें बच्चे को एक जागरूक व जिज्ञासु इंसान के रूप देखना, बाल विकास से जुड़े मुद्दों को समझना व समाज को समझना आदि बातें इसमें शामिल हैं।

अगर हम इस दृष्टि से देखें तो यह बात समझ में आती है कि दुनिया में लिखित रूप से बाल साहित्य की शुरुआत अठारहवीं शताब्दी के दौरान हुई। इससे पहले का अधिकतर साहित्य मौखिक परंपरा का साहित्य था। उसमें बच्चों व बड़ों के लिए कोई विभाजन नहीं था। रामायण व महाभारत की कथाएँ, जातक कथाएँ, पंचतन्त्र की कथाएँ, लोक कथाएँ आदि सभी के सुनने के लिए थीं। इसी तरह पश्चिम में भी एसेप फेबिल्स, गुलीवर्स ट्रैवल्स व राबिन्सन क्रूसो जैसी रचनाएँ भी सभी के लिए थीं। इन पारंपरिक रचनाओं में अधिकतर रचनाएँ नैतिक मूल्यों व उपदेशों पर ही आधारित थीं।

इसके उपरांत पश्चिम में जब जान लॉक, कमेनियस व रूसो जैसे विचारकों ने भी बच्चों व उनकी शिक्षा के बारे में सोचना शुरू किया तब बच्चों के लिए अलग से लिखे जाने के बारे में सोच–विचार की शुरुआत हुई। परंतु उस दौरान भी बच्चों के बारे में समझ एक खाली स्लेट की ही थी। इसके साथ लिखी जानेवाली रचनाएँ भी समाज के उच्च वर्ग के बच्चों के लिए ही थीं। इन रचनाओं का मुख्य उद्देश्य भी बच्चों को नैतिक उपदेश देना या शिष्टाचार सिखाना ही था।

अठारहवीं शताब्दी के दौरान ही जॉन न्यूबेरी ने बच्चों के लिए अलग से साहित्य के बारे में विचार दिया तथा उन्होंने बच्चों के लिए चित्रात्मक पुस्तकें भी लिखीं। इस प्रकार ज्यों –ज्यों बच्चों के बारे समझ गहरी हुई व प्रिंटिंग का विकास हुआ। उसके साथ ही बाल साहित्य भी विकसित हुआ तथा भिन्न –भिन्न प्रकार की पुस्तकें प्रकाशित होनी शुरू हुईं। चित्र पुस्तकों का प्रचलन भी शुरू हुआ। सिर्फ किताबी उद्देश्यों को पूरा करने का ही मकसद नहीं है उसके साथ–साथ पढ़ने के आनंद से भी जोड़ा गया है।

अगर हम अपने देश में भी लिखित बाल साहित्य की बात करें तो इसकी शुरुआत बीसवीं शताब्दी के दौरान ही मानी जा सकती है। इसके अंतर्गत रची जाने वाली अधिकतर सामग्री पर अगर हम गौर करेंगे तो हमें उस दौरान के राजनीतिक व सामाजिक संदर्भ को भी समझना होगा। इस समय के हिन्दी लेखक साहित्य की रचना को एक आत्मविश्वासी और अपनी सांस्कृतिक धरोहर से परिचित समाज का निर्माण मानता था। देशी संस्कृति में गर्व और आत्मनिर्भरता की भावना से ओत –प्रोत साहित्य देश की आज़ादी के संघर्ष में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था।

उस समय की अधिकतर रचनाएँ देशभक्ति व नैतिकता से ही केन्द्रित रही हैं जिन्हें हम अपने स्कूली दिनों के दौरान अपनी पाठ्यपुस्तकों में भी पढ़ते रहे हैं। उस दौरान के साहित्य में कहीं – कहीं आज़ादी के संघर्ष के माहौल में अडिग और आत्मविश्वासी बच्चों के चित्रण को भी देखा जा सकता है। ऐसी ही छवि का अंकन 1933 में प्रेमचन्द द्वारा लिखित कहानी 'ईदगाह' में मिलता है। यह कहानी बच्चे की स्वतंत्र रूप से सोचनेवाले एक आत्मविश्वासी बच्चे की छवि को दर्शाती है। बच्चे की यह छवि ही बच्चों के लिए अच्छे साहित्य का आधार के रूप में देखी जाती है।

आज़ादी के उपरांत तथा प्रकाशन व्यवस्था में परिवर्तन के साथ लोगों की सांस्कृतिक चेतना भी बदली। महानगरीय संस्कृति का विकास हुआ। इसके अंतर्गत बच्चे को एक नन्हे वयस्क की तरह ही देखा गया। इससे बच्चों के पालन –पोषण और विकास के प्रतिमानों में बदलाव आया। इन सबका बच्चों के साहित्य व उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनके बीच प्रतियोगिता की भावना को बढ़ावा मिला। उनसे यह अपेक्षा की जाने लगी कि वे जल्दी –जल्दी पढ़ना लिखना सीखें और दूसरों से आगे निकलें। इस तरह की सोच बच्चों की किताबों में भी आसानी से देखी जा सकती है जिनमें बच्चों की जगह बड़े ही सोचते हैं। उनकी सोच ही हावी दिखाई देती हैं।

धीरे –धीरे हमारे यहाँ भी बच्चों की शिक्षा में नए विचारों के साथ बाल साहित्य की समझ में बदलाव के प्रयास किए जा रहे हैं। आज बच्चों को ध्यान में रखकर अच्छी किताबें भी प्रकाशित हो रही हैं। इन किताबों का उद्देश्य बच्चों को पढने का आनंद लेना कहा जा सकता है। इन्हें हमें पहचानना होगा। इस दृष्टि से ही बच्चों के साहित्य को देखा जाना चाहिए। इसके बारे हम आगे पढ़ेंगे।

अब हम बच्चों के साहित्य से जुड़ी भिन्न –भिन्न विधाओं पर संक्षेप में विचार करेंगे –

चित्र–पुस्तकें

वर्तमान समय में बच्चों की किताबों के अंतर्गत चित्र–पुस्तकें काफी मात्रा में प्रकाशित हो रही हैं। ये पुस्तकें बच्चों के लिए रुचिपूर्ण भी मानी जाती हैं। इन किताबों में चित्रों के साथ लिखित पाठ्य भी होता है। इसमें चित्रों व पाठ्य की बराबर की भागीदारी होती है। आयु वर्ग के अनुसार चित्र व पाठ्य का अनुपात घटता–बढ़ता है। बच्चों की शुरुआती अवस्था की किताबों में केवल चित्रों में भी कहानी कही गई होती है। जैसे 'आम की कहानी', 'बाजार की सैर', 'रेलगाड़ी' आदि। इसके अतिरिक्त चित्र पुस्तकों में 'लालू पीलू', 'मैं भी', 'चूहे को मिली पेंसिल', 'बिल्ली के बच्चे', 'बुढ़िया की रोटी', 'प्यासी मैना', 'कजरी गाय झूले पर' आदि शामिल। इन किताबों का उपयोग बच्चों को पढ़ना सिखाने में भी प्रभावी ढंग से किया जा सकता है।

लोक कथाएँ

लोक साहित्य मुख्यतः मौखिक परंपरा की उपज है। इसके अंतर्गत हम लोककथाओं, परीकथाओं व अन्य पारंपरिक कथाओं को रख सकते हैं। इन कथाओं को हम दादी–नानी, रामायण, महाभारत, पंचतन्त्र व जातककथाओं के माध्यम से सुनते रहे हैं। इन कहानियों में उस दौरान की प्रचलित मान्यताओं , मूल्यों व सामाजिक व्यवस्था के बारे में पता चलता है। आजकल कुछ लोककथाएँ चित्रात्मक रूप से नए कलेवर में भी प्रकाशित हो रही हैं। इन कहानियों में जहाँ कथात्मकता दिखाई पड़ती है वहीं इनमें कहीं वर्तमान दृष्टि से कुछ रूढ़िवादी चरित्र भी दिखाई पड़ते हैं। जैसे कौए का चरित्र चालाक ही होगा। इस तरह से जाति व लैंगिक भेदभाव भी दिखाई पड़ेंगे। बच्चों के साथ उपयोग के लिए इन बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

कविताएँ

बाल कविताएँ अपनी लय, बिंब व शब्दों के खेल से बच्चों के बीच अपनी पहचान बनाती हैं। इन कविताओं को बच्चे गाते – गुनगुनाते हैं। शब्दों में तोड़–मरोड़ भी करते हैं। इनकी जगह नए शब्दों का इस्तेमाल करते हैं।

हिन्दी में बच्चों के लिए बाल कविता लेखन में निरंकार देव सेवक, श्रीप्रसाद, सुभद्रा कुमारी चौहान, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना व प्रयाग शुक्ल आदि लोगों के नाम लिए जा सकते हैं। इन्होंने बच्चों के मनोभावों का ध्यान में रखकर अच्छी बाल कविताओं का सृजन किया है। बाल कविताओं के लिए नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'महके सारी गली–गली' नामक पुस्तक को देखा जा सकता है।

गतिविधि पुस्तकें

गतिविधि पुस्तकें हमारे देश में बच्चों के लिए नई विधा की पुस्तकें है। इन पुस्तकों का विकास विगत दो दशकों के दौरान ही हुआ है। इन पुस्तकों के अंतर्गत यह प्रयास होता है कि खेल–खेल में बच्चों की रचनात्मक प्रवृत्ति को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न खेल, गतिविधियों के द्वारा कुछ रचने के मौके दिए जाएँ। इन पुस्तकों में 'खेल–खेल में विज्ञान', 'कबाड़ से जुगाड़', 'विज्ञान के प्रयोग', 'गणित के खेल', 'ओरेगेमी' आदि पर कई सचित्र पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

कथेतर साहित्य

बच्चों के लिए कहानी–कविता के अलावा अन्य जानकारीपरक पुस्तकें, यात्रा वर्णन, जीवनियाँ आदि पुस्तकों को कथेतर साहित्य के अंतर्गत रखा जाता है। जानकारीपरक पुस्तकों में किसी अवधारणा या विषयवस्तु को बच्चों को ध्यान में रखकर सहज ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है। हाल के वर्षों में इस विधा के अंतर्गत कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

किशोर साहित्य

बाल विकास की दृष्टि से देखें तो किशोरावस्था के दौरान बच्चों की सोच व उनके मुद्दों में काफी बदलाव आ जाता है। इस दृष्टिकोण से इस आयु वर्ग के लिए अलग से साहित्य की जरूरत पड़ती है। इस आयु वर्ग के बच्चे साहसिक कथाएँ, बाल उपन्यास, जासूसी कथाएँ, जीवनी, आत्मकथा व जानकारीपरक पुस्तकों आदि में भी रुचि लेने लगते हैं। हालाँकि इस आयु वर्ग के लिए हिन्दी में उद्देश्यपरक साहित्य कम ही रचा गया है। इसके अंतर्गत सत्य प्रकाश अग्रवाल 'एक घर पाँच निडर' का उल्लेख किया जा सकता है। किशोरों के लिए कुछ अनूदित पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं जैसे – 'स्वामी के दोस्त', 'रस्टी के कारनामे' आदि देखे जा सकते हैं।

कुछ प्रश्न :

- इस आलेख में बच्चों के साहित्य को एक सामाजिक–राजनीतिक संदर्भ में समझने की ओर संकेत किया गया है। इस बात का क्या आशय है? अपने शब्दों में लिखें।
- आलेख में बच्चों के साहित्य को बच्चों व बचपन की अवधारणा से जोड़कर देखने की बात कही है। इस बात का क्या आशय है? अपने शब्दों में लिखें।
- अपने पुस्तकालय से कुछ बाल साहित्य की पुस्तकें चुनें। उसमें यह देखने का प्रयास करें कि पुस्तक में बच्चों व समाज की कैसी छवि प्रस्तुत की गई है?
- अपने पुस्तकालय से बच्चों की अच्छी कविताएँ इकट्ठी करें तथा कविता कक्षा में बच्चों को सुनाएँ।
- अपने पुस्तकालय से बच्चों की कुछ चित्र–पुस्तकें व गतिविधि पुस्तकें चुनें। उनमें यह देखने का प्रयास करें कि उनका कक्षा में बच्चों के साथ कैसे उपयोग करेंगे?

अध्याय – 5

क्या–क्या हो बच्चों की एक किताब में

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
  - बच्चों की छवि
  - चित्रों का महत्त्व
  - तयशुदा चरित्र
  - भाषा
  - मूल्य

परिचय :

पिछले आलेख में हमने बाल साहित्य का संक्षिप्त परिचय व उसकी विधाओं के बारे में पढ़ा। प्रस्तुत आलेख में बच्चों की एक अच्छी किताब में क्या–क्या तत्व होने चाहिए? इसके बारे में लिखा गया है जिससे हमें बच्चों की किताबों के चयन के बारे में समझ मिलेगी।

उद्देश्य :

- अच्छी किताब में क्या हो? पर समझ बना पाएँगे।
- किताबें बच्चों के जीवन कौशलों (खुद से निर्णय लेने में) के विकास में किस तरह मददगार है? पर समझ बना पाएँगे।
- बच्चों की सहज भाषा के महत्त्व को समझ पाएँगे।
- चित्र पढन को भाषायी विकास के कारक के रूप में महत्त्व को समझ पाएँगे।

बच्चों की किताबों के बारे में आमधारणा यह रहती है कि बच्चों के लिए रंग–बिरंगी, बड़े अक्षरों व सरल शब्दोंवाली किताबें अच्छी होती हैं। इसके साथ ही बाजार में उपलब्ध विभिन्न पुस्तकों में यह देखा जाता है कि कहानी के पात्र तो बच्चे व पशु–पक्षी हो सकते हैं लेकिन वे बड़ों की सोच के आधार पर अपने क्रियाकलाप करते हैं, अपना तर्क रखते हैं। ऐसी बहुत सी सामग्री से बाजार पटा हुआ है। इस कारण बच्चों की अच्छी किताबों को पहचानने के लिए हमें थोड़ी और गहराई से समझ बनाने की जरूरत पड़ती है। इसके लिए हमें बच्चों की किताबों से जुड़े अन्य पहलुओं पर भी समझ बनानी होगी। इस आलेख में हम बच्चों की अच्छी किताबों से जुड़े कुछ संकेतकों पर समझ बनाने का प्रयास करेंगे।

बच्चों की छवि

सर्वप्रथम हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि बच्चों की हमारे मन में क्या छवि है? इस छवि को मौजूदा बाल पुस्तकों में किस तरह से चित्रित किया गया है। इसके अंतर्गत यह ध्यान देना जरूरी है कि बाल साहित्य में बच्चे की स्वतंत्र छवि का होना जरूरी है जिसमें उसकी अपनी बात, अपनी सोच, अपनी कल्पनाशीलता व तर्कशीलता दिखाई दे। इसमें बच्चों की स्वयं निर्णय लेने की क्षमता, अपना तर्क रखने की क्षमता आदि आंतरिक मूल्य दिखाई पड़ने चाहिए। इसका उदाहरण प्रेमचंद की कहानी 'ईदगाह' में

दिखाई देता है। इस कहानी में जहाँ एक बच्चे की अपनी दादी के प्रति संवेदनशीलता उभर कर आती है, वहीं दूसरी तरफ यह बात भी सामने आती है कि हामिद इस कहानी में कहीं न कहीं स्वतंत्र रूप से निर्णय ले सकने वाली स्थिति पर भी कायम रहता है। कहानी में हामिद चिमटा लेने के पक्ष में अपने तर्क मजबूती से रखता है और अपनी दादी के लिए चिमटा खरीद लेता है, जबकि उसके साथी विभिन्न प्रकार के खिलौने खरीदते हैं। यह बच्चों के लिए कहानी का एक ठोस आंतरिक मूल्य है, इसे समझने की जरूरत है।

इसी तरह नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'बस की सैर' की मुख्य पात्र वल्ली भी अपनी सहज जिज्ञासा का उपयोग करते हुए बस की यात्रा करती है। अपने तर्कों से वह बस कंडक्टर व बस के यात्रियों को संतुष्ट करती है। इस कहानी में एक बच्ची अपनी सोच, अपना तर्क और अपनी जिज्ञासा दर्शाती है जो कि एक आधुनिक सामाजिक मूल्य है।

नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित एक अन्य पुस्तक 'कजरी गाय झूले पर' में भी गाय के माध्यम से बच्चों के मनोभावों को समझा जा सकता है। यहाँ एक गाय अपने रोजमर्रा के कार्यों को छोड़कर स्वतंत्र रूप से सोचते हुए झूला झूलने का अनुभव लेना चाहती है।

बच्चों की किताबों के अन्य संकेतकों को समझने के लिए हम कुछ और किताबों पर निगाह दौड़ा सकते हैं। मसलन, चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक –'बुढ़िया की रोटी' को एक लोककथा के रूप में गूँथा गया है। इसमें घटनाओं का बार–बार दोहराव है और यह कहानी बच्चों के परिवेश से सशक्त रूप से जुड़ी हुई है। इस तरह की कहानी में बच्चों को घटनाओं के दोहराव के माध्यम से यह अंदाज लगाने का मौका मिलता है कि आगे बुढ़िया किस–किस के पास जाएगी? और रोटी पाने का प्रयास करेगी। ताराबाई मोदक की कहानी 'खीरा खाऊँ कचर–कचर' में भी इसी किस्म का दोहराव है। अक्सर यह देखा गया कि इस तरह की कहानियाँ बच्चों को पसंद आती हैं।

कई दफा बचपन की घटनाएँ या बाल सुलभ अनुभव भी बच्चों को बहुत भाते हैं। उदाहरण के लिए चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'ननिहाल में गुजरे दिन' को याद कर सकते हैं। इसमें बचपन की घटनाएँ सहज रूप से एक के बाद एक सामने आती हैं। बच्चे इन्हें पढ़ते हुए कहीं न कहीं अपनी छवि को देखते हैं, अपने अनुभव से जोड़ते हुए उसमें आनंद पाते हैं।

चित्रों का महत्त्व

बाल साहित्य में चित्रों के बारे में मूलभूत बात यह है कि बच्चों की किताबों के चित्र पर चर्चा गत्यात्मक होनी चाहिए जिससे बच्चों को लगे कि इनमें कुछ घटित हो रहा है, बजाय केवल स्थिर चित्र होने के। ऐसी ही कुछ बात चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'महागिरी' के चित्रों में देखी जा सकती है। इसमें हाथी के चेहरे पर उजागर समस्त भाव देखे जा सकते हैं। इसी तरह 'प्यासी मैना' को भी देख सकते हैं। चित्रों के लिहाज से ऐसे ही कुछ और नाम याद आते हैं– नेशनल बुक ट्रस्ट की 'दादी ने की बुनाई', 'चौदह चूहे घर बनाने चले', 'कजरी गाय झूले पर', स्कॉलिस्टिक इंडिया की 'पाजी बादल' आदि। इन सभी में चित्र न केवल महत्त्वपूर्ण हैं वरन् वे किताब के पाठ्य को समृद्ध भी करते हैं। बच्चे इन चित्रों की बारीकियों में जा सकते हैं और चीजों को खोजने का प्रयास कर सकते हैं। इसके साथ ही जो बच्चे ठीक से पढ़ नहीं पाते वे भी चित्रों के माध्यम से कहानी को समझने की कोशिश करते हैं और उसका स्वयं विस्तार करते हैं।

चित्रों के अंतर्गत यह बात भी देखने की है कि चित्रों में समाज की छवि किस तरह से दिखाई गई है। चित्रों में अमीर–गरीब, शहरी–ग्रामीण, जातिगत व लैंगिक भेदभाव आदि तो नहीं दिखाया गया है।

तयशुदा चरित्र

बच्चों की अधिकतर पुस्तकों में बच्चों के चरित्र गढ़े हुए होते हैं और वे एक वयस्क के नजरिए से सोचते या क्रियाकलाप करते हैं। इससे कहानियाँ एक ही सपाट ढर्रे पर चल पड़ती हैं और उनमें बच्चों के कोई अनुभव नहीं दिखाई पड़ता।

आमतौर पर कहानियों के चरित्रों में एक तरफा नायकत्व के गुण भरे होते हैं जिससे आसानी से स्पष्ट हो जाता है कि कहानी में कौन नायक है? और कौन खलनायक? कहानी में नायक हर समस्या का निदान खोज लेता है और अंत में विजय प्राप्त करता है। ऐसी कहानियाँ बच्चों को कोई नई दृष्टि प्रदान नहीं करती। इन्हें 'चंपक' व विभिन्न प्रकार की कॉमिक्स में अक्सर देखा जा सकता है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान में बाल साहित्य में चली आ रही रूढ़ छवियों को तोड़ने की जरूरत है।

भाषा

भाषा के स्तर पर यह कहा जाता है कि बच्चों के लिए सरल वाक्य हों। परंतु यह ध्यान रखना चाहिए कि अगर भाषा में बच्चों के स्थानीय परिवेश के कई शब्द सहजता से आते हैं तो उनको लेकर समस्या नहीं होनी चाहिए। इस बात को भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि बच्चों के लिए भाषा बनावटी न हो। अगर सहज रूप से इस्तेमाल किए जाएँ तो कठिन शब्दों को भी बच्चे कहानी के संदर्भ द्वारा अनुमान लगाकर समझ सकते हैं। गुलजार द्वारा बच्चों के लिए रचित रचनाएँ 'पाजी बादल', 'बोस्की का पंचतंत्र', 'बोस्की के ब्राह्मण', 'पोटली बाबा' की आदि पुस्तकों में भाषा का प्रवाह और किस्सागोई देखने मिलती है और उर्दू के शब्द भी मिलते हैं। इससे कहानी समृद्ध ही होती है। ऐसी ही बातें 'ननिहाल में गुजरे दिन' में भी दिखाई देती हैं।

मूल्य

बाल साहित्य के संदर्भ में हमें यह भी समझना चाहिए कि हम एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में रहते हैं। उसका एक संविधान है। उसके कुछ संवैधानिक मूल्य–समता, न्याय, धर्मनिरपेक्षता आदि हैं। इन संवैधानिक मूल्यों को बच्चों की किताबों में देखा जाना चाहिए। तभी भारत जैसे एक बहुभाषी–बहुसांस्कृतिक देश में जातीय व लैंगिक भेदभाव, शहरी–ग्रामीण, अमीर–गरीब आदि के बीच संवेदनशीलता की बात पैदा हो पाएगी।

अगर नैतिक मूल्यों के विकास की बात करें तो हमें यह समझना चाहिए कि इनका विकास होना एक जटिल प्रक्रिया है। ये मूल्य निरपेक्ष भी नहीं हैं। इन्हें बच्चों की किताबों में जानबूझकर रखना या ढुँढना एक निरर्थक बात है। हमें यह भी सोचना चाहिए कि हमारे स्कूलों में अधिकतर गरीब व दलित बच्चे, स्लम के बच्चे, जनजातीय क्षेत्र के बच्चे, लड़कियाँ, अल्पसंख्यक बच्चे ,विकलांग बच्चे भी पढ़ते हैं। इन बच्चों के जीवन व समाज के प्रति एक संवेदनशील नजरिए को उभारने वाली रचनाएँ बच्चों की किताबों में होनी चाहिए। इन मूल्यों को किताबों की कहानियों व चित्रों में देखा जाना चाहिए।

उक्त किताबों के उदाहरण के लिए स्कॉलिस्टक द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'बोनू और सलीम' 'बारिश का एक दिन', 'गाँव का बच्चा'। एकलव्य द्वारा प्रकाशित 'छुटकी उल्ली' व 'श्रम की महिमा'। तूलिका द्वारा प्रकाशित 'क्यों–क्यों छोरी', 'सॉरी बेस्ट फ्रेंड', 'मुकुन्द एंड रियाज', 'जू की कहानी', 'इस्मत की ईद' आदि किताबों को देखा जा सकता है।

कुछ प्रश्न :

- इस आलेख में बच्चों के लिए किताब चयन के किन–किन संकेतकों के बारे चर्चा की गई है ? इन्हें संक्षेप में अपने शब्दों में लिखें।
- अपने पुस्तकालय से उक्त संकेतकों के आधार पर कुछ अच्छी किताबों का चयन करें तथा उनके बारे में संक्षेप में लिखें।
- आलेख में बाल पुस्तकों में बच्चों की किस प्रकार की छवि देखने की बात कही गई है? इसे अपने शब्दों में लिखें।
- अपने पुस्तकालय से कुछ अच्छे चित्रांकनवाली पुस्तकें चुनें। इनके बारे में संक्षेप में लिखें।

अध्याय – 6

संकलित बाल साहित्य एवं गतिविधियाँ

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्‌देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
    - आम
    - चित्रकार
    - मज़े की बात
    - बब्बू और झब्बू
    - क्या तुम मेरी माँ हो?
    - किसी से कहना मत
    - पहेलियाँ
    - चित्र पहेली
    - बूझो मेरा नाम बनाओ मेरा चित्र
    - पहेलियाँ पढ़ो और सही चित्र के सामने लिखो

परिचय :

इस अध्याय में कुछ कविताएँ, कहानियाँ, पहेलियाँ आदि विभिन्न तरह के टेक्स्ट (Text) व उन पर अभ्यास व गतिविधियाँ दी गई हैं। अपेक्षा है कि इससे आपको कक्षा में भाषा सीखने–सिखाने हेतु क्या–क्या किया जा सकता है? यह समझने में मदद मिलेगी। आप स्वयं भी यह अभ्यास करें तो आपको मज़ा आयेगा। जैसे आपः

– प्रत्येक कहानी तथा कविता को पढ़ें एक–दूसरे को सुनाएँ।

– जो अभ्यास दिए गए हैं वह भी करें और अपने जवाबों को दूसरे समूहों से बाँटें?

– यह भी बताने का प्रयास करें कि ये अभ्यास भाषा की कौन–सी क्षमताओं का विकास करने में मदद करते हैं?

– कहानी और कविता पर जो अभ्यास दिए गए हैं वो सिर्फ़ उदाहरणमात्र हैं आप स्वयं भी नए अभ्यास बनाएँ।

उद्‌देश्य :

- आस–पास उपलब्ध कहानी, कविता, लोकगीत, लोककथा, पहेली इत्यादि का संकलन कर सीखने–सिखाने में इस्तेमाल कर सकेंगे।
- अलग–अलग सामग्रियों पर नए–नए तरह के अभ्यास बनाने की समझ बना पाएँगे।
- अच्छे अभ्यास कैसे हों पर समझ बना पाएँगे।
- पाठ्यपुस्तक से बाहर की सामग्रियों से भी बच्चों में भाषायी कौशलों का विकास करने में सहायक है पर समझ बना पाएँगे।

आम

मुझे बहुत भाते हैं नानी मीठे–मीठे आम,
भर डलिया तू मुझे खिला दे, लूँगा तेरा नाम!
बहुत बड़ी है बगिया तेरी, छोटा मेरा पेट,
और पेट से भी छोटा है, मेरे मुँह का गेट!
घबरा मत ना खा पाऊँ मैं, बगिया भर के आम,
न दे टॉफ़ी न दे बिस्किट, दे बस केवल आम!
आम खिलाकर करवा ले तू मुझसे सारे काम,
सिर्फ़ एक दिन को कर दे, सब बगिया मेरे नाम!

कविता सुनाने के बाद बच्चों से कुछ प्रश्न ऐसे पूछे जा सकते हैं–

– यदि तुम्हें डलिया भरकर आम दे दिए जाएँ तो तुम क्या करोगे?

– ____

____

– आम के अलावा और कौन–कौन से फल तुम्हें अच्छे लगते हैं?

– ____

____

– आम से बनी कौन–कौन सी चीज़ें तुम्हें अच्छी लगती हैं?

– ____

____

– तुम अपने घर में बोली जानेवाली भाषा में आम को क्या कहते हो ?

– ____

____

– अगर तुम्हें एक दिन के लिए आम की बगिया मिल जाए तो तुम क्या करोगे ?

– ____

____

ज़रा सोचो तो

– आम फलों का राजा है तो अंगूर क्या है?

– कौन किससे छोटा है– आँख, कान, नाक?

इस चर्चा में हर बच्चे की प्रतिक्रिया उसकी अपनी कल्पना तथा रुचि के अनुसार अलग–अलग होगी। जो बच्चे चर्चा में हिस्सा नहीं ले रहे हों उन्हें प्रोत्साहित करें ताकि वह अपनी बात सही ढंग से कह सके।

कुछ प्रश्न ऐसे भी हो सकते हैं– तुम अपने घर में बोली जानेवाली भाषा में आम को क्या कहते हो? इस प्रकार की चर्चाओं से जहाँ बच्चों की झिझक दूर होगी और उनका आत्मविश्वास बढ़ेगा वहीं बच्चे एक ही शब्द को कई अन्य भाषाओं में भी जानेंगे। दूसरी भाषाओं के प्रति अपनेपन तथा सम्मान की भावना उनके हृदय में जगेगी।

अब कुछ प्रश्न आपके लिए :

- आपके अनुसार यह कविता किस कक्षा के बच्चों के लिए उपयुक्त होगी?
- आप भी कम से कम दो अभ्यास इस कविता पर बनाइये?

चित्रकार

चित्रकार सुनसान जगह में, बना रहा था चित्र।
इतने ही में वहाँ आ गया, यम राजा का मित्र।।
उसे देखकर चित्रकार के, तुरंत उड़ गए होश।
नदी, पहाड़, पेड़, पत्तों का, रह न गया कुछ जोश।।
फिर उनको कुछ हिम्मत आई, देख उसे चुपचाप।
बोला–सुन्दर चित्र बना दूँ, बैठ जाइए आप।।
उकरू–मुकरु बैठ गया वह, सारे अंग बटोर।
बड़े ध्यान से लगा देखने, चित्रकार की ओर।।
चित्रकार ने कहा हो गया, आगे को तैयार।
अब मुँह आप उधर तो करिए, जंगल के सरदार।।

बैठ गया वह पीठ फिराकर, चित्रकार की ओर।
चित्रकार चुपके से खिसका, जैसे कोई चोर।।
बहुत देर तक आँख मूँदकर, पीठ घुमाकर शेर।
बैठे–बैठे लगा सोचने, इधर हुई क्यों देर।।

झील किनारे नाव लगी थी, एक रखा था बाँस।
चित्रकार ने नाव पकड़कर, ली जी भरके साँस।।
जल्दी–जल्दी नाव चलाकर, निकल गया वह दूर।
इधर शेर था धोखा खाकर, झुँझलाहट में चूर।।
शेर बहुत खिसियाकर बोला, नाव ज़रा ले रोक।
कलम और काग़ज़ तो ले जा, रे कायर डरपोक!!
चित्रकार ने कहा तुरत ही, रखिए अपने पास।
चित्रकला का आप कीजिए, जंगल में अभ्यास।।

कुछ प्रश्न :

1. इस कविता को कहानी के रूप में लिखिए।

____

____

____

____

____

____

____

____

____

____

____

2. शेर को देखकर चित्रकार का जो हाल हुआ, वह कविता की किन पंक्तियों से पता चलता है?

____

____

____

3. इस कविता के लिए एक शीर्षक और दें।

____

4. कविता में शेर के लिए दो नामों का प्रयोग किया गया है? इन दोनों नामों को छाँटकर लिखिए।

____

5. 'उकरू–मुकरु बैठ गया वह, सारे अंग बटोर

बड़े ध्यान से लगा देखने, चित्रकार की ओर'

इस कविता में शेर की जगह अगर शेरनी आई होती तो कवि इन दो लाइनों को किस प्रकार लिखता?

____

____

6. कविता में कई समान आवाज़वाले शब्दों का प्रयोग किया गया है, जैसे– चित्र–मित्र। कविता में आए ऐसी कम से कम 4 शब्द जोड़ियों को लिखिए।

____

____

7. तुम भी कभी किसी मुसीबत में फसे होंगे तो तुम बताओ की इस मुसीबत से कैसे निकले?

____

____

____

____

____

____

____

____

____

____

____

____

____

मज़े की बात

सुनो, मज़े की बात, रे भैया
सुनो, मज़े की बात!

हाथी दादा दबा रहे हैं
चींटी जी के पाँव,
चूहे जी के डर से भागी
बिल्ली अपने गाँव।
नए दौर की नई–निराली
देखो यह सौगात!

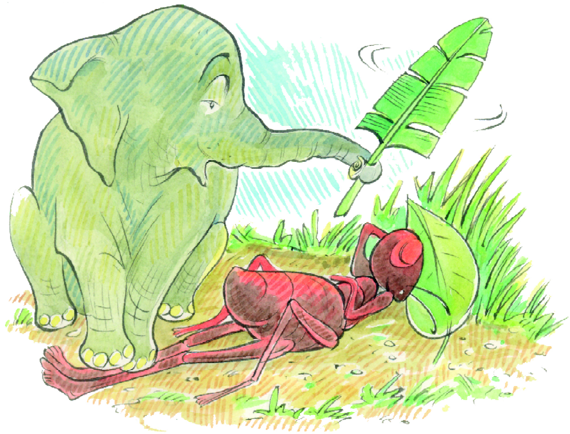

रौब जमाता फिरता सब पर
नन्हा–सा खरगोश,
चीता सहमा हुआ खड़ा है
भूला अपने होश!
बाघ गँवाकर सारी ताक़त
दिखा रहा अब दाँत!

भालू, गीदड़, सियार, लोमड़ी
रगड़ रहे हैं नाक,
खुलकर उड़ा रहे गधे जी
उनका खूब मजाक।
एक छछूंदर दुनियाभर में
मचा रही उत्पात।

बातचीत करो–

1. कविता में नन्हा खरगोश सभी पर कैसे रौब जमाता होगा?
2. तुम्हें सबसे ज़्यादा डर किस–किस से लगता है?
3. डर लगने पर तुम क्या–क्या करते हो?
4. कैसी बातों को सुनकर तुम्हें मजा आता है?

कविता पढ़ो और लिखो–

(क) चींटी के पाँव कौन दबा रहा है?

————————————————————————————

(ख) बिल्ली किसके डर से अपने गाँव भागी?

————————————————————————————

कविता पढ़ो और सही (3) और गलत (X) का निशान लगाओ–

(क) हाथी दादा झूम के चला।

(ख) रौब जमाता फिरता सब पर नन्हा–सा खरगोश।

(ग) चीता सहमा हुआ बैठा है।

(घ) छछूंदर उत्पात मचा रही है।

(ङ) बाघ ने दाँत दिखाया।

चित्रों में कौन–कौन से जानवर दिखाई दे रहे हैं, उनके नाम लिखो।

————————————————————————————

————————————————————————————

————————————————————————————

सोचो और लिखो–

चूहा बिल्ली के डर से भागता है।

बिल्ली .... के डर से भागती है।

कुत्ता .... के डर से .... है।

बंदर .... है।

बब्बू और झब्बू

घोड़ा लाए बब्बू जी,
आ के बोले झब्बू जी,
इस घोड़े पर नहीं चढ़ेंगे,
ये घोड़ा है लद्दू जी।
घोड़ा अच्छा मिला नहीं,
बब्बू बोले गिला नहीं।

आलू लाए बब्बू जी,
आ के बोले झब्बू जी,
आलू–वालू नहीं चलेगा,
हम खाएँगे कद्दू जी।
कद्दू अच्छा मिला नहीं,
बब्बू बोले गिला नहीं।

चिड़िया लाए बब्बू जी,
आ के बोले झब्बू जी,
ये तो बस चीं–चीं करती,
हमें चाहिए पट्टू जी।
पट्टू अच्छा मिला नहीं,
बब्बू बोले गिला नहीं।

आ के बोले झब्बू जी,
चीज यही है हमको भाती,
क्या करना है लड्डू जी।
झूम रहे हैं बब्बू जी,
नाच रहे हैं झब्बू जी।

बातचीत करो–

1. बब्बू जी क्या–क्या लाये?
2. झब्बू जी को क्या पसन्द था?
3. तुम किन–किन जानवरों की सवारी करते हो ?
4. तुम कौन–कौन सी सब्जियाँ खाते हो ?

कविता देखकर पंक्ति पूरी करो–

(क) घोड़ा लाए ....,
आ के बोले ....,
इस घोड़े पर ....,
.... लद्दू जी।

(ख) .... बब्बू जी,

.... झब्बू जी,

ये तो बस ....,

हमें चाहिए .... ।

मिलान करो–

घोड़ा	चहचहाती है।
कुत्ता	हिन–हिनाता है।
चिड़िया	भौंकता है।
हाथी	दहाड़ता है।
शेर	चिंघाड़ता है।

खोजो, घेरो और लिखो–

ख	र	गो	श	ती
तो	क	ग	ला	त
ता	द्दू	हा	थी	र
ब	भा	लू	शे	ब
क	बू	त	र	त
री	चि	ड़ि	या	ख

तोता ....

....

पढ़ो और देखकर लिखो–

झब्बू बब्बू लद्दू लड्डू कद्दू

....

सोचो और लिखो–

नीचे मिठाइयों, पक्षियों, जानवरों और सब्जियों के नाम लिखे हैं। इन्हें सारणी में लिखो।

लड्डू, मैना, जलेबी, आलू , घोड़ा,

मूली, कौआ, रसगुल्ला, हाथी, कबूतर,

भिण्डी, सियार, कद्दू, चिड़िया, भालू, गुलाबजामुन।

क्र.सं.	मिठाई	पक्षी	जानवर	सब्जी
1.	रसगुल्ला	मैना	सियार	मूली
2.	————————	————————	————————	————————
3.	————————	————————	————————	————————
4.	————————	————————	————————	————————

पढ़ो और लिखो–

1. झब्बू जी को क्या–क्या पसन्द नहीं आया ?

————————————————————————————————

————————————————————————————————

2. झब्बू जी घोड़े पर क्यों नहीं चढ़े?

————————————————————————————————

————————————————————————————————

3. तुम बाज़ार से क्या–क्या लाना पसन्द करोगे?

————————————————————————————————

————————————————————————————————

पढ़ो और लिखो–

मिलती–जुलती आवाज़वाले नये शब्द बनाओ।

आलू	लालू	भालू	——————————
पट्टू	——————————	——————————	——————————
झब्बू	——————————	——————————	——————————

क्या तुम मेरी माँ हो?

एक 'माँ चिड़िया' अपने अंडे पर बैठी थी। अचानक अंडा थोड़ा उछला।

''अरे वाह!'' जल्दी ही अंडे में से मेरा बच्चा बाहर आएगा! फिर उसे ज़ोर की भूख लगेगी।

''मुझे अपने चूज़े के खाने के लिए कुछ लेकर आना चाहिए!'' माँ चिड़िया ने कहा।

फिर माँ चिड़िया फुर्र से उड़कर चली गई।

अंडा उछला। वो इतना उछला–कूदा,

उछला–कूदा कि उसमें से चिड़िया का बच्चा बाहर निकल आया!

''मेरी माँ कहाँ है?'' उसने कहा। उसने माँ को चारों तरफ़ खोजा। उसने ऊपर देखा। उसे माँ नहीं दिखी। उसने नीचे देखा। उसे माँ नहीं दिखी। ''चलो, मैं माँ को जाकर ढूँढ़ता हूँ'', उसने कहा। यह कहकर वह चल पड़ा। वह पेड़ से गिरा और फिर नीचे, और नीचे गिरता ही चला गया। चिड़िया का बच्चा अभी छोटा था। वह उड़ नहीं सकता था, पर वह चल सकता था। ''चलो मैं अपनी माँ को तलाशने निकलता हूँ'', उसने कहा। उसने माँ को पहले कभी नहीं देखा था। वह अपनी माँ को पहचानता भी न था। चलते–चलते वह अपनी माँ के पास से गुज़रा। परंतु उसने अपनी माँ को नहीं पहचाना।

फिर वह एक छोटी बिल्ली के पास पहुँचा। ''क्या तुम मेरी माँ हो?'' उसने बिल्ली से पूछा। बिल्ली बस उसे टकटकी लगाए घूरती रही। उसने कुछ नहीं कहा। बिल्ली उसकी माँ नहीं थी, इसलिए चिड़िया का बच्चा आगे बढ़ा। फिर वह एक मुर्गी के पास पहुँचा। ''क्या तुम मेरी माँ हो?'' उसने मुर्गी से पूछा। ''नहीं, मुर्गी ने जवाब दिया।'' छोटी बिल्ली उसकी माँ नहीं थी।

मुर्गी भी उसकी माँ नहीं थी। इसलिए चिड़िया का बच्चा आगे बढ़ा। ''मुझे अपनी माँ को खोजना है।'' उसने कहा। फिर वह एक कुत्ते के पास जा पहुँचा। ''क्या तुम मेरी माँ हो?'' उसने कुत्ते से पूछा। ''मैं तुम्हारी माँ नहीं हूँ।

मैं कुत्ता हूँ'', कुत्ते ने जवाब दिया।

छोटी बिल्ली उसकी माँ नहीं थी।

मुर्गी भी उसकी माँ नहीं थी।

कुत्ता भी उसकी माँ नहीं थी। इसलिए चिड़िया का बच्चा फिर आगे बढ़ा।

उसे एक गाय मिली। ''क्या तुम मेरी माँ हो?'' उसने गाय से पूछा। ''मैं तुम्हारी माँ कैसे हो सकती हूँ? मैं एक गाय हूँ।'' गाय ने कहा। छोटी बिल्ली और मुर्गी उसकी माँ नहीं थी। कुत्ता और गाय भी उसकी माँ नहीं थे।

क्या उसकी माँ थी भी?

''मेरी माँ थी'', ''मुझे यह पक्का पता है। मुझे उसे खोजना ही पड़ेगा। मैं उसकी अवश्य तलाश करूँगा। पक्का!''

चिड़िया के बच्चे ने कहा।

अब चिड़िया के बच्चे ने चलना छोड़ दिया। वह छोड़ने लगा। उसे एक टूटी–फूटी मोटरकार दिखाई दी।

क्या मोटरकार उसकी माँ हो सकती थी? नहीं, यह संभव नहीं था। चिड़िया का बच्चा रुका नहीं। तेज़ी से दौड़ता रहा।

फिर उसने नीचे की ओर झुककर देखा। उसे एक नाव दिखाई पड़ी। नाव को देखकर उसने कहा, ''वह रही मेरी माँ!'' वह नाव की तरफ देखकर चिल्लाया, परंतु नाव रुकी नहीं। नाव चलती ही गई।

फिर उसने सिर ऊपर उठाकर देखा। उसे एक बड़ा हवाई जहाज़ दिखाई दिया। ''माँ, मैं यहाँ पर हूँ। वह चिल्लाया।

परंतु हवाई जहाज़ नहीं रुका। वह उड़ता चला गया। तभी चिड़िया के बच्चे को बड़ी–सी चीज़ दिखाई दी। यह ज़रूर उसकी माँ होगी। ''माँ वहाँ है! ''वह मेरी माँ है!'' वह चिल्लाया। और दौड़कर उसके एकदम पास आया। ''माँ, माँ! मैं यहाँ हूँ माँ!'' उसने उस बड़ी मशीन से कहा। परंतु उस बड़ी मशीन से केवल ''भप्प'' की ज़ोरदार आवाज़ आई। ''तो तुम भी मेरी माँ नहीं हो'', चिड़िया के बच्चे ने कहा।

''तुम तो एक बड़ी मशीन हो। मुझे यहाँ से निकलना चाहिए!'' परंतु चिड़िया के बच्चे के लिए वहाँ से भागना मुश्किल हो गया। तुरंत बड़ी मशीन ऊपर और ऊपर उठी। वह ऊपर उठी। और उसके साथ–साथ चिड़िया का बच्चा भी ऊपर और ऊपर उठा।

पर देखो वह बड़ी मशीन अब कहाँ जा रही है? ''अरे, बाप रे!'' यह बड़ी मशीन अब मेरे साथ क्या करेगी?

मुझे यहाँ से जल्दी निकालो!''

बस तभी वह बड़ी मशीन रुक गई।

''मैं कहाँ हूँ ?'' चिड़िया के बच्चे ने कहा।

''मैं अब घर जाना चाहती हूँ। मुझे अपनी माँ चाहिए।''

तभी कुछ हुआ। बड़ी मशीन ने चिड़िया के बच्चे को उठाकर उसे वापिस घोंसले में रख दिया।

चिड़िया का बच्चा अंत में अपने घर सुरक्षित पहुँच गया। बस तभी माँ चिड़िया भी पेड़ पर वापिस आई।

''क्या तुम्हें पता है कि मैं कौन हूँ?'' उसने अपने बच्चे से पूछा।

''हाँ मुझे मालूम है कि तुम कौन हो,'' चिड़िया के बच्चे ने जवाब दिया।

''तुम छोटी बिल्ली नहीं हो। तुम मुर्गी नहीं हो। तुम कुत्ता नहीं हो। तुम गाय नहीं हो। तुम नाव नहीं हो, न ही तुम हवाई जहाज़ हो, न ही तुम बड़ी मशीन हो! तुम एक चिड़िया हो, और तुम मेरी माँ हो।''

कहानी सुनाने के बाद बच्चों के साथ कुछ ऐसी बातचीत की जा सकती है–

- छोटी बिल्ली ने चूज़े की बात का जवाब क्यों नहीं दिया होगा? वह चूज़े को क्यों घूर रही होगी?
- अंडे से निकलने के बाद चूज़े को उसकी माँ क्यों नहीं मिली?
- चिड़िया का बच्चा उड़ क्यों नहीं सकता था?

– ऐसे कौन–कौन से काम हैं जो तुम पहले नहीं कर पाते थे? पर अब अपने–आप कर लेते हो।

– चूज़ा मोटरकार को देखते ही कैसे समझ गया कि यह उसकी माँ नहीं हो सकती?

सोचो

– ''मुझे पक्का पता है कि मेरी माँ थी।'' चूज़े ने कहा। चूज़े को कैसे पता था कि वह उसकी माँ थी? वह तो अब तक अंडे में था।

– जब बहुत देर तक चूज़े को उसकी माँ नहीं मिली तो वह दौड़ने लगा। दौड़ते–दौड़ते वह क्या सोच रहा होगा?

– चिड़िया को तो पता भी नहीं चला कि उसके पीछे से चूज़ा कहाँ–कहाँ भटकता रहा। बताओ, चूज़े ने अपनी माँ को अपनी कहानी कैसे सुनाई होगी? फिर माँ ने उसे क्या कहा होगा?

अंतर बताओ

चूज़े की माँ बाक़ी सबसे अलग थी। बताओ, उसमें ओर बाक़ी जानवरों में क्या अंतर था?

	चिड़िया	गाय	मुर्गी
पैर	————————	————————	————————
पंख	————————	————————	————————
पूँछ	————————	————————	————————
मुँह	————————	————————	————————
रंग	————————	————————	————————
आकार	————————	————————	————————

बच्चा अपनी समझ, अपनी भाषा में जो भी बोले उसे स्वीकार करें और उन्हें प्रोत्साहित करें। बच्चा जब इन सवालों के जवाब देगा तो आप यह देख सकेंगे कि उसके बोलने का कौशल कहाँ तक विकसित हुआ है। कहाँ उसे दिक़्क़त आ रही है। बच्चों से ऐसे सवाल ज़रूर करें जिनमें उन्हें बाहरी दुनिया से संपर्क करने के अवसर मिलें, जैसे–चिड़िया के बच्चे को क्या कहते हैं? अपने आसपास पता करो। इस अभ्यास के जवाब के लिए बच्चे अपने साथियों तथा अन्य लोगों से बात करेंगे।

उदाहरण 1– चित्र वर्ग पहेली भरो – बच्चों के पास विद्यालय आने से पहले अच्छा ख़ासा शब्द–भंडार होता है। वे शब्दों के धनी और शब्दों के जादूगर होते हैं। संकेतभर मिलने से ही वे अनेक शब्दों को गढ़ना सीख जाते हैं। उनकी इसी कुशलता, सृजनशीलता को ध्यान में रखकर चित्र वर्ग पहेली भरवाने का काम करवाया जा सकता है।

संकेत–

बाएँ ये दाए ऊपर से नीचे

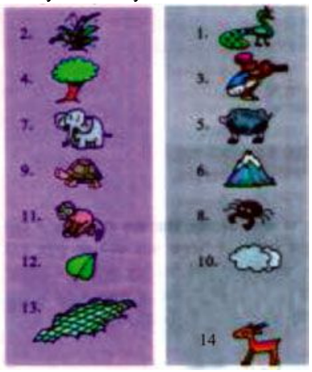

1	6	2	3	5
	7		4	
8				
9			10	14
		11		
12		13		

उदाहरण 2 – कविता पूरी करो

धम्मक धम्मक आता ....

धम्मक धम्मक जाता ....

छम–छम, छम छम नाचे ....

टें टें करता .... शोर।

.... कूदे इधर – उधर।

.... ताके टुकर – टुकर।

उदाहरण 3 – छोटी बिल्ली टकटकी लगाए चूज़े को देखती रही। नीचे टकटकी की आवाज़ से मिलते–जुलते शब्द लिखे हैं। इनका इस्तेमाल करते हुए अपने दोस्तों को वाक्य सुनाओ–

(क) टकटकी

(ख) चटपटी

(ग) फटफटी

(घ) अटपटी

(ङ) कटकटी

(च) भटभटी

इस अभ्यास में बच्चों को दिए गए शब्दों से वाक्य बनाने हैं।

उदाहरण 4 – सुनकर लिखो

बच्चों के साथ मिलकर उनकी कॉपी या काग़ज़ पर एक ऐसा वर्ग बनाएँ जिसमें कुल 16 ख़ाने हों। ख़ाने इतने बड़े हों कि बच्चे उसमें आसानी से चार अक्षरवाले शब्द भी लिख सकें। बच्चों से कहें कि–

- मौखिक रूप से दिए गए निर्देश को ध्यान से सुनें।

- सुनकर वर्ग में शब्द लिखें।

कुछ निर्देश इस तरह दिए जा सकते हैं–

- पहली पंक्ति के पहले ख़ाने में अपना नाम लिखो।
- दूसरी पंक्ति के तीसरे ख़ाने में अपनी मनपसंद मिठाई का नाम लिखो।
- तीसरी पंक्ति के आख़िरी ख़ाने में अपने दोस्त का नाम लिखो।
- चौथी पंक्ति के दूसरे ख़ाने में सूरज का चित्र बनाओ, आदि।

सलोनी			
		जलेबी	
			नेहा

उदाहरण 5– चित्र पर आधारित एक छोटी–सी मज़ेदार कहानी बनाएँ। इसमें एक रोचक बात यह रहेगी कि इस कहानी में पशु–पक्षियों के नाम की जगह केवल चित्र होंगे। बच्चे उन चित्रों की पहचान करते हुए उनके नाम लिखेंगे और कहानी को आगे बढ़ाएँगे। कहानी कुछ इस तरह है।

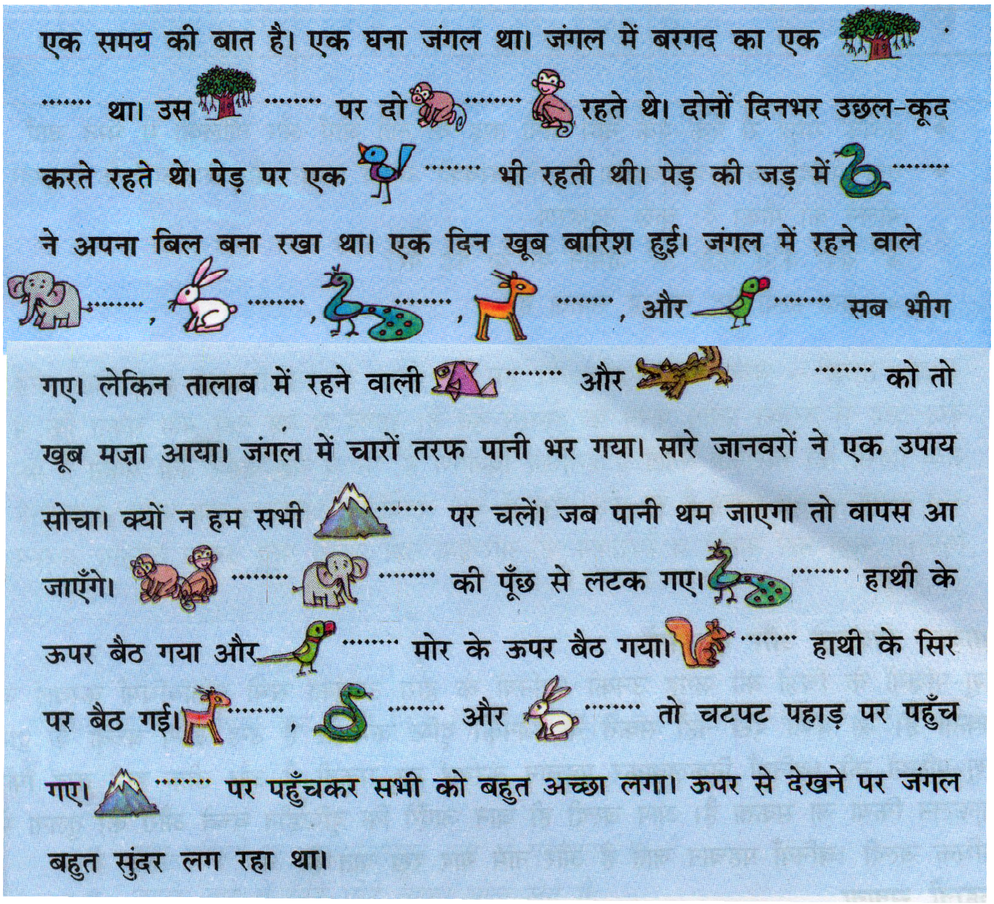
एक समय की बात है। एक घना जंगल था। जंगल में बरगद का एक .... था। उस .... पर दो .... रहते थे। दोनों दिनभर उछल-कूद करते रहते थे। पेड़ पर एक .... भी रहती थी। पेड़ की जड़ में .... ने अपना बिल बना रखा था। एक दिन खूब बारिश हुई। जंगल में रहने वाले ...., ..., ..., ..., और .... सब भीग गए। लेकिन तालाब में रहने वाली .... और .... को तो खूब मज़ा आया। जंगल में चारों तरफ पानी भर गया। सारे जानवरों ने एक उपाय सोचा। क्यों न हम सभी .... पर चलें। जब पानी थम जाएगा तो वापस आ जाएँगे। .... की पूँछ से लटक गए। .... हाथी के ऊपर बैठ गया और .... मोर के ऊपर बैठ गया। .... हाथी के सिर पर बैठ गई। ...., ... और .... तो चटपट पहाड़ पर पहुँच गए। .... पर पहुँचकर सभी को बहुत अच्छा लगा। ऊपर से देखने पर जंगल बहुत सुंदर लग रहा था।

किसी से कहना मत

एक रात की बात है। टीटू अपने खेत की रखवाली कर रहा था। अचानक उसे दिखा– आसमान से उतरता पंखोंवाला हाथी।

हाथी बहुत मिलनसार निकला। वह टीटू से बात करने लगा। कुछ ही देर में दोनों में दोस्ती हो गई। हाथी ने टीटू को बताया– ''हमारे यहाँ पर तो तरह–तरह की मिठाई और फल होते हैं, बहुत बड़े–बड़े। हमारे अंगूर तुम्हारे सेब जितने और सेब तरबूज जितने बड़े होते हैं।'' टीटू ने कहा– ''अरे यार, कभी मुझे भी अपने साथ ले चलो।''

हाथी बोला– ''ठीक है, अगली बार तुम्हें ले तो चलूँगा, पर किसी से कहना मत। कल ठीक इसी वक़्त मिलना यहाँ पर।'' और हाथी उड़ गया आसमान में। अब टीटू से रहा न गया। उसने हाथीवाली बात अपनी पत्नी बसंती को बता दी। बसंती भी टीटू के साथ जाने की ज़िद करने लगी। टीटू ने कहा– ''ठीक है, तुम भी चलना, पर किसी से कहना मत।'' लेकिन बसंती से भी रहा न गया। उसने बता दिया चाची को, चाची ने बताया चाचा को, चाचा ने दादा को, दादा ने दादी को, दादी ने. .. और सब के सब आसमान की सैर के लिए आ गए बाग में।

हाथी आया। इतने आदमी– औरतों को देखकर घबराया; पर टीटू और उसकी पत्नी ने उसे सभी को ले जाने के लिए मनाया। फिर टीटू ने पकड़ी हाथी की पूँछ, बसंती ने पकड़े टीटू के पैर। इस तरह सब के सब लटक गए एक–दूसरे के पैर पकड़कर। हाथी उड़ चला आसमान में।

बसंती ने पूछा– ''टीटू, वहाँ अंगूर कितने बड़े होते हैं?''

''सेब जितने बड़े।'' ''और सेब कितने बड़े होते हैं?''

''तरबूज जितने।'' ''तो तरबूज कितने बड़े होते हैं?''

''बहुत बड़े।'' ''कितने बड़े?'' ''ए... इतने बड़े!'' टीटू ने हाथ फैलाकर बताया। फिर क्या! सब गिरे नीचे धड़ाम–धड़ाम। कोई पीठ के बल, तो कोई कंधे के बल गिरा। और सबके ऊपर गिरा टीटू आराम से।

बातचीत करो–

1. अगर वहाँ अंगूर सेब जितने, सेब तरबूज जितने होंगे, तो लड्डू, जलेबी, आम, केले आदि चीजें वहाँ कितनी बड़ी होंगी?
2. यदि तुम्हारे पंख होते तो तुम क्या करते?
3. टीटू ने हाथीवाली बात सबसे पहले किसे बताई?
4. लोगों को हाथीवाली बात का पता कैसे चला?
5. टीटू आसमान में उड़नेवाले हाथी के बारे में किसी को नहीं बताता तो क्या होता?
6. तुम अपनी बातें किन–किन को बताते हो?
7. यदि हाथी की सूँड़ न होती तो क्या होता?

देखो, सोचो और जोड़ी बनाओ–

जोड़ी बनाओ–

चाचा–चाची	दादा–दादी
....	....
....	....
....	....
....	....

एक जैसी आवाजवाले शब्द बनाओ।

टीटू	नीटू	....	....
टक	....	....	....
चमचम	....	....	....

इसी तरह के नए शब्द बनाओ।

सोचो और लिखो–

(क) चाचा बोले	चाची बोलीं
.... आये	मामी आई
मौसा लाए	.... लाईं
दादा नाचे	.... नाचीं
.... .हँसे	नानी हँसी

कहानी पढ़कर पंक्ति पूरी करो–

(मिलनसार, टीटू, रखवाली, पत्नी, आसमान)

1. टीटू अपने खेत की .... कर रहा था।
2. बसंती भी .... के साथ जाने की जिद करने लगी।
3. टीटू और उसकी .... ने उसे सभी को साथ ले जाने के लिये मनाया।
4. हाथी उड़ चला .... में।
5. हाथी बहुत .... निकला।

खोजो, घेरो और लिखो–

नीचे दिए गए चित्रों को देखकर सारणी में मिठाईयों, जानवरों और फलों के नाम ढूँढ़कर घेरा लगाओ और नीचे दिए गए खाली जगहों को भरो।

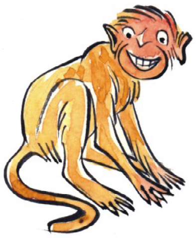

बं	अं	गू	र	ल	ड्	डू
द	गा	य	आ	र	क	ब
र	खा	जू	म	स	बु	क
त	र	बू	ज	गु	मे	री
अ	की	ज	के	ल्ला	चू	हा
ना	र	ले	ला	हा	थी	घो
र	जी	बी	प	पी	ता	ड़ा

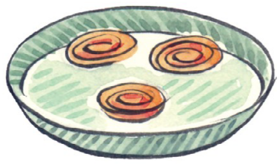

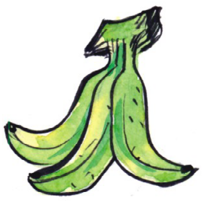

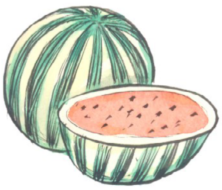

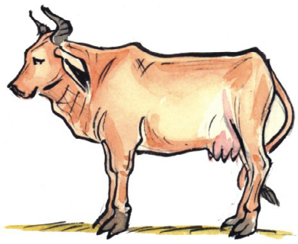

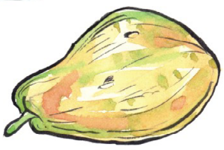

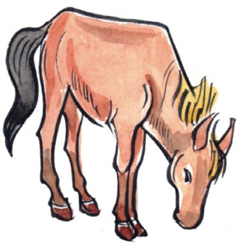

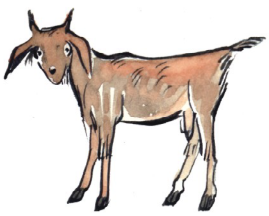

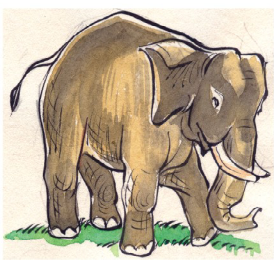

बंदर	....	....	....
....	....	....	....
....	....	....	....
....	....	....	....

कहानी में 'अ' अक्षर से शुरु होनेवाले शब्दों को ढूँढ़कर लिखो।

....	....	....	....
....	....	....	....
....	....	....	....

कहानी पढ़ो और लिखो–

1. टीटू ने हाथीवाली बात किसे बताई?

   ———————————————————————————————————

2. सब लोग किस पर लटककर आसमान में उड़े?

   ———————————————————————————————————

3. टीटू ने हाथी को कहाँ से पकड़ा?

   ———————————————————————————————————

पहेलियाँ

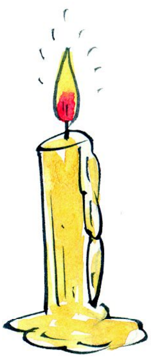

पहेली बूझो–

क) दिन में सोये, रात में रोये,
जितना रोये उतना खोये।

(ख) राजा रानी सुनो कहानी
एक घड़े में दो रंग पानी।

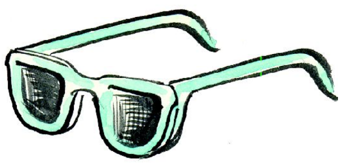

(ग) गोल हूँ पीला हूँ
खाओ तो मुँह खट्टा

(ङ) चढ़े नाक पर, पकड़े कान,
बोलो – बोलो कौन शैतान।

(च) हमने देखा ऐसा बन्दर
जो उछले पानी के अन्दर।

चित्र पहेली

क		ल		
ल				ला
	छ			
				घ
	री			

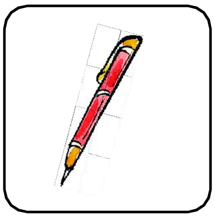

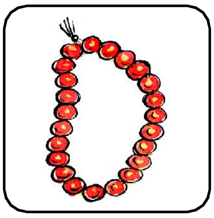
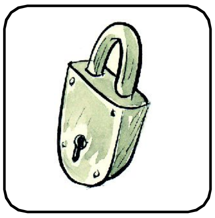
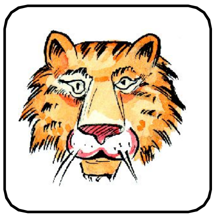
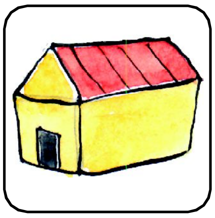

नीचे दी गई वर्ग–पहेली में से फलों के नाम खोजकर लिखो।

ली	अ	आ	म	के
ची	ना	ड	प	ला
अ	ना	र	पी	जा
क	स	म	ता	मु
ना	श	पा	ती	न

लीची

____

____

____

____

____

बूझो मेरा नाम बनाओ मेरा चित्र

दोस्तों के साथ पहेली बनाने और बूझने का खेल खेलो।

मेरी लाल चोंच है हरे पंख हैं। ___________________	दो चक्केवाली हूँ घंटी मेरी बजती टिन–टिन। ___________________
लम्बी हूँ लिखने के काम आती हूँ। ___________________	लाल हूँ गोल हूँ, मीठा हूँ। ___________________
पानी में रहता हूँ, कड़ी पीठ है, धीरे–धीरे चलता हूँ। ___________________	चार पैर हैं, बैठने के काम आती हूँ। ___________________
कद के छोटे, काम के हीन, कान के पास बजाते बीन। ___________________	हरी–हरी मछली के हरे–हरे अण्डे, जल्दी से बूझो और खोजो ये अण्डे। ___________________

पहेलियाँ पढ़ो और सही चित्र के सामने लिखो।

काली हूँ, निराली हूँ,
मीठी बोली वाली हूँ।
आसमान से टपका हूँ,
बटन दबाते चमक दिखाऊँ,
अँधेरे को दूर भगाऊँ।
जल्दी से मुझको थामो,

मैं पिघलती हूँ पर बर्फ नहीं हूँ,
जलती हूँ पर दीपक नहीं हूँ।

न बाजार में बिकता हूँ,
ज्यादा देर न टिकता हूँ,
नहीं तो बस पानी मानो।

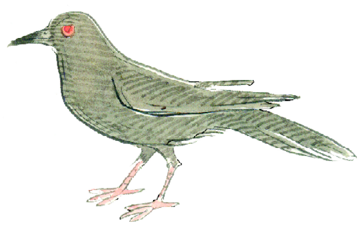	
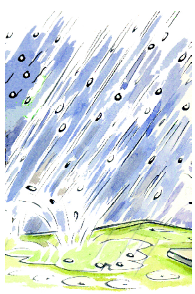	

इकाई–III

साहित्य की अनुभूति

- **साहित्य से हम क्या समझते हैं?**
- **साहित्य की विभिन्न विधाएँ**

– एक टोकरी–भर मिट्टी (कहानी)

– उदात्त संगीत–मुक्तक (कविता)

– पिस्ते बादाम (कहानी)

– दूँगी फूल कनेर के (कविता)

– प्रायश्चित (कहानी)

– गुलेलबाज लड़का (कहानी)

इकाई – III
साहित्य की अनुभूति

पाठ की रूपरेखा
- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
- **साहित्य से हम क्या समझते हैं?**
- **साहित्य की विभिन्न विधाएँ**

– एक टोकरी–भर मिट्टी (कहानी)

– उदात्त संगीत–मुक्तक (कविता)

– पिस्ते बादाम (कहानी)

– दूँगी फूल कनेर के (कविता)

– प्रायश्चित (कहानी)

– गुलेलबाज लड़का (कहानी)

परिचय :

जब हम भाषा की किसी भी किताब में से किसी भी विधा को पढ़ने और उसमें डूबने लगते हैं तो उसका अर्थ होता है कि हम कुछ क्षणों के लिए संसार की जंजीरों से मुक्त हो जाते हैं। हमें इस स्वतन्त्रता का क्षणिक ही सही, एक अहसास साहित्य दिलाता है।

इसमें हम समझने की कोशिश करेंगे कि साहित्य क्या है? साहित्य की आवश्यकता क्यों है? साहित्य से हम क्या समझते हैं? साहित्य की विभिन्न विधाएँ कौन–कौन सी हैं व इन विधाओं को पढ़ने–पढ़ाने का तरीका क्या होना चाहिए। वस्तुतः हममें से अधिकतर व्यक्ति साहित्य की अनुभूति से अनजान होते हैं। प्रस्तुत इकाई में साहित्य की इन्हीं बातों पर चर्चा करने का प्रयास किया गया है।

उद्देश्य :
- साहित्य को क्यों पढ़ें? इस प्रश्न को समझ पाना।
- साहित्य क्या है? इस प्रश्न को हम समझ पाएँगे।
- साहित्य के विस्तृत रूप को समझ पाएँगे?
- साहित्य की विभिन्न विधाओं को कैसे पढ़ना–पढ़ाना चाहिए आदि की समझ बना पाएँगे।
- साहित्य की विभिन्न विधाओं को पहचान सकेंगे?
- साहित्य पर अपने स्वतन्त्र विचार प्रदर्शित कर सकेंगे।
- साहित्य का उपयोग स्कूली एवं सामाजिक जीवन में समझ सकेंगे।

साहित्य से हम क्या समझते हैं?

साहित्य एक ऐसा शब्द है जिसमें भाषा की सभी प्रकार की विधाओं का समावेश है। चाहे वह कहानी हो, कविता हो, गीत हो, व्यंग हो, पत्र हो, पहेली हो, संस्मरण हो, यात्रा–वृतान्त हो, डायरी–लेख हो, निबन्ध हो, हास्य हो या लोकगीत हो। इन सभी विधाओं को साहित्य की श्रेणी में रखा जाता है।

साहित्य की परिभाषा को दो–चार लाइनों में बाँधना एक कठिन कार्य है क्योंकि भाषा की किसी भी विधा से यदि व्यक्ति को आनन्द की अनुभूति होती है तो वह साहित्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। साहित्य की विधाओं को लेकर अलग–अलग लोगों के अपने–अपने अलग–अलग सोच–विचार हैं।

जब लोगों से इस बारे में जानना चाहा तो अलग–अलग विचार निकल कर सामने आए हैं। कुछ लोगों ने जहाँ साहित्य का मतलब बहुत सारी कहानियों व कविता की किताबों से लिया है तो कुछ अन्य ने इसे कल्पना जगत में सैर कराने का माध्यम बताया है। कई लोगों ने साहित्य को अपनी भावनाओं को उकेरता हुआ आईना माना है जिसमें वह स्वयं के जीवन का, अपनी खुशी, अपने गम का प्रतिबिम्ब देख पाता है। साहित्य सामाजिक नियमों को समझने में मदद करता है, वहीं कहानियों आदि से पुरातनकालीन समाज को जानने समझने का अवसर मिलता है। कुछ का कहना है कि साहित्य इतिहास को तो नहीं बता पाता परन्तु उस काल की अलग–अलग सोच के बारे में बताता है। यदि इन सब विचारों का निचोड़ देखें तो हम पाते हैं कि साहित्य जीवन के विभिन्न पक्षों/आयामों से न केवल हमारा परिचय कराता है बल्कि उन आयामों का अनुभव भी कराता है बिना वास्तविक अनुभव किये। उदाहरण के लिए किसी ऐतिहासिक कहानी को पढ़ते हुए हम उस काल, उस समय के लोगों के जीवन, परिस्थितियों और कठिनाइयों, सभी को महसूस कर रहे होते हैं। साहित्य के बारे में एक पाठक का विचार है कि साहित्य माने एक कॉफी का कप, शान्ति और एक अच्छी सी किताब। वहीं एक पाठिका ने इसे गीत की पंक्तियों से कुछ इस तरह अभिव्यक्त किया है।

'कोई ला के मुझे दे–दे

एक छुट्टी वाला दिन

एक अच्छी सी किताब'

इसके साथ ही जिन इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो सकती, साहित्य उनके बारे में सोचने की भी अनुमति देता है।

साहित्य की मुख्यतः दो विधाएँ हैं– गद्य और पद्य। सामान्यतः गद्य को विचार प्रधान साहित्य की कोटि में और पद्य को भाव प्रधान साहित्य की कोटि में रखा जाता है। पद्य अर्थात कविता को भावात्मक तथा गद्य को बौद्धिक, तथ्यात्मक और सूचनात्मक अभिव्यक्ति की विधा माना जाता है। अतः दोनों की शिक्षण प्रविधि में भी अंतर हो जाता है।

यद्यपि गद्य–विधा में भी इस तरह की ललित रचनाएँ होने लगी हैं जिन्हें हम कविता के समान रसात्मक और भावोन्मेष्कारी रचना कह सकते हैं तथापि गद्य मुख्यतः ज्ञान–विज्ञान की अभिव्यक्ति का माध्यम है। ज्ञान–विज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, दर्शन, मनोविज्ञान, कला–कौशल, वाणिज्य–व्यवसाय आदि से संबंधित रचनाओं का सृजन गद्य की विधा में ही संभव है। हमारे समस्त सामाजिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक क्रियाकलाप भी गद्य के ही माध्यम से सम्पन्न होते हैं। इस प्रकार गद्य का क्षेत्र बहुत व्यापक है और इसकी अनेक विधाएँ और अनेक शैलियाँ हैं। इनमें से कुछ उदाहरण हम आगे पढ़ेंगे।

क्या हमने कभी सोचा है कि हमें या हमारे समाज को साहित्य की आवश्यकता क्यों है? वे क्या कारण हैं कि लोगों को साहित्य का अध्ययन करना चाहिए। इस तरह के प्रश्नों का जवाब निश्चित तौर पर हर एक व्यक्ति का अलग होगा और सभी लोग साहित्य की आवश्यकता, लाभ एवं गुणों को अलग–अलग रूप में प्रदर्शित करेंगे।

इस तरह सभी अपने–अपने तरीके से साहित्य की आवश्यकता पर तर्क देते हैं। जैसे साहित्य के जरिए परम्परा बनती है, साहित्य हमें पढ़ने की आदत डालने में मदद करता है, इसके द्वारा हमें आनन्द व सुख प्राप्त होता है, साहित्य के द्वारा हमें संस्कृति एवं इतिहास की जानकारी प्राप्त होती है, साहित्य से हमें जीवन जीने की सही प्रेरणा मिलती है आदि। इस प्रकार यदि हम मोटे तौर पर सोचें तो साहित्य पढ़ने का जो मुख्य उद्देश्य आएगा वह है साहित्य का सन्दर्भ जीवन मात्र से है क्योंकि जीवन में हमें जो क्षण सुख या आनन्द देते हैं ऐसा ही आनन्द व सुख हमें साहित्य को पढ़ने से मिलता है।

हमें साहित्य कुछ समय के लिए इस सांसारिक मोहमाया से दूर ले जाता है या यूँ कहें कि यह हमें इस भागम–भाग की दुनिया में कुछ समय आराम करने का मौका प्रदान करता है। आप सोच रहे होंगे कि ऐसा कैसे होता है? तो जरा आप लोग सोचिए कि जब हम साहित्य की किसी विधा को (कहानी, कविता, नाटक, जीवनी आदि) पढ़ने बैठते हैं तो हम उसमें डूबने लगते हैं और हमें यह पता नहीं होता कि हम कहाँ बैठे हैं, दुनिया में क्या हो रहा है, हमें इतना सारा कार्य या काम करना है। इस तरह साहित्य हमें इन बंदिशों से मुक्ति दिलाता है। हमें वास्तविक स्वतन्त्रता का अहसास साहित्य ही दिलाता है चाहे वह क्षणिक ही क्यों न हो। साहित्य हमें स्वतन्त्र अभिव्यक्ति के द्वारा भी आनन्द व स्वतन्त्रता का अहसास कराता है। वह तब भी होता है जब हम साहित्य के पढ़े भाग का वर्णन स्वतन्त्र रूप से कहीं और कर रहे होते हैं।

अब आप लोग सोच रहे होंगे कि साहित्य का भाषा विषय में क्या उपयोग है? इस तरह के प्रश्न उठना लाजमी हैं लेकिन इस प्रश्न का उत्तर है साहित्य और भाषा का बहुत गहरा सम्बन्ध है क्योंकि जब हम साहित्य से विभिन्न प्रकार के सुख, आनन्द को प्राप्त करते हैं तो उसमें भाषा का बहुत बड़ा हाथ होता है। भाषा के द्वारा ही साहित्य की विधा को पढ़ते हैं। इस प्रकार साहित्य हमारी भाषा को समृद्ध बनाता है, सोच को विकसित व विस्तृत करता है।

यह मान सकते हैं कि साहित्य हमारे भाषा विकास के लिए एक अमूल्य धरोहर है। इसके सहारे भाषा समृद्ध और विकसित होती रहती है। भाषा को समझने, बोलने, पढ़ने, सुनने के लिए हमें साहित्य को हमेशा पढ़ते रहना चाहिए।

इस इकाई में इन रचनाओं को रखने का मुख्य उद्देश्य ही यही है : (1) पढ़ने की आदत विकसित करना। (2) विभिन्न प्रकार के एवं विभिन्न भाषाओं के साहित्यों से परिचित कराना। (3) अच्छे साहित्य के संकलन की प्रकृति को बढ़ावा देना।

कुछ प्रश्न :

• साहित्य के संदर्भ में आपके क्या विचार हैं? क्या आपको लगता है कि आपको, आपके मित्रों को, बच्चों को साहित्य पढ़ना चाहिए? और क्यों?

• 'फुरसत के क्षण साहित्य के संग' क्या मनोरंजन के वर्तमान साधनों के मध्य आज भी सार्थक है, क्यों और कैसे? अपनी पठन सामग्री के आधार पर विचार करें।

हम सभी अलग–अलग तरह से सोचते हैं, हमारे विचारों और अभिव्यक्तियों पर हमारे दृष्टिकोण, परिस्थितियों व अनुभवों का बहुत प्रभाव पड़ता है तथा यही प्रभाव लेखन की शैलियों में भी दिखाई देता है। विभिन्न लेखकों की रचनाओं को पढ़कर आप इनके लिखने की शैलियों को समझ पाएँगे। कुछ रचनाकारों ने समाज का यथार्थ चित्रण अपनी रचनाओं में किया है कुछ ने कल्पना आधारित संसार बुना है तो कुछ ने व्यंग्य की शैली को अपनाते हुए अपने विचारों को पैना रूप दिया है।

कुछ रचनाओं में बाल मन की भावनाओं का बहुत ही सजीव वर्णन किया गया है और कुछ रचनाओं में आज़ादी, भ्रष्टाचार, जाति जैसे गंभीर मुद्दों पर सवाल उठाये गए हैं।

संकलन में कुछ कविताएँ–कहानियाँ तो ऐसी हैं जिनके साथ अभ्यास दिये गए हैं। ये अभ्यास आपको साहित्य को समझने में मदद करेंगे। साथ ही कहानी को विभिन्न आयामों से सोचने का मौका देंगे।

संकलन के दूसरे हिस्से में कुछ ऐसी कहानियाँ–कविताएँ हैं जिन्हें पढ़कर आप उसका आनन्द ले सकें, साहित्य को महसूस कर सकें। आप अपनी रुचि के साहित्य का अधिकाधिक अध्ययन एवं संकलन भी कर सकते हैं।

आप संकलित साहित्य का अध्ययन करने के साथ–साथ कुछ इस तरह की गतिविधियाँ भी कर सकते हैं, जिनसे साहित्य के प्रति आपकी समझ और पुख़्ता होगी। मसलन–

- संकलित साहित्य का अध्ययन कर उसका अपनी भाषा में संक्षेपीकरण करें।

- नाटक को कहानी, कहानी को कविता में बदलना अर्थात् विधा परिवर्तन करके आप एक कहानी को कई तरह से उपयोग कर सकते हैं।

- किसी रचना का नाटक मंचन करना : मंचन करने में आप किन–किन बातों का ध्यान रखेंगे? जैसे– सारगर्भित भाषा शैली, शब्दों का चुनाव कैसा होगा, सृजनात्मकता व रोचकता का समावेश एवं प्रभावी प्रस्तुतीकरण आदि।

- किसी रचना को यदि आपको विभिन्न स्तर के श्रोताओं को सुनाना है तो आपकी तैयारी कैसी होगी या आप किन–किन बातों का ध्यान रखेंगे? जैसे अगर 6–7 साल के बच्चों को इस संकलन की कोई रचना सुनानी है तो उसकी भाषा में क्या बदलाव करेंगे, घटनाओं का क्रम कैसे रखेंगे और प्रस्तुतीकरण के समय किन–किन चीज़ों का ध्यान रखेंगे? ऐसे ही अगर आपका श्रोता 7वीं या 8वीं कक्षा का बच्चा है तो उसके साथ आप किन–किन बातों का समावेश करेंगे?

आपसे अपेक्षा है कि आप प्रत्येक रचना को ध्यान से पढ़ें एवं गहराई से समझें। रचनाओं को केवल घटनाओं का एक क्रम ही न समझें बल्कि इनमें दिख रहे पात्रों के भावों और उनके चरित्र के अलग–अलग पहलुओं को समझें। इन रचनाओं पर आपस में चर्चा करें।

आपने भी अब तक कई कहानियाँ सुनी या पढ़ी होंगी। अपने क्षेत्र के लेखकों की रचनाओं को भी सुना होगा या पढ़ा होगा। आप भी उन कहानियों का एक संकलन बनाएँ ताकि अन्य लोग भी इन्हें पढ़ें, ठीक वैसे ही जैसे आप अन्य लेखकों की रचनाएँ इस कोर्स में पढ़ रहे हैं। इसका एक प्रभाव यह भी होगा कि आपमें अच्छे साहित्य के संकलन की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलेगा। आपके साहित्य भंडार में वृद्धि होगी। तो इन रचनाओं को पढ़ें और साहित्य का आनन्द महसूस करें।

साहित्य की विभिन्न विधाएँ
एक टोकरी–भर मिट्टी (कहानी)

किसी श्रीमान जमींदार के महल के पास एक गरीब अनाथ विधवा की झोंपड़ी थी। जमींदार साहब को अपने महल का हाथा उस झोपडी तक बढ़ाने की इच्छा हुई। विधवा से बहुत बार कहा कि अपनी झोपड़ी हटा ले। पर वह तो कई जमाने से वहीं बसी थी। उसका प्रिय पति और इकलौता पुत्र भी उसी झोपड़ी में मर गया थे। पतोहू भी एक पाँच बरस की कन्या को छोड़कर चल बसी थी। अब यही उसकी पोती इस वृद्धाकाल में एकमात्र आधार थी। जब कभी उसे अपनी पूर्व स्थिति की याद आ जाती तो मारे दुःख के फूट–फूटकर रोने लगती थी और जब से उसने अपने श्रीमान पड़ोसी की इच्छा का हाल सुना तब से वह मृतप्राय हो गई थी। उस झोपड़ी में उसका मन इतना लग गया था कि बिना मरे वहाँ से वह निकलना ही नहीं चाहती थी। श्रीमान के सब प्रयत्न निष्फल हुए। तब वे अपनी जमींदारी चाल चलने लगे। बाल की खाल निकालने वाले वकीलों की थैली गरम कर उन्होंने अदालत से झोंपड़ी पर अपना कब्जा कर लिया और विधवा को वहाँ से निकाल दिया। बिचारी अनाथ तो थी ही। पास–पड़ोस में कहीं जाकर रहने लगी।

एक दिन श्रीमान उस झोंपड़ी के आसपास टहल रहे थे और लोगों को काम बतला रहे थे कि इतने में वह विधवा हाथ में एक टोकरी लेकर वहाँ पहुँची। श्रीमान ने उसको देखते ही अपने नौकरों से कहा कि उसे वहाँ से हटा दो। पर वह गिड़गिड़ाकर बोली– ''महाराज, अब तो यह झोंपड़ी तुम्हारी ही हो गई है। मैं उसे लेने नहीं आई हूँ। महाराज क्षमा करें तो एक बिनती है।'' जमींदार साहब के सिर हिलाने पर उसने कहा–''जब से यह झोंपड़ी छूटी है तब से मेरी पोती ने खाना–पीना छोड़ दिया है। मैंने बहुत कुछ समझाया पर वह एक नहीं मानती। यही कहा करती है अपने घर चल, वहीं रोटी खाऊँगी। अब मैंने यह सोचा है कि इस झोंपड़ी में से एक टोकरी–भर मिट्टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी पकाऊँगी। इससे भरोसा है कि वह रोटी खाने लगेगी। महाराज, कृपा करके आज्ञा दीजिए तो इस टोकरी में मिट्टी ले जाऊँ।'' श्रीमान ने आज्ञा दी।

विधवा झोंपड़ी के भीतर गई। वहाँ जाते ही उसे पुरानी बातों का स्मरण हुआ और उसकी आँखों से धारा बहने लगी। अपने आन्तरिक दुःख को किसी तरह सम्हालकर उसने अपनी टोकरी मिट्टी से भर ली और हाथ से उठाकर बाहर ले आई। फिर हाथ जोड़कर श्रीमान से प्रार्थना करने लगी–''महाराज, कृपा करके इस टोकरी को जरा हाथ लगाइए जिससे कि मैं उसे अपने सिर पर धर लूँ।'' जमींदार साहब पहले तो बहुत नाराज हुए पर जब वह बार–बार हाथ जोड़ने लगी और पैरों पर गिरने लगी तो उनके भी मन में कुछ दया आ गई। किसी नौकर से न कहकर आप ही स्वयं टोकरी उठाने को आगे बढ़े। ज्यों ही टोकरी को हाथ लगाकर ऊपर उठाने लगे त्यों ही देखा कि यह काम उनकी शक्ति से बाहर है। फिर तो उन्होंने अपनी सब ताकत लगाकर टोकरी को उठाना चाहा पर जिस स्थान पर टोकरी रखी थी वहाँ से वह एक हाथ–भर ऊँची न हुई। वह लज्जित होकर कहने लगे–''नहीं, यह टोकरी हमसे न उठाई जावेगी।''

यह सुनकर विधवा ने कहा–''महाराज, नाराज न हों आपसे तो एक टोकरी–भर मिट्टी नहीं उठाई जाती और इस झोंपड़ी में तो हजारों टोकरियाँ मिट्टी पड़ी है। उसका भार आप जनम–भर क्या उठा सकेंगे? आप ही इस बात पर विचार कीजिए।''

जमींदार साहब धन–मद से गर्वित हो अपना कर्तव्य भूल गए थे पर विधवा के उपरोक्त वचन को सुनते ही उनकी आँखें खुल गईं। कृतकर्म का पश्चाताप कर उन्होंने विधवा से क्षमा माँगी और उसकी झोंपड़ी वापस दे दी।

माधवराव सप्रे

ढूंढो–

1. इस कहानी में आए 05 मुहावरों का संकलन कीजिए व अर्थ लिखिए।

2. पं.माधवराव सप्रे की रचनाओं का संकलन करें।

अपनी समझ से–

1. इस कहानी का सारांश लिखिए।

2. इस कहानी की पात्र गरीब अनाथ विधवा का चरित्र'पिस्ते बादाम' कहानी की दादी मां के चरित्र से किस अर्थ में समान है? स्पष्ट कीजिए।

3. इस कहानी से मिलने वाली शिक्षाएँ बच्चों के समक्ष कैसे रखेगें?

गतिविधि–

1. एकांकी के रुप में बच्चों द्वारा इसका मंचन करावें।

भाषा की बात

1. नीचे कुछ उत्तर दिए गए है। आप इन उत्तरों के लिए प्रश्न बनाएँ–

(अ) जमींदार ने अदालत से झोपड़ी पर अपना कब्जा कर लिया।

(ब) इस झोपड़ी में से एक टोकरी मिट्‌टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी बनाऊँगी।

(स) जमींदार साहब धन–मद से गर्वित हो अपना कर्तव्य भूल गए थे।

उदात्त संगीत – मुक्तक (कविता)

माना कि विषमताएँ दुनिया को घेरे हैं
उस घेरे को भी घेर धैर्य से बढ़े चलो।
उल्लास भरा है तो मंजिल तय ही होगी
मंजिल को भी सोपान बनाकर चढ़े चलो।। (1)

निश्चय समझें जो कभी तुम्हारा बाधक था
वह देख तुम्हारा तेज स्वयं साधक होगा।
तुम अपने आदर्शों के आराधक हो लो
पथ स्वयं तुम्हारे पथ का आराधक होगा।। (2)

किसको न बुढ़ापा आता है इस जीवन में
पर वह क्या, जिसकी यौवन में झुक जाय कमर।
जो होना है, जब होगा तब होगा, लेकिन
पहले ही ध्वस्त हुए क्यों अनहोने भय पर? (3)

जब तक जीना है तब तक मर न सकेंगे हम
मरने वाले का हाथ कौन है पकड़ सका?
यों तो प्राणों का खेल जगत भर में फैला
पर दो साँसों को कौन सदा को जकड़ सका? (4)

अकबर महान हो यदि अपने ऐश्वर्यों में
शंकराचार्य ने यदि दिमाग आला पाया।
तो मैं भी तो हूँ शहंशाह अपने दिल का
मैं क्यों मानूँ, मैं छोटा ही बन कर आया।। (5)

–डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र

अपनी समझ से–

1. **'' माना कि विषमताएं दुनिया को घेरे हैं।**
उस घेरे को भी घेर धैर्य से बढ़े चलो।''

बच्चों के सामने इन पंक्तियों के अर्थ को सरल शब्दों में कैसे स्पष्ट करेगें।

1. डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र की रचनाओं का संकलन कीजिए।
2. मुक्तक से क्या तात्पर्य है?

पिस्ते बादाम (कहानी)

''दादी माँ, यह देखो'', श्याम दौड़ता–दौड़ता अपनी दादी माँ के पास आया और बोला।

''क्या है?'' दादी माँ काम में लगी थी, उसने उसकी ओर देखे बिना ही झल्लाकर पूछा।

''देखो ना, मैं क्या खा रहा हूँ'', श्याम ने मुट्ठी खोलते हुए कहा

''क्या खा रहा है, रे?'' दादी माँ ने फिर पूछा।

''देखो ना, मेरे दोस्त सुनील की माँ ने दिए हैं'', श्याम ने उत्तर दिया।

''अरे, यह तो पिस्ते–बादाम हैं!'' दादी माँ ने हैरत से कहा– ''उसके यहाँ ये कहाँ से आए?''

श्याम बोला – ''सुनील का बड़ा भाई दुबई से आया है ना! वह ले आया है। बहुत–सा सामान लाया है। सुनील कह रहा था, हम यह सामान बेचेंगे और खूब पैसा कमाएँगे।''

तब तक श्याम का छोटा भाई रमेश और छोटी बहन मोहिनी, दोनों भीतर के कमरे से बाहर आ गए थे। मोहिनी ने पूछा, ''श्याम, तुम्हारे पास क्या है? मुझे भी खिलाओ ना!''

श्याम ने मुँह चिढ़ाते हुए कहा – ''मुझे भी खिलाओ ना! चल हट तू मुझे कुछ खिलाती है।''

दादी माँ ने उसे डाँटते हुए कहा, ''क्यों नहीं इन सबको खिलाते? दोनों को दो–दो पिस्ते बादाम दो''

श्याम ने रूठी–सी आवाज़ में कहा, ''ये हैं ही कितने जो दोनों को भी खिलाऊँ?''

''देखें, कितने हैं?'' रमेश ने कुछ सोच–समझकर प्रस्ताव रखा।

श्याम ने जैसे ही अपनी मुट्ठी खोली, रमेश ने झपटकर दो–चार पिस्ते–बादाम हथिया लिए और दो–चार पिस्ते–बादाम नीचे गिर गए, वे मोहिनी ने लपककर ले लिए।

रमेश ने मुफ्त में हाथ लगे पिस्ते–बादाम जल्दी से अपने मुँह में डाल लिए परंतु मोहिनी ऐसा न कर सकी। श्याम ने उसे एक घूँसा रसीद कर कहा, ''क्यों री, तू क्यों झपट्टा मारती है?''

मोहिनी ने उसे फटकारते हुए कहा – ''मैंने क्या झपट्टा मारा? मुझे तो ये भगवान की धरती से मिले।''

''भगवान की धरती से मिले!'' श्याम ने उसकी चोटी पकड़ ली और कहा, ''बड़ी आई है भगवान की धरती से उठानेवाली! इधर वापस कर मुझे!'' लेकिन मोहिनी ने भी वे पिस्ते–बादाम जल्दी से अपने मुँह में डाल लिए। इतने में रमेश ने थू–थू कर पिस्ते–बादाम थूक दिए। वह बोला, ''ये तो बड़े कड़वे हैं। मोहिनी, ये ज़हर जैसे कड़वे हैं, तुम नहीं खाना।''

मोहिनी ने आँखे मटकाते हुए कहा, ''नहीं, नहीं, मेरेवाले तो बड़े मीठे हैं।''

रमेश ने दादी माँ से कहा, ''माँ मुझे एक चवन्नी दो, मैं भी लाऊँगा।''

दादी माँ ने कहा, ''पागल हुए हो क्या? चवन्नी के पिस्ते बादाम नहीं मिलते। एक चवन्नी में एक ही बादाम मिलेगा।''

''अच्छा?'' बच्चों की एक साथ चीख–सी निकल पड़ी।

''और नहीं तो क्या? पिस्ते बादाम सस्ते हैं क्या? सौ सवा सौ रुपए के एक किलो होंगे पिस्ते, और अस्सी रुपए के एक किलो से क्या कम होंगे बादाम। हम गरीब लोगों को भगवान की ये चीज़ें खाना मना है,'' दादी माँ ने उन्हें समझाया।

''दादी माँ, मैंने ये पिस्ते–बादाम कभी देखे तक नहीं थे। आज ही देखें हैं।'' मोहिनी ने अजीब से स्वर में कहा।

''बेटी, तुम देखती कैसे? घर में ये चीजें आएँ तब तो तुम देखो। आज पहले का–सा ज़माना तो नहीं'' और दादी माँ थैले में से सब्ज़ियाँ निकालने लगीं।

रमेश ने दादी माँ से पूछा, दादी माँ, तुमने कभी पिस्ते–बादाम खाए हैं?''

दादी माँ ने उत्तर दिया, ''खाए क्यों नहीं हैं?''

''तो तुमने हमें क्यों नहीं खिलाए?''

''अरे, अब यहाँ थोड़े ही खाए हैं। सिंध में खाए थे, उसके बाद तो .....''

दादी माँ उदास हो गई।

श्याम ने पूछा, ''यह सिंध क्या है? कहाँ है?''

दादी माँ ने कहा, ''सिंध हमारा वतन था। वह यहाँ से दो दिन के फ़ासले पर तो ज़रूर होगा।''

रमेश ने पूछा, ''हम वहाँ चलकर क्यों नहीं रहते?''

दादी माँ ने उसे समझाते हुए कहा, ''नहीं बेटे, हम अब वहाँ जाकर नहीं रह सकते।....वहाँ के लोगों ने हमें वहाँ से भगा दिया था। अब सिंध पाकिस्तान में है।''

मोहिनी ने जिज्ञासा व्यक्त की, ''दादी माँ, पहले तुम लोग वहाँ रहते थे?''

दादी माँ ने कहा, ''हाँ, बेटी, हम लोग कराची में रहते थे।''

श्याम को कुछ याद आ गया था। वह बोला, ''हाँ, मैंने भूगोल की किताब में पढ़ा है कि कराची पाकिस्तान का बड़ा बंदरगाह है।''

''होगा, बेटे,'' दादी माँ ने उदासीन स्वर में उत्तर दिया।

''दादी माँ, वहाँ के लोगों ने तुम को वहाँ से क्यों भगा दिया था?'' रमेश ने जानना चाहा।

''न जाने हमारे नेता लोग कैसे थे, जिन्होंने हिन्दुस्तान–पाकिस्तान बनाया और हम लोगों को यहाँ आना पड़ा। हम अपने ही घर में बेघर हो गए।'' दादी माँ की उदासी बढ़ गई थी।

मोहिनी ने दादी माँ के गले में बाहें डालकर पूछा, ''दादी माँ, फिर तुम लोग सिंध छोड़कर कहाँ गए?''

गले से मोहिनी की बाँहे हटाते हुए दादी माँ ने कहा, ''कहाँ जाते? यहाँ हिंदुस्तान में आ गए। जब से सिंध छोड़ा है, हम क्या कहीं आराम से बस पाए हैं? मुल्क तो क्या, रोज़ी–रोज़गार भी गया।''

मोहिनी ने पूछा – ''दादी माँ, तुम वहाँ क्या करती थीं?''

दादी माँ को ग़ुस्सा आ गया। वह बोली, ''ख़ाक छानती थी। अरे, मैं वहाँ क्या करती? तुम सोचती हो, मैं भी शायद तुम्हारी मम्मी की तरह नौकरी करती थी। अरे, उन दिनों औरतें नौकरी नहीं करती थीं.। मेरे पिताजी

की मिठाई की दुकान थी। हमारी दुकान का पिस्ते–बादाम का हलवा बड़ा ही मशहूर था। मुट्ठियाँ भर–भरकर पिस्ते बादाम खाते थे हम लोग।'' मोहिनी के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, ''यहाँ बेचारे बच्चों ने ये आज से पहले देखे तक नहीं।''

श्याम ने पूछा, ''परंतु दादी माँ, सुनील के यहाँ तो ढेर सारे पिस्ते–बादाम हैं। वे कहाँ से लाते हैं?''

दादी माँ ने ठंडी साँस छोड़कर कहा, ''वे अमीर हैं। सुनील के भाई दुबई में कमाते हैं''

छोटी मोहिनी ने फिर पूछा, ''हम अमीर क्यों नहीं हैं?''

अब दादी माँ उन सब को कैसे समझाए कि वे ग़रीब क्यों हैं? उसने इतना भर कहा, ''बेटी, हम लोग भी सिंध में बड़े सुखी थे।''

दादी माँ सिंध को अभी भुला नहीं पाई हैं। उसने आगे कहा, ''यहाँ हमारी किस्मत अभी तक जागी नहीं है। तुम लोग बड़े होकर ख़ूब पैसा कमाना फिर तो हम भी अमीर हो जाएँगे।''

रमेश ने अपनी छाती ठोंककर कहा, ''हाँ, दादी माँ, मैं दुबई जाऊँगा, बहुत सारे पिस्ते–बादाम ले आऊँगा।''

श्याम की आँखों में भी चमक आ गई थी। वह बोला, ''मैं भी विदेश जाकर ख़ूब कमाकर आऊँगा और फिर सुनील के भाई की तरह जेब में नोट डालकर घूमूँगा।''

मोहिनी ने कहा, ''फिर हम भी इन गुजराती भाइयों की तरह मोटर–कार में घूमेंगे। ये भी बड़े ही अमीर हैं।'' मेरी सहेली ने मुझसे एक दिन कहा, ''नया फ्रॉक पहनकर आओ तो तुम्हें कार में बिठाऊँ।'' लेकिन मेरे पास तो नया फ्रॉक है ही नहीं। सभी तो पुराने हैं। दादी माँ, यह देखो, यह भी यहाँ से फट गया है। उसकी आवाज़ में दुख भरा था।

दादी माँ भी बच्चों की बातें सुनकर दुखी हो उठी लेकिन वह अपने दुख को छिपाती हुई बोली, ''अच्छा .... अच्छा, अब तुम सब जाओ और अपनी–अपनी किताबें लेकर पढ़ो। जब ख़ूब पढ़–लिखकर इम्तिहान पास करोगे, तभी विदेश जा सकोगे।''

परंतु पढ़ाई के संबंध में दादी माँ की यह बात बच्चों की समझ में नहीं आई। सुनील पढ़ाई में श्याम से भी कहीं ज़्यादा कमज़ोर है। फिर भी वह कहता है कि वह विदेश जाएगा। लेकिन वे चुप रहे, बोले नहीं।

रविवार का दिन था। बच्चे घर पर ही थे। उनकी मम्मी सुबह से ही घर के काम–काज में व्यस्त थी। पूरे हफ्ते का बचा–खुचा काम रविवार की छुट्टी के दिन करना पड़ता है। सुबह को दादी माँ ने नाश्ता तैयार किया तो मम्मी ने बरतन झाड़ू का काम निबटाकर कपड़े धोने शुरू किये। दादी माँ थैले में से सब्जियाँ निकालकर दोपहर के खाने की तैयारी में लगने को थीं कि उसे बच्चों ने आकर घेर लिया।

कमला कपड़े धोने के काम से फारिग हुई तो उसने देखा, बच्चे चुपचाप बैठे पढ़ाई कर रहे थे। वैसे तो छुट्टी के दिन बड़ा ही ऊधम मचाते हैं। उसने हैरत से पूछा, ''आज ये शैतान कैसे चुपचाप बैठे हैं?''

मोहिनी ने आहिस्ते से कहा, ''मम्मी, दादी माँ कहती हैं कि अगर हम पढ़ेंगे तो बड़े होकर अमीर बनेंगे।''

कमला को हँसी आ गई।

रमेश ने मम्मी से पूछा, ''तुमने कभी पिस्ते–बादाम खाए हैं?''

कमला को और भी ज़्यादा अचरज हुआ। बोली, ''क्यों पूछते हो? पिस्ते–बादाम, हाँ, शायद खाए हैं।''

श्याम ने कहा, ''शायद नहीं, पक्की बताओ।''

कमला ने कहा, ''बचपन में शायद दो–तीन बार पिताजी ने पिस्ते–बादाम खाने को दिए थे....।''

रमेश ने बीच में ही कहा, ''कहाँ? सिंध में?''

कमला को फिर हँसी आ गई। वह बोली, ''अरे मूर्ख, मैं तो यहाँ हिन्दुस्तान में जन्मी थी, मैंने सिंध नहीं देखा है।.... लेकिन तुम आज पिस्ते–बादाम का यह क़िस्सा कहाँ से ले बैठे?''

श्याम ने बचाए हुए दो–तीन पिस्ते बादाम अपनी जेब से निकालकर मम्मी को दिखाए। कहा, ''देखो, मेरे दोस्त सुनील की माँ ने दिए हैं। दो–तीन मोहिनी ले गई, ढेर सारे बदमाश रमेश ले गया।''

कमला ने गुस्से में आकर कहा, ''बदमाश, ऐसे कैसे बोलते हो?''

दादी माँ ने कमला को बीच में ही टोककर कहा, ''कमला, तुम भी तो ऐसे ही बोलती हो। तुमने भी तो ...।''

सभी हँसने लगे।

रमेश के दिमाग़ में अभी तक यह बात थी कि उसके पिस्ते–बादाम कड़वे निकले थे। उसने कहा, ''मम्मी, हमें पिस्ते–बादाम लेकर दो।''

मम्मी के उत्तर देने से पहले ही दादी माँ बोली, ''अच्छा बेटे! कमला, जब तुम्हें इस महीने तनख़्वाह मिलेगी तो तुम बच्चों के लिए दस रुपए के पिस्ते–बादाम ख़रीद कर लाना।''

कमला असमंजस में पड़ गई। बोली, ''लेकिन माँ, अभी तो कर्ज़ की कई क़िस्तें देना बाकी हैं। ऐसे तो घर–ख़र्च के लिए दस–रुपए कम हो जाएँगे।''

दादी माँ ने कहा, ''अरी बिटिया, जो दस रूपए तुम मुझे हर महीने दिया करती हो, इस बार न देना।. ... बच्चों के लिए पिस्ते–बादाम ज़रूर ले आना।''

बच्चे खुशी के मारे झूम उठे। कमला ने उन्हें डाँटकर कहा, ''अच्छा, इस बार ले आऊँगी। लेकिन आगे कभी ऐसी महँगी चीज़ें लाने के लिए ज़िद मत करना।.... अब उठो, नहा–धो लो, तो मैं तुम्हारे लिए खाना बना दूँ। तुम्हारे डैडी भी दुकान से आते ही होंगे।''

दादी माँ के चेहरे पर तो मुस्कराहट थी, पर आँखों में आँसू थे।

कहानी में ढूँढो–

1. श्याम को पिस्ते–बादाम खाते हुए देखकर दादी माँ को आश्चर्य क्यों हुआ?
2. श्याम के पास पिस्ते–बादाम कहाँ से आये?
3. किन–किन बातों की वजह से दादी माँ सिंध को अब तक भुला नहीं पाई थी?
4. कमला को रविवार के दिन भी बच्चों को चुप–चाप पढ़ाई करते हुए देखकर हैरत क्यों हुई?

अपनी समझ से–

1. अपने घर में अथवा आस–पास के बड़े बुजुर्गों से बात करें कि जब वे छोटे थे अथवा तुम्हारी उम्र के थे तब जमाना कैसा था और आज वे उससे क्या फ़र्क़ देखते हैं? क्या जो चीज़ें पहले थीं अब भी वैसी हैं? कौन–सी बदल गई हैं? कौन–सी है ही नहीं? और कौन–सी बिल्कुल नई हैं?
2. यदि आपको कभी अपना बसा–बसाया घर, रोज़गार, अपना गाँव छोड़कर कहीं और जाना पड़े तो आपको कैसा महसूस होगा?

3. एक शिक्षक ने इस कहानी पर निम्नलिखित सवाल बनायाः एक चवन्नी में एक बादाम मिलता है तो 15 बादाम ख़रीदने के लिए आपको कितने रुपये देने होंगे? इस कहानी पर यह सवाल देना उचित है या नहीं?

भाषा की बात–

1. नीचे कुछ उत्तर दिये गये हैं। आप इन उत्तरों के लिए प्रश्न बनाइये।

   (अ) सुनील का बड़ा भाई दुबई से आया था।

   ....

   (ब) पिस्ते–बादाम बड़े कड़वे थे।

   ....

   (स) दादी माँ के पिताजी की मिठाई की दुकान थी।

   ....

   (द) दादी माँ ने नाश्ता तैयार किया और मम्मी ने बरतन, झाड़ू व कपड़े धोने का काम।

   ....

2. 'दादी माँ ने झल्लाकर कहा'।

यहाँ रेखांकित शब्द क्रिया विशेषण है, क्योंकि यह शब्द क्रिया 'कहा' की विशेषता बता रहा है। कहानी में से इस तरह के कम से कम 6 वाक्य और ढूँढो और उनमें क्रिया विशेषण को रेखांकित करो।

दूँगी फूल कनेर के (कविता)

आना मेरे गाँव तुम्हें मैं
दूँगी फूल कनेर के।
कुछ कच्चे, कुछ पक्के घर हैं,
एक पुराना ताल है।
सड़क बनेगी, सुनती हूँ,
इसका नंबर इस साल है।
चखते आना टीले ऊपर
कई पेड़ हैं बेर के।
आना मेरे गाँव तुम्हें मैं
दूँगी फूल कनेर के।
बाबा ने था पेड़ लगाया
बापू ने फल खाए हैं
भाई कैसे उसे काटने
को रहते ललचाए हैं।
मेरे बचपन में ही आएँ
दिन कैसे अँधेर के?
आना मेरे गाँव तुम्हें मैं
दूँगी फूल कनेर के।
खड़िया–पाटी, कॉपी–बस्ते,
लिखना–पढ़ना रोज़ है।
खेलें–कूदें कभी न तो फिर,
यह सब लगता बोझ है।
कई मुखौटे तुम देखोगे,
मिट्टीवाले शेर के।
आना मेरे गाँव तुम्हें मैं,
दूँगी फूल कनेर के।
हँसना–रोना तो लगता ही,
रहता है हर खेल में।
रूठे, कुट्टी कर ली लेकिन,
खिल उठते हैं मेल में।
मगर देखना क्या होता है,
मेरी चिट्ठी फेर के।
आना मेरे गाँव तुम्हें मैं,
दूँगी फूल कनेर के।

गंगाप्रसाद

कविता में ढूँढो–

1. कविता से गाँव के बारे में क्या–क्या पता चलता है?

2. 'मेरे बचपन में ही आएँ

   दिन कैसे अँधेर के?'

   कविता में यह पंक्तियाँ क्यों कही गयी है?

अपनी समझ से–

1. आपे अपने गाँव का विवरण लिखिए। विवरण ऐसा जिसे पढ़कर पढ़नेवाले के मन में आपके गाँव की छवि बन जाए।

2. खेल–खेल में बच्चों के बीच रूठना–मनाना चलता रहता है। अपने बचपन की किसी ऐसी घटना को लिखिए जिसमें आपका दोस्तों से झगड़ा हो गया हो। आपने उस झगड़े को कैसे सुलझाया।

भाषा की बात–

5. 'कुछ कच्चे, कुछ पक्के घर हैं।'

   कविता की इस पंक्ति में रेखांकित शब्दों का अर्थ एक–दूसरे से उल्टा है। क्या कविता में ऐसी कोई और पंक्ति है जिसमें शब्दों का अर्थ एक–दूसरे से उल्टा है। अगर हाँ, तो ढूँढकर लिखिए और इन शब्दों को रेखांकित कीजिए।

7. 'खड़िया पाटी' शब्द दो भिन्न शब्दों–खड़िया, पाटी के बीच के 'और' को ग़ायब कर उनके एक साथ प्रयोग से बना है। खड़ीया–पाटी मतलब खड़ीया (चॉक) और पाटी (स्लेट)।

   (अ) कहानी में ऐसे 4 शब्द और दिए हुए हैं जो दो भिन्न शब्दों के मेल से बने हैं। इन्हें ढूँढकर नीचे लिखिए और प्रत्येक का वाक्य में प्रयोग कीजिए।

प्रायश्चित्त (कहानी)

अगर कबरी बिल्ली घर भर में किसी से प्रेम करती थी, तो रामू की बहू से, और अगर रामू की बहू घर भर में किसी से घृणा करती थी, तो कबरी बिल्ली से। रामू की बहू दो महीने हुए मायके से प्रथम बार ससुराल आई थी, पति की प्यारी और सास की दुलारी, चौदह वर्ष की बालिका। भंडार घर की चाबी उसकी करधनी में लटकने लगी, नौकरों पर उसका हुक़्म चलने लगा, और रामू की बहू घर में सब कुछ। सास जी ने माला ली और पूजा–पाठ में मन लगाया।

लेकिन ठहरी चौदह वर्ष की बालिका कभी भंडार.घर खुला है, तो कभी भंडार–घर में बैठे–बैठे सो गई। कबरी बिल्ली को मौका मिला, घी–दूध पर अब वह जुट गई। रामू की बहू की जान आफ़त में और कबरी बिल्ली के छक्के–पंजे। रामू की बहू हाँडी में घी रखते–रखते ऊँघ गई और बचा हुआ घी कबरी के पेट में। रामू की बहू दूध ढककर मिसरानी को जिन्स देने गई और दूध नदारद। अगर बात यह यहीं तक रह जाती तो भी बुरा न था। कबरी रामू की बहू से कुछ ऐसा परच गई थी कि रामू की बहू के लिए खाना–पीना दुश्वार। रामू की बहू के कमरे में रबड़ी से भरी कटोरी पहुँची और रामू जब आए तब कटोरी साफ़ चटी हुई। बाज़ार से बालाई आई और जब तक रामू की बहू ने पान लगाया बालाई गायब।

रामू की बहू ने तै कर लिया कि या तो वही घर में रहेगी या फिर कबरी बिल्ली ही। मोरचाबंदी हो गई, और दोनों सतर्क। बिल्ली फँसाने का कठघरा आया। उसमें दूध, मलाई, चूहे और भी बिल्ली को स्वादिष्ट लगनेवाले विविध प्रकार के व्यंजन रखे गए, लेकिन बिल्ली ने उधर निगाह तक न डाली। इधर कबरी ने सरगर्मी दिखलाई। अभी तक तो वह रामू की बहू से डरती थी पर अब वह साथ लग गई, लेकिन इतने फ़ासले पर कि रामू की बहू उस पर हाथ न लगा सके।

कबरी के हौसले बढ़ जाने से रामू की बहू को घर में रहना मुश्किल हो गया। उसे मिलती थीं सास की मीठी झिड़कियाँ, और पतिदेव को मिलता था रूखा–सूखा भोजन।

एक दिन रामू की बहू ने रामू के लिए खीर बनाई। पिस्ता, बादाम, मखाने और तरह–तरह के मेवे दूध में औटाए गए, सोने का वर्क चिपकाया गया और खीर से भरकर कटोरा कमरे के एक ऐसे ऊँचे ताक पर रखा गया जहाँ बिल्ली न पहुँच सके। रामू की बहू इसके बाद पान लगाने में लग गई।

उधर बिल्ली कमरे में आई। ताक के नीचे खड़े होकर उसने ऊपर कटोरे की ओर देखा, सूँघा, माल अच्छा है, ताक की ऊँचाई अंदाज़ी और रामू की बहू पान लगा रही है। पान लगाकर रामू की बहू सास जी को पान देने चली गई और कबरी ने छलांग मारी, पंजा कटोरे में लगा और कटोरा झनझनाहट की आवाज़ के साथ फर्श पर।

आवाज़ रामू की बहू के कान में पहुँची। सास के सामने पान फेंककर वह दौड़ी, क्या देखती है कि फूल का कटोरा टुकड़े–टुकड़े, खीर फर्श पर और बिल्ली डटकर खीर उड़ा रही है। रामू की बहू को देखते ही कबरी चंपत।

रामू की बहू पर खून सवार हो गया। न रहे बाँस न बजे बाँसुरी। रामू की बहू ने कबरी की हत्या पर कमर कस ली। रात भर उसे नींद न आई। किस दाँव से कबरी पर वार किया जाए कि फिर ज़िंदा न बचे, यही पड़े–पड़े सोचती रही। सुबह हुई और वह देखती है कि कबरी देहरी पर बैठी बड़े प्रेम से उसे देख रही है।

रामू की बहू ने कुछ सोचा, इसके बाद मुस्कराती हुई वह उठी। कबरी रामू की बहू के उठते ही खिसक गई। रामू की बहू एक कटोरा दूध कमरे के दरवाज़े की देहरी पर रखकर चली गई। हाथ में पाटा लेकर वह लौटी तो देखती है कि कबरी दूध पर जुटी हुई है। मौका हाथ में आ गया, सारा बल लगाकर उसने बिल्ली पर पटक दिया। कबरी न हिली–न–डुली, न चीखी–न–.चिल्लाई, बस एकदम उलट गई।

आवाज़ जो हुई तो महरी झाडू छोड़कर, मिसरानी रसोई छोड़कर और सास पूजा छोड़कर घटनास्थल पर उपस्थित हो गईं। रामू की बहू सिर झुकाए हुए अपराधिनी की भाँति बातें सुन रही है।

महरी बोली, ''अरे राम! बिल्ली तो मर गई, माँ जी, बिल्ली की हत्या बहू से हो गई, यह तो बुरा हुआ।''

मिसरानी बोली, ''माँ जी, बिल्ली की हत्या और आदमी की हत्या बराबर है, हम तो रसोई न बनावेंगी, जब तक बहू के सिर हत्या रहेगी।''

सास जी बोलीं, ''हाँ ठीक तो कहती हो, अब जब तक बहू के सिर से हत्या न उतर जाए, तब तक न कोई पानी पी सकता है न खाना खा सकता है। बहू, यह क्या कर डाला?''

महरी ने कहा, ''फिर क्या हो, कहो तो पंडित जी को बुला लाएँ।''

सास की जान–में–जान आई, ''अरे हाँ, ज़ल्दी दौड़ के पंडित जी को बुला ला।''

बिल्ली की हत्या की ख़बर बिजली की तरह पड़ोस में फैल गई। पड़ोस की औरतों का रामू के घर में ताँता बँध गया। चारों तरफ़ से प्रश्नों की बौछार और रामू की बहू सिर झुकाए बैठी।

पंडित परमसुख को जब यह खबर मिली, उस समय वे पूजा कर रहे थे। खबर पाते ही वे उठ पड़े, पंडिताइन से मुस्कराते हुए बोले, ''भोजन न बनाना, लाला घासीराम की पतोहू ने बिल्ली मार डाली, प्रायश्चित्त होगा, पकवानों पर हाथ लगेगा।''

पंडित परमसुख चौबे छोटे–से, मोटे–से आदमी थे। लंबाई चार फीट, दस इंच और तोंद का घेरा अट्ठावन इंच। चेहरा गोल–मटोल, मूँछ बड़ी–बड़ी, रंग गोरा, चोटी कमर तक पहुँचती हुई। कहा जाता है कि मथुरा में जब पंसेरी खुराकवाले पंडितों को ढूँढ़ा जाता था, तो पंडित परमसुख जी को उस लिस्ट में प्रथम स्थान दिया जाता था।

पंडित परमसुख पहुँचे और कोरम पूरा हुआ। पंचायत बैठी–सास जी, मिसरानी, किसनू की माँ, छन्नू की दादी और पंडित परमसुख! बाक़ी स्त्रियाँ बहू से सहानुभूति प्रकट कर रही थीं।

किसनू की माँ ने कहा, ''पंडित जी, बिल्ली की हत्या करने से कौन नरक मिलता है?''

पंडित परमसुख ने पत्रा देखते हुए कहा, ''बिल्ली की हत्या अकेले से तो नरक का नाम नहीं बतलाया जा सकता, वह महूरत जब मालूम हो, जब बिल्ली की हत्या हुई ,तब नरक का पता लग सकता है।''

''यही कोई सात बजे सुबह।'' मिसरानी जी ने कहा

पंडित परमसुख ने पत्रे के पन्ने उलटे, अक्षरों पर उँगलियाँ चलाईं, मत्थे पर हाथ लगाया और कुछ सोचा। चेहरे पर धुँधलापन आया, माथे पर बल पड़े, नाक कुछ सिकुड़ी और स्वर गंभीर हो गया, ''हरे कृष्ण! हरे कृष्ण! बड़ा बुरा हुआ, प्रातःकाल ब्राह्म–मुहूर्त में बिल्ली की हत्या! घोर कुंभीपाक नरक का विधान है! रामू की माँ, यह तो बड़ा बुरा हुआ।''

रामू की माँ की आँखों में आँसू आ गए, ''तो फिर पंडित जी, अब क्या होगा, आप ही बतलाएँ!''

पंडित परमसुख मुस्कराए, ''रामू की माँ, चिंता की कौन–सी बात है, हम पुरोहित फिर कौन दिन के लिए हैं? शास्त्रों में प्रायश्चित्त का विधान है, सो प्रायश्चित्त से सब कुछ ठीक हो जाएगा।''

रामू की माँ ने कहा, ''पंडित जी, उसी लिए तो आपको बुलवाया था, अब आगे बतलाओ कि क्या किया जाए!''

''किया क्या जाए, यही एक सोने की बिल्ली बनवाकर बहू से दान करवा दी जाए। जब तक बिल्ली न दे दी जाएगी, तब तक तो घर अपवित्र रहेगा। बिल्ली दान देने के बाद इक्कीस दिन का पाठ हो जाए''

छन्नू की दादी, ''हाँ और क्या, पंडित जी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली अभी दान दे दी जाए और पाठ फिर हो जाएँ''

रामू की माँ ने कहा, ''तो पंडित जी, कितने तोले की बिल्ली बनवाई जाए?''

पंडित परमसुख मुस्कराए, अपनी तोंद पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा, ''बिल्ली कितने तोले की बनवाई जाए? अरे रामू की माँ, शास्त्रों में तो लिखा है कि बिल्ली के वज़न–भर सोने की बिल्ली बनवाई जाए; लेकिन अब कलियुग आ गया है, धर्म–कर्म का नाश हो गया है, श्रद्धा नहीं रही। सो रामू की माँ, बिल्ली के तौल–भर की बिल्ली तो क्या बनेगी, क्योंकि बिल्ली बीस–इक्कीस सेर से कम की क्या होगी। हाँ, कम–से–कम इक्कीस तोले की बिल्ली बनवा के दान करवा दो, और आगे तो अपनी–अपनी श्रद्धा!''

रामू की माँ ने आँखें फाड़कर पंडित परमसुख को देखा, ''अरे बाप रे, इक्कीस तोला सोना! पंडित जी यह तो बहुत है, तोला–भर की बिल्ली से काम न निकलेगा?''

पंडित परमसुख हँस पड़े, ''रामू की माँ! एक तोला सोने की बिल्ली! अरे रुपया का लोभ बहू से बढ़ गया? बहू के सिर बड़ा पाप है, इसमें इतना लोभ ठीक नहीं!''

मोल–तोल शुरू हुआ और मामला ग्यारह तोले की बिल्ली पर ठीक हो गया। इसके बाद पूजा–पाठ की बात आई। पंडित परमसुख ने कहा, ''उसमें क्या मुश्किल है, हम लोग किस दिन के लिए हैं, रामू की माँ, मैं पाठ कर दिया करूँगा, पूजा की सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।''

''पूजा का सामान कितना लगेगा?''

''अरे, कम–से–कम सामान में हम पूजा कर देंगे, दान के लिए क़रीब दस मन गेहूँ, एक मन चावल, एक मन दाल, मन–भर तिल, पाँच मन जौ और पाँच मन चना, चार पंसेरी घी, और मन–भर नमक भी लगेगा। बस, इतने से काम चल जाएगा।''

''अरे बाप रे, इतना सामान! पंडित जी इसमें तो सौ–डेढ़ सौ रुपया ख़र्च हो जाएगा।'' रामू की माँ ने रुआँसी होकर कहाँ

''फिर इससे कम में तो काम न चलेगा। बिल्ली की हत्या कितना बड़ा पाप है, रामू की माँ! ख़र्च को देखते वक़्त पहले बहू के पाप को तो देख लो! यह तो प्रायश्चित्त है, कोई हँसी–खेल थोड़े ही है, और जैसी जिसकी मरज़ादा! प्रायश्चित्त में उसे वैसा खर्च भी करना पड़ता है। आप लोग कोई ऐसे–वैसे थोड़े हैं, अरे सौ–डेढ़ सौ रुपया आप लोगों के हाथ का मैल है।''

पंडित परमसुख की बात से पंच प्रभावित हुए, किसनू की माँ ने कहा, ''पंडित जी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली की हत्या कोई ऐसा–वैसा पाप तो है नहीं, बड़े पाप के लिए बड़ा ख़र्च भी चाहिए।''

छन्नू की दादी ने कहा, ''और नहीं तो क्या, दान–पुन्न से ही पाप कटते हैं, दान–पुन्न में किफ़ायत ठीक नहीं।''

मिसरानी ने कहा, ''और फिर माँ जी आप लोग बड़े आदमी ठहरे। इतना खर्च कौन आप लोगों को अखरेगा।''

रामू की माँ ने अपने चारों और देखा–सभी पंच पंडित जी के साथ। पंडित परमसुख मुसकरा रहे थे। उन्होंने कहा, ''रामू की माँ! एक तरफ़ तो बहू के लिए कुंभीपाक नरक है और दूसरी तरफ़ तुम्हारे ज़िम्मे थोड़ा–सा खर्चा है। सो उससे मुँह न मोड़ो।''

एक ठंडी साँस लेते हुए रामू की माँ ने कहा, ''अब तो जो नाच नचाओगे नाचना ही पड़ेगा।''

पंडित परमसुख ज़रा कुछ बिगड़कर बोले, ''रामू की माँ! यह तो ख़ुशी की बात है। अगर तुम्हें यह अखरता है तो न करो, मैं चला।'' इतना कहकर पंडित जी ने पोथी–पत्रा बटोरा।

''अरे पंडित जी, रामू की माँ को कुछ नहीं अखरता। बेचारी को कितना दुख है, बिगड़ो न!'' मिसरानी, छन्नू की दादी और किसनू की माँ ने एक स्वर में कहा। रामू की माँ ने पंडित जी के पैर पकड़े और पंडित जी ने अब जमकर आसन जमाया।

''और क्या है?''

''इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रुपए और इक्कीस दिन तक दोनों बखत पाँच–पाँच ब्राह्मणों को भोजन करवाना पड़ेगा।'' कुछ रुककर पंडित परमसुख ने कहा, ''सो इसकी चिंता न करो, मैं अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भोजन करने से पाँच ब्राह्मण के भोजन का फल मिल जाएगा।''

''यह तो पंडित जी ठीक कहते हैं, पंडित जी की तोंद तो देखो!'' मिसरानी ने मुस्कराते हुए पंडित जी पर व्यंग किया।

''अच्छा तो फिर प्रायश्चित्त का प्रबंध करवाओ रामू की माँ, ग्यारह तोला सोना निकालो, मैं उसकी बिल्ली बनवा लाऊँ। दो घंटे में मैं बनवाकर लौटूँगा, तब तक सब पूजा का प्रबंध कर रखो, और देखो पूजा के लिए.....''

पंडित जी की बात खतम भी न हुई थी कि महरी हाँफती हुई कमरे में घुस आई और सब लोग चौंक उठे। रामू की माँ ने घबराकर कहा, ''अरी क्या हुआ री?''

महरी ने लड़खड़ाते स्वर में कहा, ''माँ जी, बिल्ली तो उठकर भाग गई!''

— भगवतीचरण वर्मा

भगवतीचरण वर्मा : (1903.1981) का जन्म शफीपुर गाँव में उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िले में हुआ। इन्होंने लिखना कविता लेखन से प्रारंभ किया और उपन्यासकार के रूप में प्रसिद्ध हुए। इन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार और पद्मभूषण से सम्मानित किया गया है। इनके कुछ प्रसिद्ध प्रकाशन हैंः चित्रलेखा, भूले बिसरे चित्र, अपने खिलौने, पतन, तीन वर्ष (उपन्यास); मेरी कहानियाँ, मोर्चाबंदी (कहानी संग्रह); मेरी कविताएँ (कविता संग्रह), मेरे नाटक, वसीयत (नाटक)।

कहानी में ढूँढो–

1. रामू की बहू, कबरी बिल्ली से क्यों घृणा करती थी?
2. आपको क्या लगता है, कबरी बिल्ली घर–भर में, रामू की बहू से ही क्यों प्रेम करती थी?
3. कहानी का मुख्य मात्र कौन है और क्यों?
4. आपको पंडित परमसुख कैसे आदमी लगे? कहानी से उदाहरण लेकर समझाइये।
5. जब पंडित परमसुख को पता चला कि बिल्ली मरी नहीं है, तो उन्हें कैसा लगा होगा?
6. आपको यह कहानी कैसी लगी?
7. कहानी पढ़कर दी गई घटनाओं को सही क्रम दीजिए।
   - पड़ोस की औरतों का घर में ताँता लग गया।
   - बिल्ली ने खीर का कटोरा टुकड़े–टुकड़े कर दिया
   - पंडित जी ने पत्नी को भोजन न बनाने को कहा।
   - बहू ने सारा बल लगाकर पाटा बिल्ली पर पटक दिया।
   - ग्यारह तोला सोने की बिल्ली बनाना तय हुआ।
   - रामू की माँ ने कहा, अब तो जो नाच नचाओगे नाचना ही पड़ेगा।
   - महरी ने हाँफते हुए कहा– बिल्ली तो भाग गई।
   - मेरे अकेले के भोजन करने से पाँच ब्राह्मणों के भोजन का फल मिल जाएगा पंडित ने कहा।
8. कहानी का सार लिखिए।

अपनी समझ से–

1. कहानी में पंडित जी ने बिल्ली को मारने पर प्रायश्चित्त का जो तरीका बताया उसके बारे में आप क्या सोचते हैं ?
2. इस कहानी का और क्या शीर्षक हो सकता है?
3. कहानी में नाप–तौल के लिए कई शब्दों का प्रयोग हुआ है,

   जैसे– सेर, मन, तोला आदि।

   (अ) आपके यहाँ माप–तौल के लिए किन–किन माप को काम में लेते हैं? पता कीजिए।

   (ब) किलोग्राम में इन मापकों का कितना मान (वजन) होगा यह भी बताइये।

भाषा की बात–

1. कई बार प्रयोग के आधार पर एक ही शब्द के अलग–अलग अर्थ हो सकते हैं,

   जैसे– 'भाग'

   (अ) बिल्ली उठकर भाग गई।

   (ब) बिल्ली ने रोटी का आधा भाग खा लिया।

   यहाँ पहले वाक्य में भाग का मतलब है–भाग जाना। दूसरे वाक्य में भाग का अर्थ है–हिस्सा करना।

   ऐसे ही कुछ शब्द नीचे दिए गए हैं, इनको वाक्यों में प्रयोग करके बताइये कि इनके क्या–क्या अर्थ हो सकते हैं।

   फल, सोना, ताक़, पान

   (स) ऐसे ही कुछ शब्द आप भी ढूँढकर लिखिए।

गुलेलबाज़ लड़का

छठी कक्षा में पढ़ते समय मेरे तरह–तरह के सहपाठी थे। एक हरबंस नाम का लड़का था जिसके सब काम अनूठे हुआ करते थे। उसे जब सवाल समझ में नहीं आता तो स्याही की दवात उठाकर पी जाता। उसे किसी ने कह रखा था कि काली स्याही पीने से अक्ल तेज़ होती है। मास्टर जी गुस्सा होकर उस पर हाथ उठाते तो बेहद ऊँची आवाज़ में चिल्लाने लगता, ''मार डाला! मास्टर जी ने मार डाला!'' वह इतनी ज़ोर से चिल्लाता कि आसपास की जमातों के उस्ताद बाहर निकल आते कि क्या हुआ है। मास्टर जी ठिठककर हाथ नीचा कर लेते। यदि वह उसे पीटने लगते तो हरबंस सीधा उनसे चिपट जाता और ऊँची–ऊँची आवाज़ में कहने लगता, ''अब की माफ़ कर दो जी! आप बादशाह हो जी! आप अकबर महान हो जी! आप सम्राट अशोक हो जी! आप माई–बाप हो जी, मेरे दादा हो जी, परदादा हो जी!''

क्लास में लड़के हँसने लगते और मास्टर जी झेंपकर उसे पीटना छोड़ देते। ऐसा था वह हरबंस। हर आए दिन बाग में से मेंढक पकड़ लाता और कहता कि हाथ पर मेंढक की चर्बी लगा लें तो मास्टर जी के बेंत का कोई असर नहीं होता, हाथ को पता ही नहीं चलता कि बेंत पड़ा है।

एक दूसरा सहपाठी था–बोधराज। उससे हम सब डरते थे। जब वह चिंहुटी काटता तो लगता जैसे साँप ने डस लिया है। बड़ा ज़ालिम लड़का था। गली की नाली पर जब बर्रे आकर बैठते तो नंगे हाथ से वह बर्रा, पकड़कर उसका डंक निकाल लेता और फिर बर्रे की टाँग में धागा बाँधकर उसे पतंग की तरह उड़ाने की कोशिश करता। बाग में जाते तो फूल पर बैठी तितली को लपककर पकड़ लेता और दूसरे क्षण उँगलियों के बीच मसल डालता। अगर मसलता नहीं तो फड़फड़ाती तितली में पिन खोंसकर उसे अपनी कापी में टाँक लेता।

उसके बारे में कहा जाता था कि अगर बोधराज को बिच्छू काट ले तो स्वयं बिच्छू मर जाता है, बोधराज का खून इतना कड़वा है कि उसे कुछ भी महसूस नहीं होता। सारा वक़्त उसके हाथ में गुलेल रहती और उसका निशाना अचूक था। पक्षियों के घोंसलों पर तो उसकी विशेष कृपा रहती थी। पेड़ के नीचे खड़े होकर वह ऐसा निशाना बाँधता कि दूसरे ही क्षण पक्षियों की चों–चों सुनाई देती और घोंसलों में से तिनके और थिगलियाँ टूट–टूटकर हवा में छितरने लगते, या वह झट से पेड़ पर चढ़ जाता और घोंसलों में से अण्डे निकाल लाता। जब तक वह घोंसलों को तोड़–फोड़ न डाले उसे चैन नहीं मिलता था।

उसे कभी भी कोई ऐसा खेल नहीं सूझता था जिसमें किसी को कष्ट नहीं पहुँचाया गया हो। बोधराज की माँ भी उसे राक्षस कहा करती थी। बोधराज जेब में तरह–तरह की चीज़ें रखे घूमता, कभी मैना का बच्चा या तरह–तरह के अण्डे या काँटेदार झाऊ चूहा उससे सभी छात्र डरते थे। किसी के साथ झगड़ा हो जाता तो बोधराज सीधा उसकी छाती में टक्कर मारता, या उसका हाथ पर काट खाता। स्कूल के बाद हम लोग तो अपने–अपने घरों को चले जाते, मगर बोधराज न जाने कहाँ घूमता रहता।

कभी–कभी वह हमें तरह–तरह के किस्से सुनाता। एक दिन कहने लगा, ''हमारे घर में एक 'गोह' रहती है। जानते हो 'गोह' क्या होती है?''

''नहीं तो, क्या होती है 'गोह'?''

''गोह, साँप जैसा एक जानवर होता है, बालिश्तभर लम्बा, मगर उसके पैर होते हैं, आठ पंजे होते हैं। साँप के पैर नहीं होते।''

हम सिहर उठे।

''हमारे घर में सीढ़ियों के नीचे गोह रहती है,'' वह बोला, ''जिस चीज़ को वह अपने पंजों से पकड़ ले वह उसे कभी भी नहीं छोड़ती, कुछ भी हो जाए नहीं छोड़ती।''

हम फिर सिहर उठे।

''चोर अपने पास गोह को रखते हैं। वे दीवार फाँदने के लिए गोह का इस्तेमाल करते हैं। वे गोह की एक टाँग में रस्सी बाँध देते हैं। फिर जिस दीवार को फाँदना हो, रस्सी को झुलाकर दीवार के ऊपर की ओर फेंकते हैं। दीवार के साथ लगते ही गोह अपने पंजों से दीवार को पकड़ लेती है। उसका पंजा इतना मज़बूत होता है कि फिर रस्सी को दस आदमी भी खींचें, तो गोह दीवार को नहीं छोड़ेगी। चोर उसी रस्सी के सहारे दीवार फाँद जाते हैं।''

''फिर दीवार को तुम्हारी गोह छोड़ती कैसे है?'' मैंने पूछा।

''ऊपर पहुँचकर चोर उसे थोड़ा सा दूध पिलाते हैं, दूध पीते ही गोह के पंजे ढीले पड़ जाते हैं।'' इसी तरह के किस्से बोधराज हमें सुनाता।

उन्हीं दिनों मेरे पिताजी की तरक़्क़ी हुई और हम लोग एक बड़े घर में जाकर रहने लगे। घर नहीं था, बंगला था, मगर पुराने ढंग का, और शहर के बाहर। फ़र्श ईंटों के, छत ऊँची–ऊँची और ढलवाँ, कमरे बड़े–बड़े, लेकिन दीवार में लगता जैसे गारा भरा हुआ है। बाहर खुली ज़मीन थी और पेड़–पौधे थे। घर तो अच्छा था मगर बड़ा खाली–खाली सा लगता था और शहर से दूर होने के कारण मेरा दोस्त–यार भी यहाँ पर कोई नहीं था।

तभी वहाँ बोधराज आने लगा। शायद उसे मालूम हो गया था कि वहाँ शिकार अच्छा मिलेगा, क्योंकि उस पुराने घर में और घर के आँगन में अनेक पक्षियों के घोंसले थे, आसपास बंदर घूमते थे और घर के बाहर झाड़ियों में नेवलों के दो–एक बिल भी थे। घर के पिछले हिस्से में एक बड़ा कमरा था जिसमें माँ ने फालतू सामान भरकर गोदाम–सा बना दिया था। यहाँ पर कबूतरों का डेरा था। दिन–भर गुटरगूँ–गुटरगूँ चलती रहती। वहीं पर टूटे से रोशनदान के पास एक मैना का भी घोंसला था। कमरे के फ़र्श पर पंख और टूटे अण्डे और घोंसलों के तिनके बिखरे रहते।

बोधराज आता तो उसके साथ घूमने निकल जाता। एक बार वह झाऊ चूहा लाया, जिसका काला थूथना और कँटीले बाल देखते ही मैं डर गया था। माँ को मेरा बोधराज के साथ घूमना अच्छा

नहीं लगता था, मगर वह जानती थी कि मैं अकेला घर में पड़ा–पड़ा क्या करूँगा। माँ भी उसे राक्षस कहती थी और उसे बहुत समझाती थी कि ग़रीब जानवरों को तंग नहीं किया करे।

एक दिन माँ मुझसे बोली, ''अगर तुम्हारे दोस्त को घोंसले तोड़ने में मज़ा आता है तो उससे कहो कि हमारे गोदाम में से घोंसले साफ़ कर दे। चिड़ियों ने कमरे को बहुत गंदा कर रखा है।''

''मगर माँ, तुम ख़ुद ही तो कहती थी जो घोंसले तोड़ता है उसे पाप चढ़ता है।''

''मैं यह थोड़े ही कहती हूँ कि पक्षियों को मारे। वह तो पक्षियों पर गुलेल चलाता है, उन्हें मारता है। घोंसला हटाना तो दूसरी बात है।''

चुनांचे जब बोधराज घर पर आया तो मैं घर का चक्कर लगाकर उसे पिछवाड़े की ओर गोदाम में ले गया। गोदाम में ताला लगा था। हम ताला खोलकर अंदर गए। शाम हो रही थी और गोदाम के अंदर झुटपुटा–सा छाया था। कमरे में पहुँचे तो मुझे लगा जैसे हम किसी जानवर की माँद में पहुँच गए हों। बला की बू थी, और फ़र्श पर बिखरे हुए पंख और पक्षियों की बीट।

सच पूछो तो मैं डर गया। मैंने सोचा, यहाँ भी बोधराज अपना घिनौना शिकार खेलेगा, वह घोंसलों को तोड़–तोड़कर गिराएगा, पक्षियों के घर नोचेगा, उनके अण्डे तोड़ेगा, ऐसी सभी बातें करेगा जिनसे मेरा दिल दहलता था। न जाने माँ ने क्यों कह दिया कि इसे गोदाम में ले जाओ और इससे कहो कि गोदाम में से घोंसले साफ़ कर दे। मुझे तो इसके साथ खेलने को भी मना करती थी और अब कह दिया कि घोंसले तोड़ो।

मैंने बोधराज की ओर देखा तो उसने गुलेल सँभाल ली थी, और बड़े चाव से छत के नीचे मैना के घोंसले की ओर देख रहा था। गोदाम की ढलवाँ छतें तिकोन–सा बनाती थीं, दो पल्ले ढलवाँ उतरते थे और नीचे एक लम्बा शहतीर कमरे के आरपार डाला गया था। इसी शहतीर पर टूटे हुए रोशनदान के पास ही एक बड़ा–सा घोंसला था, जिसमें से उभरे हुए तिनके, रुई के फाहे और लटकती थिगलियाँ हमें नज़र आ जाती थीं। यह मैना का घोंसला था। कबूतर अलग से, दूसरी ओर शहतीर पर गूटरगूँ–गूटरगूँ कर रहे थे और सारा वक़्त शहतीर के ऊपर मटरगश्ती करते रहने में गुज़ारते थे।

''घोंसले में मैना के बच्चे हैं।'' बोधराज ने कहा और अपनी गुलेल से निशाना साध लिया। तभी मुझे घोंसले में से छोटे–छोटे बच्चों की पीली–पीली नन्हीं चोंचें झाँकती नज़र आईं।

''देखा?'' बोधराज कह रहा था, ''ये विलायती मैना है, इधर घोंसला नहीं बनाती। इनके माँ–बाप ज़रूर अपने काफ़िले से बिछड़ गए होंगे और यहाँ आकर घोंसला बना लिया होगा।''

''इनके माँ–बाप कहाँ हैं?'' मैंने बोधराज से पूछा।

''चुग्गा लेने गए हैं। अभी आते होंगे।'' यह कहते हुए बोधराज ने अपनी गुलेल उठाई। मैं उसे रोकना चाहता था कि घोंसले पर गुलेल नहीं चलाए पर तभी बोधराज की गुलेल से फर्रर्रर की आवाज़

निकली और इसके बाद ज़ोर की टन की आवाज़ आई। गुलेल का कंकड़ घोंसले से न लगकर सीधा छत पर जा लगा था, जहाँ टीन की चादरें लगी थीं।

दोनों चोंच घोंसले के बीच कहीं ग़ायब हो गईं। और फिर सकता–सा आ गया। लग रहा था मानों मैना के बच्चे सहमकर चुप हो गए हों।

तभी बोधराज ने गुलेल से एक और वार किया। अबकी कंकड़ शहतीर में लगा। बोधराज अपने अचूक निशाने पर बड़ा अकड़ा करता था। दो निशाने चूक जाने पर वह बौखला उठा, अबकी बार वह थोड़ी देर तक चुपचाप खड़ा रहा जिस वक़्त मैना के बच्चों ने अपनी चोंच फिर से उठाई और घोंसले के बाहर झाँककर देखने लगे, उसी समय बोधराज ने तीसरा वार किया। अबकी कंकड़ घोंसले के किनारे पर लगा। तीन–चार तिनके और रुई के गोले उड़े और छितरा–छितराकर फ़र्श की ओर उड़ने लगे। लेकिन घोंसला गिरा नहीं।

बोधराज ने फिर से गुलेल तान ली थी। तभी कमरे में एक भयानक–सा साया डोल गया। हमने नज़र उठाकर देखा। रोशनदान में से आनेवाली रोशनी सहसा ढक गई थी। रोशनदान के सींखचे पर एक बड़ी–सी चील पर फैलाए बैठी थी। हम दोनों ठिठककर उसकी ओर देखने लगे। रोशनदान में बैठी चील भयानक–सी लग रही थी। ''यह चील का घोंसला होगा। चील अपने घोंसले में लौटी है।'' मैंने ज़ोर से कहा– 'नहीं, चील का घोंसला यहाँ कैसे हो सकता है? चील अपना घोंसला पेड़ों पर बनाती है। यह मैना का घोंसला है।''

उसी वक़्त घोंसले में से चों–चों की ऊँची आवाज़ आने लगी। घोंसले में बैठे मैना के बच्चे पर फड़फड़ाने और चिल्लाने लगे।

हम दोनों निश्चेष्ट से खड़े हो गए, यह देखने के लिए कि चील अब क्या करेगी। हम दोनों टकटकी बाँधे चील की ओर देखे जा रहे थे।

चील रोशनदान में से अंदर आ गई। उसने अपने पर समेट लिए थे और रोशनदान पर से उतरकर गोदाम के आर–पार लगे शहतीर पर उतर आई थी। वह अपना छोटा–सा सिर हिलाती, कभी दाएँ और कभी बाएँ देखने लगती। मैं चुप था, बोधराज भी चुप था, न जाने वह क्या सोच रहा था।

घोंसले में से बराबर चों–चों की आवाज़ आ रही थी, बल्कि पहले से कहीं ज़्यादा बढ़ गई थी। मैना के बच्चे बुरी तरह डर गए थे।

''यह यहाँ रोज़ आती होगी।'' बोधराज बोला।

अब मेरी समझ में आया कि क्यों फ़र्श पर जगह–जगह पंख और माँस के लोथड़े बिखरे पड़े रहते हैं। ज़रूर हर आए दिन चील घोंसले पर झपट्टा मारती होगी। माँस के टुकड़े और खून–सने पर इसी की चोंच से गिरते होंगे।

बोधराज अभी भी टकटकी बाँधे चील की ओर देख रहा था।

अब चील धीरे–धीरे शहतीर पर चलती हुई घोंसले की ओर बढ़ने लगी थी और घोंसले में बैठे मैना के बच्चे पर फड़फड़ाने और चीखने लगे थे। जब से चील रोशनदान पर आकर बैठी थी, मैना के बच्चे चीखे जा रहे थे। बोधराज अब भी मूर्तिवत खड़ा चील की ओर ताके जा रहा था।

मैं घबरा उठा। मैं मन में बार–बार कहता, 'क्या फ़र्क पड़ता है अगर चील मैना के बच्चों को मार डालती है या बोधराज अपनी गुलेल से उन्हें मार डालता है? अगर चील नहीं आती तो इस वक़्त तक बोधराज ने मैना का घोंसला नोच भी डाला होता।'

तभी बोधराज ने गुलेल उठाई और सीधा निशाना चील पर बाँध दिया। ''चील को मत छेड़ो, वह तुम पर झपटेगी।'' मैंने बोधराज से कहाँ – मगर बोधराज ने नहीं सुना और गुलेल चला दी। चील को निशाना नहीं लगा। कंकड़ छत से टकराकर नीचे गिर पड़ा और चील ने अपने बड़े–बड़े पंख फैलाए और नीचे सिर किए घूरने लगी।

''चलो यहाँ से निकल चलें,'' मैंने डरकर कहा।

''नहीं! हम चले गए तो चील बच्चों को खा जाएगी।''

उसके मुँह से यह वाक्य मुझे अटपटा लगा। अभी कुछ देर पहले खुद तो घोंसला तोड़ने के लिए गुलेल उठा लाया था।

बोधराज ने एक और निशाना बाँधा। मगर चील उस शहतीर पर से उड़ी और गोदाम के अंदर पर फैलाए तैरती हुई–सी आधा चक्कर काटकर फिर से शहतीर पर जा बैठी। घोंसले में बैठे बच्चे बस लगातार चों–चों किए जा रहे थे।

बोधराज ने झट से गुलेल मुझे थमा दी और जेब में से पाँच सात कंकड़ निकालकर मेरी हथेली पर रखे। ''तुम चील पर गुलेल चलाओ। चलाते जाओ, उसे बैठने नहीं देना।'' उसने कहा और स्वयं भागकर दीवार के साथ रखी मेज़ को घसीटकर फर्श के बीचों–बीच लाने लगा।

मैं गुलेल चलाना नहीं जानता था। दो–एक बार मैंने कंकड़ रखकर गुलेल चलाई लेकिन इस बीच चील गोदाम के दूसरे शहतीर पर जा बैठी थी।

बोधराज मेज़ को घसीटता हुआ ऐन मैना के घोंसले के नीचे ले आया। फिर उसने मेज़ पर एक टूटी हुई कुर्सी चढ़ा दी और फिर उछलकर मेज़ पर चढ़ गया और वहाँ से कुर्सी पर जा खड़ा हुआ। फिर बोधराज ने दोनों हाथ ऊपर को उठाए, जैसे–तैसे अपना संतुलन बनाए हुए उसने धीरे से दोनों हाथों से घोंसले को शहतीर पर से उठा लिया और धीरे–धीरे कुर्सी पर से उतर कर मेज़ पर आ गया और घोंसले को थामे–थामे छलांग लगा दी।

''चलो, बाहर निकलकर चलो,'' उसने कहा और दरवाज़े की ओर लपका।

गोदाम में निकलकर हम गराज में आए गए। गराज में एक ही बड़ा दरवाज़ा था और दीवार में छोटा–सा एक झरोखा। यहाँ भी गराज के आरपार लकड़ी का एक शहतीर लगा था।

''यहाँ पर चील नहीं पहुँच सकती,'' बोधराज ने कहा और इधर–उधर देखकर बक्से पर चढ़कर घोंसले को एक टूटे शहतीर के ऊपर रख दिया।

थोड़ी देर में घोंसले में बैठे मैना के बच्चे चुप हो गए। बोधराज बक्से पर चढ़कर मैना के घोंसले में झाँकने लगा। मैंने सोचा, अभी हाथ बढ़ाकर दोनों बच्चों को एक साथ उठा लेगा, जैसा वह अक्सर किया करता था, फिर भले ही उन्हें जेब में डालकर घूमा फिरे। मगर उसने ऐसा कुछ नहीं किया। वह देर तक घोंसले के अंदर झाँकता रहा और फिर बोला, ''थोड़ा पानी लाओ, इन्हें प्यास लगी है। इनकी चोंच में बूँद–बूँद पानी डालेंगे।''

मैं बाहर गया और एक कटोरी में थोड़ा–सा पानी ले आया। दोनों नन्हें–नन्हें बच्चे चोंचें ऊपर को उठाए हाँफ रहे थे। बोधराज ने उनकी चोंच में बूँद–बूँद पानी डाला और बच्चों को छूने से मुझे मना कर दिया, न ही स्वयं उन्हें छुआ।

''इन बच्चों के माँ–बाप यहाँ कैसे पहुँचेंगे?'' मैंने पूछा।

''वे इस झरोखे में से आ जाएँगे। वे अपने–आप इन्हें ढूँढ निकालेंगे।''

हम देर तक गराज में बैठे रहें। बोधराज देर तक मनसूबे बनाता रहा कि वह कैसे रोशनदान को बंद कर देगा, ताकि चील कभी गोदाम के अंदर न आ सके। उस शाम वह चील की ही बातें करता रहा।

दूसरे दिन जब बोधराज मेरे घर आया तो न तो उसके हाथ में गुलेल थी और न जेब में कंकड़, बल्कि जेब में बहुत–सा चुग्गा भरकर लाया था और हम दोनों देर तक मैना के बच्चों को चुग्गा डालते और उनके करतब देखते रहे थे।

भीष्म साहनी

भीष्म साहनी : (1915–2003) रावलपिंडी में पैदा हुए। पत्रकारिता, अध्यापन, नाटक मंडली में काम के साथ–साथ साहित्य लेखन भी किया। इप्टा, प्रगतिशील लेखक संघ, अफ्री–एशियाई लेखक संघ जैसे संगठनों को मज़बूती प्रदान की। उनकी प्रमुख रचनाएँ भाग्य रेखा, कुत्तों, भटकती राख, तमस, हानूश, कबिरा खड़ा बाज़ार में आदि हैं।

कहानी में ढूँढो–

1. बोधराज जानवरों के साथ बहुत क्रूर बरताव करता था। कहानी की किन–किन घटनाओं से इस बात का पता चलता है? (कम–से–कम 4 घटनाएँ बताइए।)

2. 'नहीं हम चले गए तो चील बच्चों को खा जाएगी।' यह बात बोधराज के मुँह से क्यों अटपटी लग रही थी ?

3. 'पक्षियों के घोंसलों पर तो उसकी विशेष कृपा रहती थी।' इस लाइन में लेखक क्या कहना चाह रहे हैं ?

4. बोधराज ने मैना के बच्चों को बचाने के लिए क्या तरकीब सोची ?

5. कहानी के आधार पर बोधराज के चरित्र का वर्णन कीजिए।

अपनी समझ से–

1. लेखक ने अपने घर के चिड़िया के घोंसले के बारे में बताया है। इसी तरह आप भी अपने घर के बारे में विवरण लिखिए।

भाषा की बात–

1. (अ) एक हरबंस नाम का लड़का था। जिसके सब काम अनूठे हुआ करते थे। .... परदादा हो जी।

रेखांकित शब्द 'जिसके' का प्रयोग हरबंस के लिए हुआ है।

इस पैराग्राफ में और कौन–कौन से शब्द हैं जिनका प्रयोग 'हरबंस' के लिए किया गया है ? यह भी बताइये कि ये शब्द व्याकरण की दृष्टि से किस वर्ग में आते है ?

(ब) 'हरबंस' की जगह 'रानी' रखकर इस पैराग्राफ को फिर से लिखिए।

(स) पैराग्राफ फिर से लिखते समय आपको कहाँ–कहाँ बदलाव करना पड़ा? और क्यों?

2. रेखांकित शब्दों के अर्थ बताइये।

(अ) जब वह चिहुँटी काटता तो लगता कि साँप ने डस लिया।

(ब) इनके माँ–बाप ज़रूर अपने काफ़िले से पिछड़ गए होंगे।

(स) नीचे एक लम्बा शहतीर कमरे के आर–पार डाला गया था।

इकाई–IV

भाषा व विचार – व्यक्तिगत विकास में भाषा की भूमिका

अध्याय : 1. भाषा व विचार

अध्याय : 2. भाषा और विचार का संबंध

अध्याय : 3. भाषा व्यक्ति के लिए क्यों आवश्यक है?

अध्याय : 4. भाषा का सीखने–सिखाने से संबंध

अध्याय – 1

भाषा व विचार

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
    - मनुष्य क्यों अलग है?
    - विचार तर्क व उससे आगे
    - अवधारणाएँ कैसे बनती हैं?
    - शब्द अवधारणा व उनका जाल
    - भाषा और विचार का संबंध
        - भाषा विचारों पर गहरा प्रभाव डालती है।
        - भाषा का विचारों पर प्रभाव नहीं पड़ता
        - भाषा कुछ हद तक विचारों को प्रभावित करती है
        - भाषिक और अभाषिक सन्दर्भ
        - उदाहरण (अंग्रेजी व जापानी)
        - उदाहरण (हिन्दी व अंग्रेजी)
        - निष्कर्ष

परिचय :

'भाषा का विचारों के बनने से संबंध' यह एक जीवन्त विमर्श का मुद्दा है। इस संदर्भ में कोई स्पष्ट सर्वमान्य नज़रिया उपलब्ध नहीं है ऐसे बहुत से तर्क हैं जो बताते हैं कि भाषा का होना; विचारों के बनने में और उनको व्यवस्थित करने में मदद करता है लेकिन इसके विपक्ष में भी बहुत से तर्क हैं जिनके अनुसार किसी चीज़ को जानने की योग्यता तथा विचारों के निर्माण की प्रक्रिया भाषिक योग्यता से बिल्कुल अलग है।

इस इकाई में हमारा प्रयास इन प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ना अथवा इनका समाधान करना नहीं है वरन् प्रयास होगा। कि हम अवधारणाओं के विकसित होने, तर्कपूर्ण दलीलों को बनाने तथा भाषाई क्षमता के आपसी संबंध को देखें व समझें।

उद्देश्य :

- यह समझ पाएँगे कि भाषा क्या है?
- यह समझ पाना कि मनुष्य में विचार, तर्क व उससे आगे जाने की क्षमता होती है।
- अवधारणा कैसे बनती है? की समझ।
- शब्द, अवधारणा व उनके जाल को समझ पाना।

मनुष्य क्यों अलग है?

मनुष्यों की प्रमुख क्षमताओं में से एक क्षमता है उन चीज़ों के बारे में दृष्टि बना पाना, अवधारणा बना पाना और बात कर पाना जिनका अस्तित्व आज है और ऐसी चीज़ों के बारे में भी यह सब कर पाना जो बहुत पहले कभी थी। हमारी क्षमता इससे कहीं आगे भी जाती है, हम न सिर्फ़ जो पहले कभी था उसके बारे में बात कर सकते हैं, वरन् उसके बारे में भी बात कर सकते हैं, जो कभी था ही नहीं। मनुष्य विचारों के सहारे उड़ सकता है, बहुत लम्बी छलाँग लगा सकता है और उन विचारों तक पहुँच सकता है जो पहले नहीं थे। विचारों को पक्का करने के लिए कल्पना को भाषा के सूत्र में गूँथ सकता है। भाषा पहले या विचार इतना महत्त्वपूर्ण प्रश्न नहीं है, जितना कि यह तथ्य कि इस तरह की कल्पनाओं को पिरोकर आगे बढ़ने का काम भाषा के बिना नहीं हो सकता।

मनुष्यों के पास कल्पना करने की अनूठी क्षमता है। कल्पना कर पाने की क्षमता नए विचारों के बनने और धीरे–धीरे उनके ठोस रूप लेने को प्रभावित करती है।

इसके कुछ सरल उदाहरण इस तरह हो सकते हैं। जैसे पक्षी को उड़ते देख कभी किसी मनुष्य ने सोचा कि क्या हम भी उड़ सकते हैं? और फिर इसमें नए विचार जुड़ते गए कि उड़ने के लिए किन–किन चीज़ों की ज़रूरत होगी? यदि हम उड़ना चाहें तो क्या करें? और भी कई नए विचार और अन्ततः हम हवाई जहाज़ जैसी चीज़ बना पाएँ। यह विचारों का सिलसिला अभी भी रुका नहीं है, अब भी यह विचार जारी है कि किस तरह हवाई जहाज़ की गति को और बढ़ाया जाय। उसको और बड़ा किया जाय ताकि उसमें एक ही बार में ज़्यादा से ज़्यादा लोग यात्रा कर सकें। यह कल्पना कि मनुष्य भी उड़ सकता है तथा इसका ठोस रूप हवाई जहाज़ तक जाने में न केवल एक व्यक्ति बल्कि अनेक व्यक्तियों व उनकी पुरानी समझ को उपयोग कर पाना है इसी तरह यह विचार कि कुछ चीज़ें पानी पर तैर सकती हैं, यह सवाल कि ये पानी पर क्यों तैर पाती हैं, इनके क्या विशेष गुण हैं और फिर इन विचारों का मूर्त रूप; जहाज़ का बनना इत्यादि। ये कुछ ऐसे विचार हैं जिनसे तकनीकी विकास संभव हुआ है।

कुछ प्रश्न :

- भाषा के बिना कल्पना संभव नहीं। इस कथन की विवेचना करें। अपने मत को उदाहरण से समझाएँ।

विचार, तर्क व उससे आगे

यह बात कि इस तरह के विचार केवल मनुष्य ही बना सकते हैं, हमें यह सोचने व मानने को मजबूर करता है कि मनुष्यों में कुछ अनूठी क्षमता होती है। हम किसी वस्तु पर कोई बल लगा रहे हैं तो उसकी चाल की गणना कर सकते हैं। किसी उपग्रह के चन्द्रमा व सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने में क्या संबंध है इत्यादि के बारे में बात कर सकते हैं। हम मान्यताओं का एक ऐसा ढाँचा बना सकते हैं जिसमें अंतःविरोध नहीं दिखे और फिर इस ढाँचे के अन्दर रहते हुए हम तार्किक विश्लेषण की सहायता से कई ऐसे निष्कर्षों तक पहुँच सकते हैं जो इस ढाँचे में फिट बैठेंगे। हम एक–दूसरे से असहमत हो सकते हैं और दूसरे के समक्ष अपनी असहमति प्रकट ही नहीं कर सकते बल्कि इस असहमति का कारण भी बता सकते हैं।

संक्षेप में, इन उदाहरणों से यह भी पता चलता है कि मनुष्य के पास विचारों को व्यवस्थित करने की, तर्क के लिए रूपरेखा बनाने की और विश्लेषण करने की योग्यता भी होती है। एक कथन का दूसरे कथन से क्या जुड़ाव है और इन दोनों के जुड़ाव के पीछे तर्क क्या है? यह समझने की भी क्षमता होती है।

यह भी स्पष्ट है कि तर्कों का यह सिलसिला चाहे विज्ञान में हो, चाहे भूगोल, इतिहास, गणित, दर्शन या किसी और विषय में, इसकी सामग्री व विषयवस्तु को भाषा के माध्यम से ही प्रस्तुत किया जा सकता है।

इन विषयों के कुछ पहलू भाषा के दायरे से अलग भी हो सकते हैं, इस मसले पर काफ़ी विवाद है। जैसे किसी पहलू के बारे में सोच पाना, उसके बारे में एक रोती छवि देख पाना जिसे बाद में भाषा में व्यक्त किया जाए को भी मानव की क्षमता माना गया है लेकिन इन सबको दूसरों के साथ बाँटने तथा काम करने के लिए भी हमें भाषा की आवश्यकता होगी।

वास्तविकता को समझने की हमारी क्षमता, किस हद तक हमारी भाषाई क्षमता के द्वारा निर्धारित होती है? यह कहना कठिन है।

यद्यपि अन्तिम निष्कर्ष के तौर पर यह नहीं कहा जा सकता कि एस्किमो लोगों के पास बर्फ़ के लिए ज़्यादा शब्दों का होना उनको बर्फ़ के विभिन्न रूपों में अन्तर कर पाने की अधिक योग्यता देता है, पर यह स्पष्ट

है कि विभिन्न तरह के बर्फ़ के बारे में हमारी सोच दूसरों के साथ बाँटने के लिए हमें उन विशिष्ट शब्दों की आवश्यकता होती है जो कि उसको अच्छी तरह विवरण दे सके।

अवधारणाएँ कैसे बनती हैं?

यह समझने में स्केम्प का यह उदाहरण मददगार हो सकता है कि किसी अवधारणा को अर्जित करने अथवा उसके विकास की शुरुआत एक ठोस/मूर्त वस्तु की संकल्पना के साथ होती है। इसके बाद यह अवधारणा या तो बहुत ही संकीर्ण और सीमित रह सकती है, सिर्फ़ उन्हीं वस्तुओं तक जो कि उस वस्तु के जैसे दिखते हैं या फिर बहुत ज़्यादा व्यापक हो सकती है और तब वे वस्तुएँ भी उस वर्ग में आ सकती है जो कि उस वर्ग की नहीं हैं। यदि कुर्सी का उदाहरण लें तो आप एक विशेष प्रकार की कुर्सी को ही कुर्सी मान सकते हैं। या फिर आप इसको बहुत ज़्यादा फैला सकते हैं और हर किसी चीज़ जैसे स्टूल अथवा टेबल को इस अवधारणा में शामिल कर सकते हैं।

शब्द, अवधारणा व उनका जाल

शब्द का बार–बार विशिष्ट संदर्भों में प्रयोग व इसके उपयोग का विश्लेषण धीरे–धीरे हमें उस अवधारणा को समझने व दूसरी अवधारणाओं को अलग करने में मदद करता है। हम धीरे–धीरे बहुत से उदाहरणों में उन चीज़ों के बारे में बात कर पाने की योग्यता प्राप्त कर लेते हैं जो कि सामने नहीं है। और यह भी इस तरह से चीज़ों के बारे में बात करना जिसमें सिर्फ़ एक पहलू पर ही ध्यान देना हो।

हम किसी वस्तु को देखते हैं और उसे गोल कहते हैं, फिर हम किसी दूसरी वस्तु को देखते हैं जो कि पहलेवाली वस्तु से फरक है लेकिन उसे भी हम गोल कहते हैं। यहाँ हम एक ऐसी स्थिति बना रहे हैं जिससे उस वस्तु के ज़रिये हम गोल की अमूर्त संकल्पना बना पाते हैं। जो कि वस्तु से इतर है और यह बात कुर्सी के संदर्भों में भी एक हद तक सही है।

हम अपने बारे में ठीक वैसे ही बात कर सकते हैं जैसे कि कोई और व्यक्ति। हम हमेशा सचेत रूप में खुद को एक अलग अस्तित्व के रूप में देख पाने की योग्यता भी रखते हैं और यह योग्यता हमारे द्वारा उपयोग की गई भाषा में झलकती है। जबकि अन्तिम निष्कर्ष के रूप में यह नहीं कहा जा सकता कि इनमें से कुछ योग्यताएँ जानवरों में नहीं हैं। यह स्पष्ट है कि जिस तरह से मानव एक संवाद में सम्मिलित होने की योग्यता रखते हैं तथा जिस तरह से वे दर्शन व अध्यात्म के विषय/क्षेत्र बना सकते हैं उनके पास अध्यात्म के उन सभी नियमों को तोड़ने की स्वतंत्रता भी होती है जो कि स्वयं उन्होंने बनाये हैं।

यह भी बहस होती है कि हमारे प्रमुख विचार और धारणाएँ/मत हमारी मातृभाषा से जुड़े होते हैं। बहुत से उदाहरणों में यह स्पष्ट झलकता है कि (प्रवाह) जल्दी–जल्दी बोलते वक़्त हम अपनी मातृभाषा का ही प्रयोग करते हैं। और इसी वजह से फिर से यह बात ज़ेहन में आती है कि भाषा हमारी पहचान का हिस्सा है और भाषा से ही हमारी रचना हुई है।

कुछ प्रश्न :

- गोल की तरह की कोई और धारणा लेकर समझाएँ कि कैसे उसमें थोड़ी–थोड़ी विविधता संभव है व कैसे वस्तु से अलग है।

भाषा और विचार का संबंध

भाषा, विचार और वास्तविकता के बीच के रिश्ते को भाषाविद्, मनोवैज्ञानिक और मानव–वैज्ञानिक (anthropologists) सदियों से समझने की कोशिश कर रहे हैं। दार्शनिक प्लेटो अपने 'रूप के सिद्धांत' (theory of forms) में यह वर्णित करते हैं कि भाषा और विचार एक अमूर्त अवधारणा जिसे 'रूप या आकार' कहते हैं, की एक शाखा के रूप में अपना अर्थ रखते हैं लेकिन पश्चिमी सोच के साथ अन्ततः प्लेटो भाषा को वास्तविकता पर आधारित मानते हैं।

इसी तर्ज़ पर दार्शनिक जॉन लॉक ने भाषा और विचारों के संबंध को इस प्रकार प्रस्तुत किया : ''आस–पास की वस्तुओं से हमारी इंद्रियों को जिस प्रकार की अनुभूति मिलती है, उन्हें वे दिमाग़ तक पहुँचाती है और इसी तरह गर्म, ठंडा, पीला, मुलायम आदि की धारणा हमारे दिमाग़ में बनती है'' हम कैसे सोचते है और वास्तविकता को कैसे समझते हैं और फिर वह किस तरह हमारी भाषा में झलकता है इस बारे में लॉक का यह कथन बहुत से दार्शनिकों और मनोवैज्ञानिकों की सोच का प्रतिनिधित्व करता है।

लेकिन दार्शनिकों की इस आम सोच के विपरीत जर्मन विद्वान् विलियम वॉन हमबोल्ट ने 18वीं शताब्दी में अपने वेलतानश्वॉंग ('दुनिया को देखने का नज़रिया) नामक प्राक्कल्पना के तहत कहा कि भाषा और विचार को अलग नहीं किया जा सकता और भाषा पूरी तरह विचारों को निर्धारित करती है। हमबोल्ट ने इस बात पर ज़ोर दिया कि भाषाओं में अर्थ–संबंधित गहरे अंतर होते हैं जिनके कारण भिन्न संज्ञानात्मक नज़रिये बनते हैं। इस विचार को 'सांस्कृतिक सापेक्षता' (cultural relativity) के नाम से जाना जाता है।

1930 के दशक में 'भाषिक सापेक्षता' के इसी दृष्टिकोण पर आधारित सपीर–वोर्फ प्राक्कल्पना ने काफ़ी ध्यान आकर्षित किया। यह सपीर के मूल अमरीकी भाषाओं के अध्ययन पर आधारित थी। इस अध्ययन का निम्न अंश ख़ासतौर पर आलोचना, विवेचन और भविष्य में कई अध्ययनों का आधार बना :

''इंसान न तो केवल वस्तुपरक (objective) दुनिया में रहते हैं और न ही केवल सामाजिक प्रक्रियाओं की दुनिया में। बल्कि वे काफ़ी हद तक उस भाषा पर आश्रित है जो उनके समाज में उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम बन चुकी है। तथ्य यह है कि 'वास्तविक दुनिया' अनजाने में ही बहुत हद तक समुदाय के भाषाई स्वभाव पर बनी होती है। कोई भी दो भाषाएँ कभी इतनी समान नहीं होतीं कि सामाजिक वास्तविकता (social reality) को बिल्कुल समान रूप में व्यक्त कर सकें। जिस संसार में विभिन्न समुदाय/समाज रहते हैं वे संसार ही एक–दूसरे से बहुत भिन्न हैं न कि सिर्फ़ एक संसार को दिए गए अलग–अलग नाम हैं।''

सपीर और उनके शिष्य वोर्फ के इसी प्रकार के कथनों के कारण बहुत से विद्वान् और अन्य लोग इस प्राक्कल्पना को या तो सही या ग़लत सिद्ध करने में जुट गए। आज अधिकतर शोधकर्ता 'सपीर–वोर्फ' प्राक्कल्पना अर्थात् 'भाषिक सापेक्षता' के संबंध में इन तीनों में से किसी एक के पक्ष में तर्क देते हैं :

(i) भाषा का विचारों पर बहुत गहरा प्रभाव है। (सबल व्याख्या)

(ii) भाषा विचारों को प्रभावित नहीं करती।

(iii) भाषा कुछ हद तक विचारों को प्रभावित करती है। (कमज़ोर व्याख्या)

कुछ प्रश्न :

- हमबोल्ट कहते हैं कि ''भाषाओं में अर्थ संबंधित गहरे अन्तर होते हैं'' क्या आप इस बात से सहमत हैं? इसे जाँचने के लिए अपने आस–पास बोली जाने वाली 2–3 भाषाओं में एक ही वस्तु के लिए प्रयोग होने वाले अलग–अलग शब्दों की सूची बनाइए एवं विश्लेषण कीजिए।

I भाषा विचारों पर गहरा प्रभाव डालती है

सपीर–वोर्फ प्राक्कल्पना के पक्ष में वोर्फ ने होपी आदिवासियों का उदाहरण दिया। उनके अनुसार होपी भाषा में अंग्रेजी के समकक्ष 'समय' की अवधारणा के लिए कोई शब्द या अन्य व्याकरणिक इकाई नहीं है यानी वास्तविकता को देखने का होपी नज़रिया भाषा–विशिष्ट है और उसकी सटीक अभिव्यक्ति के लिए वह भाषा जानना ज़रूरी है।

वोर्फ के इस उदाहरण की इसलिए आलोचना की गई क्योंकि वह संज्ञानात्मक अंतर को अलग से दर्शाने के बजाय भाषिक अंतर के ही आधार पर उसके बारे में निष्कर्ष निकाल रहे हैं। यानी भाषिक भिन्नता के बारे में दोहराना ही संज्ञानात्मक भिन्नता का सबूत बना दिया गया।

सपीर वोर्फ प्राक्कल्पना के पक्ष में अक्सर दिया जानेवाला तर्क है रंगों के बोध का। प्राक्कल्पना के अनुसार अगर विभिन्न भाषाओं में रंगों का वर्गीकरण भिन्न–भिन्न प्रकार से किया जाता है तो उन समुदायों की रंगों की अनुभूति भी अलग–अलग होगी।

1970 में किए गए एक शोध में पापुआ न्यू गिनी के बोरिन्मो आदिवासियों को 160 अलग–अलग रंग वर्गीकृत करने के लिए दिए गए। बोरिन्मो वर्गीकरण के लिए कम ही श्रेणियाँ बना पाए और वे अंग्रेज़ी के नीले और हरे रंगों में भेद भी नहीं कर पाए। बल्कि उन्होंने ऐसे दो रंगों (जो बोरिन्मो में नॉल और वोर के नाम से जाने जाते हैं) को अलग श्रेणी में डाला जो अंग्रेज़ी में एक ही रंग 'पीले' के तहत आएँगे। बोरिन्मो रंगों का नीले/हरे के बजाय नॉल/वोर ('पीले' के भिन्न प्रकार) के आधार पर ज़्यादा अच्छी तरह मिलान कर लेते हैं जबकि इसके विपरीत अंग्रेज़ी भाषी 'पीले' के अलग–अलग प्रकारों के बजाय नीले/हरे के आधार पर ज़्यादा अच्छा मिलान कर लेते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार भाषा में रंगों की अलग–अलग श्रेणियों के लिए नाम होने या न होने से उस भाषा के भाषियों की उन रंगों की समझ/बोध पर प्रभाव पड़ता है यह निष्कर्ष सपीर– वोर्फ प्राक्कल्पना के पक्ष में जाता है।

II भाषा का विचारों पर प्रभाव नहीं पड़ता

शोधकर्ता सपीर– वोर्फ प्राक्कल्पना के विरोध में तीन मुख्य बिन्दुओं का प्रयोग करते हैं : (i) अनुवादिकता, (ii) भाषिक और अभाषिक घटनाओं/संदर्भों में अंतर और (iii) सार्वभौमिक सिद्धांत। अनुवादिकता के संदर्भ में कई विद्वानों का कहना है कि चाहे भाषाएँ बारीक़ियों को अभिव्यक्त करने में एक दूसरे से कितनी भी भिन्न हों मगर फिर भी इन बारीक़ियों को एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवादित करना संभव है।

ऐरिक लैनबर्ग का सपीर–वोर्फ प्राक्कल्पना के विपक्ष में तर्क है कि ''भाषिक और अभाषिक संदर्भों/घटनाओं में सहसंबंध बनाने से पहले उनका अलग से अवलोकन और विवरण होना ज़रूरी है''। लेनेबर्ग के अनुसार यदि भाषिक और अभाषिक संदर्भों में कोई अंतर ही न किया जाए तो भाषा की विचारों को प्रभावित करने की बात निराधार है और इसके पक्ष में दिया गया सबूत पूरी तरह भाषिक भिन्नताओं पर ही आधारित है।

तीसरा मुद्दा है सार्वभौमिकता की अवधारणा का जिसके संदर्भ में पोर्ट रोयाल का यह कथन है– ''व्याकरण में कुछ ऐसी बातें देखने को मिलती हैं जो हर भाषा में पाई जाती हैं। इसे हम सामान्य व्याकरण कहते हैं। यानी व्याकरण, जिसका मक़सद विचारों को 'अभिव्यक्त करना होता है, दो तरह के नियमों पर चलती है। इनमें से एक प्रकार उनका है जो अपरिवर्तनीय सच (विवादरहित सच) है और जिनका सार्वभौमिक रूप से पालन होता है जैसे ये सीधे विचारों के प्रारूप पर ही लागू होते हैं, विचारों के ही विश्लेषण से निकलते हैं और उन्हीं का निष्कर्ष होते हैं। आमतौर पर सार्वभौमिकता का सिद्धांत, जो कि आमतौर पर चौम्स्की से जोड़ा जाता है एक ऐसी गहरी संरचना की बात करता है जो सभी भाषाओं में एक सी होती है। यदि इसे भाषिक सापेक्षता के संदर्भ

में देखें तो इसके मुताबिक़ सभी भाषिक–सांस्कृतिक समुदायों को एक सी वास्तविकता दिखेंगी। ये निष्कर्ष वोर्फ के भाषा–आधारित सामुदायिक भिन्नताओं के बिल्कुल विपरीत है।

III भाषा कुछ हद तक विचारों को प्रभावित करती है

भाषा और विचारों के संबंध में शोध करना मुश्किल नहीं है, मुश्किल है ऐसे अलग–अलग भाषिक, अभाषिक सन्दर्भों का समुच्चय बनाना जो इस प्राक्कल्पना की सही जाँच कर सके।

भाषिक और अभाषिक सन्दर्भ

अधिकतर शोधकर्ता अब तक यह मानने को तैयार नहीं है कि भाषा विचारों को तय करती है लेकिन होपी आदिवासियों और अन्य उदाहरणों के आधार पर वे भाषा का कुछ हद तक विचारों पर प्रभाव ज़रूर मानते हैं। भाषिक सापेक्षता तय करने में सवाल यह नहीं है कि भाषा विचारों को प्रभावित करती है या नहीं, बल्कि यह कि कितना प्रभावित करती है।

भाषिक सापेक्षता की कमज़ोर व्याख्या के पक्ष में कई उदाहरण दिए जाते हैं। उदाहरण 1. (अंग्रेज़ी व नावाहो भाषा) उनमें से एक लिंडा रॉजर्स के द्वारा किए प्रयोग का है। रॉजर्स ने अंग्रेज़ी और नावाहो जाननेवाले द्विभाषी बच्चों को एक कहानी सुनाई और साथ–साथ उनकी मस्तिष्क तरंगों को रिकॉर्ड किया। उन्होंने पहले अंग्रेज़ी में कहानी सुनाई और देखा कि बच्चों के मस्तिष्क का बायाँ हिस्सा अधिक सक्रिय था। फिर उन्होंने नावाहो में कहानी सुनाई तो मस्तिष्क के दाएँ गोलार्ध में प्रतिक्रिया पाई। इससे रॉजर्स ने निष्कर्ष निकाला कि अंग्रेज़ी जो कि एक संज्ञा–केन्द्रित भाषा है, बाएँ गोलार्ध द्वारा विश्लेषित होती है जबकि नावाहो जो कि एक क्रिया–केंद्रित भाषा है, दाएँ गोलार्ध में विश्लेषित होती है। रॉजर्स के अनुसार इससे साबित होता है कि श्रोताओं और विषयवस्तु के एक–सा होते हुए भी अलग–अलग भाषाओं के विश्लेषण में अंतर था।

उदाहरण 2. (अंग्रेजी व जापानी)

एक और उदाहरण है एग्नेस नियेकावा हॉवर्ड द्वारा 1988 में जापानी और अंग्रेज़ी कर्मवाच्य (passive) संरचनाओं पर किए गए शोध का। शोध के मुताबिक़ जापानी भाषा में दो तरह के कर्मवाच्य वाक्य होते हैं। यदि एक को दूसरे के साथ मिलाया जाए तो अर्थ इस प्रकार बदल जाता कि ऐसा प्रतीत होता है कि वाक्य के कर्ता से वह करवाया गया जो क्रिया में झलकता है। जापानी से अंग्रेज़ी में अनूदित कहानियों में यह संरचना नहीं देखी गई जबकि अंग्रेज़ी से जापानी में अनुवाद करते समय जापानी अनुवादकों ने इस संरचना का प्रयोग किया।

इसी प्रकार जब अंतर्वैयक्तिक संघर्ष से जूझते कार्टून दिखाए गए तो अंग्रेज़ी भाषियों से अधिक जापानियों ने नकारात्मक परिणामों की ज़िम्मेदारी दूसरों के सिर मढ़ी। शोध का मक़सद यह दर्शाना था कि बेशक जापानी भाषी इन बातों से अनभिज्ञ हों लेकिन यह भाषिक संरचना उनके सामान्य बोध और सांस्कृतिक नज़रिये को प्रभावित करती है।

उदाहरण 3. (हिन्दी व अंग्रेजी)

भाषा के विचारों को प्रभावित करने के पक्ष में एक और तर्क है किसी शब्द, वाक्यांश या विचार को एक भाषा से दूसरी में संबद्ध करने का। कोई भी द्विभाषी यह बता सकता है कि कुछ विचार एक भाषा में दूसरी से अधिक आसानी से अभिव्यक्त हो सकते हैं। वही विचार जिसे एक भाषा एक ही शब्द में समेट दे उसे दूसरी भाषा में समझाने में एक गद्यांश तक लग सकता है जैसे कि अंग्रेज़ी में जिसे हम "circularity of arguments" कहते हैं, उसके लिए हिन्दी में हमारे पास कोई शब्द/वाक्यांश नहीं है तो पूरा विवरण देना ही पड़ेगा।

अलास्का की एक देनाइना ऐथाकस्कन नामक एस्किमो जनजाति की भाषा में झरनों और पगडंडियों के लिए एक पूरा शब्द संग्रह है, एक धीमे या तेज़ प्रवाहवाली जगह, पिघलती/गलती हुई बर्फ़ से ढँका हुआ स्थान,

ऐसी पगडंडी जिसकी बर्फ़ अपनी राह से हट गई हो, लकड़ियाँ लाने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली पगडंडी। इन सबके लिए इस भाषा में एक–एक शब्द मौजूद हैं।

यानी एक भाषा में किसी दूसरी भाषा के शब्द या वाक्यांश को आबद्ध करने की क्षमता, जिसे अंग्रेज़ी में codability कहते हैं। यह खुद एक उदाहरण है, सोचिए यह कुछ हद तक भाषा का विचारों पर प्रभाव ज़रूर दर्शाती है लेकिन इससे एक भाषा–भाषियों का दूसरी भाषा–भाषियों को वे अवधारणाएँ या श्रेणियाँ बनाने का बोध बाधित नहीं हो जाता।

सपीर– वोर्फ की प्राक्कल्पना को सही या ग़लत साबित करने के लिए अध्ययन की परिपूर्ण स्थिति तो नहीं हो सकती। शोधकर्ताओं के पास कुछ विशिष्ट संदर्भों में छोटे–मोटे उदाहरण ही जाँचने के लिए रह जाते हैं जिनमें भाषा की विचारों को प्रभावित करने की संभावना हो और ऐसे शोधों के आधार पर अधिकतर शोधकर्ता इस प्राक्कल्पना के एक कमज़ोर प्रारूप को मानते हैं।

IV. निष्कर्ष

''भाषा और समाज एक दूसरे में इस तरह गुँथे हुए हैं कि एक को दूसरे के बिना समझ पाना असंभव है। ऐसा कोई मानव समाज नहीं है जो भाषा पर निर्भर न करता हो, उससे प्रभावित न होता हो और खुद उसे प्रभावित न करता हो।'' (यह कथन भाषा, समाज और वास्तविकता के बीच के संबंध को सबसे अच्छी तरह व्यक्त करता है) सपीर–वोर्फ प्राक्कल्पना ने लोगों की भाषा के बारे में सोचने के नज़रिये को बदल दिया है जहाँ कुछ लोग सपीर–वोर्फ के मत से सहमत हैं वहीं दूसरे लोग इसके विरोध में तर्क देते हैं। लेकिन अब हर शोध प्रमाणित करते हैं कि भाषा का विचारों और वास्तविकता को देखने के नज़रिये पर प्रभाव तो पड़ता है, मगर वह वास्तविकता को नियंत्रित नहीं करती।

कुछ प्रश्न :

- मान लीजिए की आप सपीर–वोर्फ प्रक्कल्पना की सबल व्याख्या के पक्षधर हैं और मानते हैं कि भाषा का विचारों पर गहरा प्रभाव पड़ता है तो आप अपने पक्ष में क्या–क्या तर्क देंगे?

अध्याय – 2

भाषा और विचार का संबंध

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
    - क्या भाषा सोच को प्रभावित करती है?
    - एक से अधिक कैसे दिखाए?
    - क्या हम भाषा में ही सोचते हैं?
        - लेकिन लोग भाषा में सोचते हैं, सही है ना?
    - क्या शब्द सोच सीमित करते हैं?
    - ऐस्किमो और बर्फ के लिए शब्द
        - लेकिन बर्फ के लिए एस्किमो के उन विभिन्न शब्दों का क्या?
        - तो नई भाषा सीखने से मेरे सोचने का तरीका नहीं बदलेगा।

परिचय :

लोग यह सवाल कई सौ वर्षों से पूछते आ रहे हैं। भाषाविदों ने इस पर विशेष ध्यान 1940 के बाद देना शुरू किया जब एक भाषाविद बैंजामिन ली वोर्फ ने पूर्वोत्तर अरीजोना में रहनेवाले 'होपी' समुदाय, जो कि ठेठ अमेरिकन भाषा बोलता है, का अध्ययन किया। अपने इस अध्ययन के आधार पर वोर्फ ने दावा किया कि होपी लोग और अंग्रेज़ी बोलने वाले लोग दुनिया को अलग–अलग तरीकों से देखते, समझते हैं क्योंकि उनकी भाषाएँ अलग–अलग हैं।

इससे हमें क्या बात समझ में आती है? इसका जवाब थोड़ा उलझा हुआ है। यह वैसा ही सवाल है कि अंडा पहले आया या मुर्गी? क्या आप उन चीज़ों के बारे में नहीं सोच सकते हैं जिनके लिए आपके पास शब्द नहीं हैं? या आपके पास उनके लिए शब्द नहीं हैं क्योंकि आप उनके बारे में सोचते नहीं हैं? इस समस्या का एक हिस्सा यह भी है कि इसमें भाषा और विचारों के अलावा कुछ और भी शामिल हैं और वह है संस्कृति। आपकी संस्कृति, परम्परा, जीवनशैली, आदतें और अन्य चीज़ें जो आप उन लोगों से प्राप्त करते हैं जिनके साथ आप रहते हैं। ये सभी चीज़ें आपके सोचने के तरीक़े को, बात करने के तरीक़े को प्रभावित करती हैं।

एक भाषा है – गूगु यिमिथिर (Guugu Yimithirr)। इसमें बाएँ (left), दाएँ (right), पीछे (back), आगे (front) जैसे शब्द नहीं हैं। इसलिए इस भाषा को बोलनेवाले हमेशा ही स्थान को बताने के लिए उत्तर, दक्षिण, पूर्व व पश्चिम का इस्तेमाल करते हैं। उदाहरण के लिए एक मकान का दरवाज़ा पूर्व की ओर है और वहाँ एक लड़का खड़ा है तो वे कभी नहीं कहेंगे कि एक लड़का मकान के आगे या सामने खड़ा है बल्कि वे कहेंगे कि वह मकान के पूर्व में खड़ा है इसलिए निःसन्देह वे सोचते होंगे कि लड़का मकान के पूर्व में खड़ा है जबकि हिन्दी भाषी सोचेगा कि वह मकान के आगे या सामने खड़ा है।

उद्देश्य :

- भाषा सोच को प्रभावित करती है कि समझ बना पाना।
- भाषा में एक से अधिक को कैसे दिखाया जाए कि समझ विकसित करना।

- इस बात की समझ बनाना कि क्या हम जो सोचते हैं? वह भाषा में ही सोचते हैं।
- इस बात की समझ कि क्या शब्द हमारे सोच को सीमित करते हैं?
- यह समझ बनाना कि एस्किमो के बर्फ के विभिन्न शब्दों का मायने क्या है?

क्या भाषा सोच को प्रभावित करती है

क्या हमारी भाषा हमारे सोचने के तरीक़े को प्रभावित करती है? या सांस्कृतिक आदतें/परम्पराएँ हमारी सोच और भाषा दोनों को प्रभावित करती हैं? सबसे अधिक संभावना यह है कि संस्कृति, सोच, आदतें, भाषा सभी साथ–साथ विकसित होती हैं।

लेकिन समस्या केवल शब्दों तक ही सीमित नहीं है अंग्रेज़ी में किसी वाक्य में क्रिया का रूप यह बताता है कि यह वाक्य भूतकाल की बात कर रहा है या वर्तमान काल की। (जैसे Mary walks मैरी चलती हैं, Mary walked मेरी चली थी) लेकिन 'होपी' में इसकी ज़रूरत नहीं है होपी भाषा के वाक्य में क्रिया का रूप बताता है कि वक्ता को यह जानकारी कैसे प्राप्त हुई। अतः होपी भाषा में स्वयं सृजित ज्ञान या जानकारी (जैसे मैं भूखा हूँ) के वाक्य में और सामान्यतः सभी को ज्ञात जानकारी (जैसे आकाश नीला है) वाले वाक्य में क्रिया का रूप भिन्न–भिन्न होगा। वैसे अंग्रेजी भाषी यह अतिरिक्त जानकारी जोड़ सकता है कि ''मैंने सुना है मैरी पास हो गई'' जिसमें पता चलता है कि यह जानकारी कैसे प्राप्त हुई। लेकिन सामान्यतः यह ज़रूरी नहीं है।

इसी भिन्नता के कारण बैंजामिन वोर्फ का मानना है कि अंग्रेज़ीभाषी और होपीभाषी किसी घटना के बारे में भिन्न–भिन्न रूप से सोचते हैं। होपीभाषी का ज़्यादा ज़ोर जानकारी के स्रोत पर होता है जबकि अंग्रेजी भाषी का ज़्यादा ज़ोर घटना के समय या काल पर होता है।

एक से अधिक कैसे दिखाएँ?

इसी प्रकार अलग–अलग भाषाओं के वाक्य विन्यास में वस्तुओं को भिन्न–भिन्न प्रकार से लिया जाता है अंग्रेज़ी में, कुछ संज्ञाएँ (जैसे bean) गिनने योग्य हैं और उनके बहुवचन बनाए जा सकते हैं (जैसे beans)। और कुछ संज्ञाएँ ढेर या समूह के रूप में हैं और उनके बहुवचन नहीं बनाए जा सकते हैं। (जैसे आपके पास 'दो कप चावल' हो सकते हैं लेकिन 'दो चावलें' नहीं)। दूसरी भाषाओं जैसे जापानी में इस तरह का विभेद नहीं होता है शोधकर्ताओं ने यह अध्ययन किया है कि भाषा की यह विशेषता अंग्रेज़ी भाषी को ढेर और एकल वस्तुओं के बीच फ़र्क़ करने में ज़्यादा सजग बनाता है।

एक और उदाहरण देखें – वोर्फ कहते हैं कि क्योंकि अंग्रेज़ी में समय को ऐसे टुकड़ों में तोड़कर देखा जाता है जिन्हें गिना जा सके। जैसे Three days (तीन दिन), Four minutes (चार मिनट), half an hour (आधा घण्टा) इसलिए अंग्रेजीभाषी समय को एक अटूट धारा न मानकर समूह के रूप में देखते हैं (मिनट, सेकेण्ड, घण्टा)। वोर्फ कहते हैं कि इसी से हम सोच पाते हैं कि समय एक वस्तु जैसा है, जिसे कि बचा सकते हैं, व्यर्थ गँवा सकते हैं, जबकि होपी भाषा में समय के बारे में इस तरह से बात नहीं की जाती है। इसलिए वे समय के बारे में भिन्न तरह से सोचते हैं। उनके लिए समय एक 'सतत चक्र' के रूप में चलनेवाली प्रक्रिया है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि हमारी भाषा समय के बारे में एक निश्चित दृष्टिकोण हम पर थोपती है। यह भी हो सकता है कि समय के बारे में हमारा दृष्टिकोण हमारी भाषा में प्रतिबिम्बित होता हो या हम अपनी संस्कृति में समय को जिस तरीक़े से लेते हैं वह हमारी भाषा और सोच दोनों में प्रतिबिम्बित होता हो।

यह ऐसा लगता है जैसे भाषा, विचार और संस्कृति एक चोटी की तीन लटे हैं जो एक दूसरे में गुँथी हुई हैं, एक दूसरे को प्रभावित करती हैं।

क्या हम भाषा में ही सोचते हैं

- **लेकिन लोग भाषा में सोचते हैं, सही है ना?**

हमेशा तो नहीं लेकिन अधिकांशतः यह बात सही है। आप आसानी से एक ऐसी मानसिक छवि गढ़ सकते हैं और उसकी अनुभूति कर सकते हैं, जिसे कि शब्दों में वर्णित करना मुश्किल हो। आप ध्वनि के सुरीलेपन, नाशपाती के आकार और किसी मसाले की गंध के बारे में सोच सकते हैं और इनमें से किसी भी विचार के लिए भाषा आवश्यक नहीं है।

- **तो यह सम्भव है कि मैं किसी के बारे में सोच सकता हूँ, तब भी जब उसके लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं?**

हाँ, उदाहरण के लिए रंगों को लीजिए। यहाँ असंख्य भिन्न–भिन्न रंग हैं। लेकिन सभी के लिए अलग–अलग नाम नहीं हैं। यदि आपके पास एक लाल रंग से भरा डिब्बा है और आप उसमें धीरे–धीरे एक–एक बूँद नीला रंग मिलाते हैं तो यह बहुत धीरे–धीरे लाल बैंगनी, फिर बैंगनी, फिर नीले बैंगनी में परिवर्तित होगा। प्रत्येक बूँद रंग को बहुत थोड़ा–थोड़ा परिवर्तित करेगी लेकिन कोई एक ऐसा क्षण नहीं आएगा जब यह एकदम लाल न रहकर बैंगनी बन जाएगा। रंगों का वर्णक्रम एक निरन्तरता लिए होता है हमारी भाषा इस तरह से निरन्तर नहीं है हमारी भाषा हमें इस तरह बनाती है कि हमें रंगों के वर्णक्रम को लाल, बैंगनी, नीला इसी तरह से अन्य में वर्गीकृत करना पड़ता है।

न्यू गुआना के दानी आदिवासी लोगों की भाषा में रंगों के लिए केवल दो परिभाषाएँ हैं– एक गाढ़े रंग (नीला, हरा), दूसरे हल्के रंग (पीला, लाल)। उनकी भाषा रंगों के वर्णक्रम को अलग तरह से वर्गीकृत करती हैं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि वे लाल और पीले रंग में फ़र्क़ नहीं कर पाते हैं।

रूसी भाषा में, हल्के नीले और गहरे नीले रंग के लिए दो अलग–अलग शब्द हैं। क्या इसका मतलब यह है कि रूसीभाषी इन्हें दो अलग रंगों के रूप में मानते व सोचते हैं, जबकि अंग्रेजीभाषी उन्हें एक ही रंग मानते व सोचते हैं क्योंकि उनके पास इनके लिए एक ही शब्द (नीला) है?

क्या शब्द सोच सीमित करते हैं

क्या आप सोचते हैं कि लाल और गुलाबी अलग–अलग रंग हैं? यदि हाँ तो आप अपनी भाषा से प्रभावित हो सकते हैं, आखिर–कार गुलाबी है तो लाल रंग ही। ठीक उसी तरह जैसे पीले, हरे, नीले रंगों के कई प्रकार होते हैं जो सब एक तरह का हल्का हरे ही माने जाते हैं। कई बार शब्द न होने पर और फ़र्क़ को इंगित करने की ज़रूरत पूरा करने के लिए आप नये शब्द बना लेते हैं, जैसे आसमानी, गहरा नीला या अंग्रेज़ी में ले तो Skyblue, Navyblue अथवा Royalblue इसी तरह पीले, हरे के बारे में भी है याने रंगों में फ़र्क़ कर पाने की वजह से ही शब्दों की ज़रूरत हुई जो उस फ़र्क़ को दूसरों के साथ बाँटने की क्षमता हमें दे सकें। क्या आप ऐसे और उदाहरण रंगों के बारे में व अन्य विचारों के संदर्भ में सोच सकते हैं?

हमारी भाषा हमें बाध्य नहीं करती है कि हम वही देखें जिनके लिए हमारे पास शब्द हैं लेकिन हम चीज़ों को समूह में किस तरह रखते हैं, इसे भाषा प्रभावित कर सकती है बच्चा जब भाषा सीख रहा होता है तो उसे यह पता लगाना होता है कि कौन सी चीज़ें उस शब्द विशेष के अन्तर्गत आएँगी। एक बच्चा जिसके घर में जर्मन शेफर्ड (Shephered) (भेड़िया जैसा दिखनेवाली नस्ल का कुत्ता) कुत्ता है उसे वह 'कुत्ता' कहता है। एक दिन वह बच्चा भेड़िया देखे तो हो सकता है कि उसे भी वह कुत्ता ही कहे लेकिन वही बच्चा पड़ोसी के पामेरियन नस्ल के कुत्ते (सफ़ेद बालों वाला कुत्ता) को कुत्ता ना कहे क्योंकि भेड़िये जैसे जानवर को उसने कुत्ता के समूह में रखा है। बच्चे को यह सीखना पड़ेगा कि 'कुत्ता' शब्द के अन्तर्गत किस तरह के/का प्राणी आएगा।

हम यह सीखते हैं कि जो चीज़ें एक जैसी हैं और एक समूह की हैं उन्हें कोई एक नाम दे देते हैं। लेकिन कितनी एक जैसी चीज़ें, एक ही नाम/समूह के अन्तर्गत आएँगी, यह अलग–अलग भाषाओं में अलग–अलग हो सकती है। दूसरे शब्दों में कहें तो इस बारे में हम क्या सोच सकते हैं। हम क्या सोचते हैं पर भाषा का प्रभाव इतना नहीं होता, जितना इस पर होता है कि वास्तविकता को हम कैसे समूहों में बाँटते हैं और उन समूहों को कोई नाम देते हैं। और इसमें भी हमारी भाषा और हमारी सोच, दोनों ही हमारी संस्कृति से प्रभावित होते हैं।

ऐस्किमो और बर्फ़ के लिए शब्द

- **लेकिन बर्फ़ के लिए एस्किमो के उन विभिन्न शब्दों का क्या?**

आपने यह सुना होगा कि एस्किमो लोगों (ध्रुवों पर रहनेवाले) के पास बर्फ़ के लिए सैकड़ों शब्द हैं। लोग अक्सर इसका प्रयोग यह दिखाने के लिए करते हैं कि जिस तरीक़े से हम दुनिया को देखते हैं वह हमसे जुड़ा है कि हम इसके बारे में कैसे बात करते हैं। लेकिन यह सच नहीं है कि एस्किमो के पास बर्फ़ के लिए अनेक शब्द हैं, और यह भी नहीं कि एस्किमो की एक भाषा है। जिन्हें हम एस्किमो लोग कहते हैं, वे अनेक अलग–अलग भाषाएँ बोलते हैं। और यदि हम उनकी कोई एक भाषा या बोली लें, तो हमें उसमें बर्फ़ के लिए अंग्रेज़ी से बहुत ज़्यादा शब्द नहीं मिलते हैं। यहाँ सवाल यह भी है कि हम एक शब्द किसे मान रहे हैं? अंग्रेज़ी में हम यौगिक रूप (Compound Form) प्राप्त करने के लिए शब्दों को आपस में जोड़ सकते हैं जैसे Snowball (बर्फ़ का गोला), Snoflake (बर्फ़ का एक कण), Skyblue, semicircle आदि। एस्किमो भाषाओं में इस तरह से शब्द गठन की प्रक्रिया अंग्रेज़ी से ज़्यादा है। इसलिए एक मूल शब्द (जैसे snow) सैकड़ों अन्य सम्बन्धित शब्दों का आधार हो सकता है, इसलिए यह शायद उचित नहीं है कि प्रत्येक शब्द को अलग शब्द माना जाए। यदि आप केवल मूल शब्द गिनें तब आप पाएँगे कि एस्किमो भाषाएँ अंग्रेज़ी से इतनी भिन्न नहीं हैं। आख़िरकार अंग्रेज़ी में Snowfall (हिमपात) के लिए अनेक शब्द हैं– Sleet (बर्फ़ीली बारिश), Slush (गलती हुई बर्फ़), Frost (पाला), Blizzard (बर्फ़ानी तूफ़ान), Avalanche (हिमस्खलन), Drift Powder (बर्फ़ का चूर्ण), Flurry (बर्फ़ का झोंका)।

- **तो नई भाषा सीखने से मेरे सोचने का तरीक़ा नहीं बदलेगा।**

हाँ, नहीं बदलेगा लेकिन यदि नई भाषा आपकी भाषा से बहुत ज़्यादा भिन्न है तो यह आपको अन्य संस्कृति और अन्य जीवन शैली की अन्तःदृष्टि दे सकता है।

कुछ प्रश्न :

- अपने जीवन से कुछ ऐसे उदाहरण दें जो इस बात को पुख़्ता करें कि हमारे मत हमारी मातृभाषा से जुड़े होते हैं।
- भाषा होने से इन्सान कौन–कौन सी विलक्षण क्षमताएँ हासिल कर पाता है?
- नीचे दी गई तालिका के अनुसार भाषा व विचार भाग एक व दो का विश्लेषण कीजिए।

क्र.सं.	भाषा व विचार में संबंध पक्ष में तर्क	भाषा व विचार में संबंध विपक्ष में तर्क	अपनी टिप्पणी
1.			
2.			
3.			
4.			

- अपनी दिनचर्या के बारे में सोचकर बताइए कि यदि आपके पास भाषा नहीं हो तो दिनभर के कामों में क्या–क्या बदलाव आएँगे?
- अंग्रेज़ी व हिन्दी में क्रिया के रूप में ज्ञान के स्रोत का क्या कोई असर पड़ता है?
- (अ) बहुवचन बनाने में अंग्रेज़ी में rice, wheat कुछ ऐसे शब्द हैं, जिनके लिए नियम फ़र्क़ प्रतीत होता है क्या हिन्दी में भी ऐसे शब्द है, उन्हें ढूँढ़ें।

  (ब) Semicircle, Skyblue जैसे और भी शब्दों की सूची बनाएँ। क्या यह हिन्दी में भी होते हैं? हिन्दी में भी इन शब्दों की एक सूची बनाएँ।
- (अ) German Shephered नाम हमें उस कुत्ते के बारे में क्या बताता है?

  (ब) कोई और उदाहरण दें जिसमें बच्चों के सीखने में श्रेणियों की समझ के बदलने की झलक मिले।
- नई भाषा सीखने से क्या–क्या असर हो सकते हैं? कुछ यहाँ दिए गए हैं और सोचें व चर्चा करके लिखें।

अध्याय – 3

भाषा व्यक्ति के लिए क्यों आवश्यक है?

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
    - भाषा व संज्ञान
        - भाषा की संज्ञान में भूमिका
        - भाषा में संज्ञान (समझ) की भूमिका
    - सीखना क्या जैविक मंत्र है?
    - भाषा यानी अंतर्निहित क्षमता
    - परिवेश व भाषा
        - बातचीत, समझ व भाषा का विकास
        - भाषा सीखने में मदद कैसे हो?
        - शुरुआती भाषा का विकास व अवधारणाएँ
    - भाषा सीखने के चरण
        - ध्वनि से सार्थक ध्वनि व अर्थ
        - वाक्य, लम्बे वाक्य, ज़्यादा उलझे विचारों से सामना
        - चित्र भाषा सीखने के चरण

परिचय :

भाषा संवाद व संप्रेषण का माध्यम है, चाहे वह बोलचाल के रूप में हो, चाहे लेखन के रूप में या फिर संकेतों में। यह प्रतीकों के निर्धारित ढाँचे पर आधारित है हमारे लिए संप्रेषण का एकमात्र तरीक़ा भाषा ही नहीं है इसके अलावा संप्रेषण के बहुत से ग़ैर–शाब्दिक तरीके भी होते हैं। अलग–अलग संस्कृति में भावनाओं व संदेशों के संप्रेषण हेतु अलग–अलग ग़ैर–शाब्दिक तरीके होते हैं। इंसान और जानवरों के ग़ैर–शाब्दिक संप्रेषण में कुछ–कुछ समानता होती है परन्तु भाषा हमारे जीवन में अति ज़रूरी है, हमें इसकी ज़रूरत दूसरों से बात करने में, उन्हें सुनने, पढ़ने व लिखने में होती है।

भाषा हमें बीती हुई घटनाओं का विस्तार से वर्णन करने व भविष्य की योजना बनाने के लिए तैयार करती है। भाषा के बिना हमारी सोच आज और अभी पर ही केन्द्रित होती। भाषा ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सूचना व समझ को हस्तांतरित करना संभव बनाती है और एक समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर बनाती है। जो भाषा हम उपयोग करते हैं वह न केवल हमारी संस्कृति को प्रभावित करती है बल्कि हम दुनिया के बारे में कैसे सोचते हैं ? इसे भी प्रभावित करती है।

उद्देश्य :

- भाषा संवाद व संप्रेषण का माध्यम है की समझ बना पाना।
- भाषा संप्रेषण के विभिन्न तरीकों के प्रति समझ को विकसित करना।
- सोच भाषा पर निर्भर है या भाषा सोच पर निर्भर है? इस प्रश्न पर अपना समझ विकसित करना।
- भाषा में संज्ञान (समझ) की भूमिका को समझ पाना।
- सीखना क्या जैविक मंत्र है? की समझ विकसित करना।
- भाषा का विकास किन–किन क्षमता के कारण होता है? पर समझ बना पाना व भाषा सीखने में मदद कैसे हो की समझ को विकसित करना।
- भाषा सीखने के विभिन्न चरणों के प्रति अपना स्वस्थ्य दृष्टिकोण विकसित करना।

भाषा व संज्ञान

हम हमेशा शब्दों के रूप में नहीं सोचते, किन्तु शब्दों के बिना हमारी सोच बहुत ही सीमित हो जाएगी। भाषा का सोच व विचार के साथ संबंध मनोवैज्ञानिकों के लिए बहुत रुचि का विषय रहा है। कई मनोवैज्ञानिकों ने कहा है कि हम भाषा के बिना सोच ही नहीं सकते। इस प्रस्ताव पर काफ़ी गर्मा–गर्मी हुई है। एक दृष्टि से देखें तो सवाल यह है कि सोच भाषा पर निर्भर व आधारित है या भाषा सोच पर?

भाषा की संज्ञान में भूमिका

महत्त्वपूर्ण संज्ञानात्मक गतिविधियों में क्या भाषा कोई भूमिका निभाती है? अगर हाँ तो वह क्या है? पहली बात तो यह कि हमारी याद्दाश्त सिर्फ़ ध्वनियों (आवाज़ों) और छवियों में ही संग्रहित नहीं होती वरन् शब्दों के रूप में भी संग्रहित होती है। भाषा हमें सोचने में, निष्कर्ष निकालने में, मुश्किल निर्णय लेने और समस्याएँ हल करने में मदद करती है भाषा, विचारों को व्यक्त करने के साथ–साथ उन्हें व्यवस्थित, क्रमबद्ध व सूत्रों में पिरोने के उपकरण के रूप में मानी जा सकती है

इससे एक सवाल उठता है इस सवाल के बारे में हमने पिछले अध्याय में बात की है। सवाल यह है कि क्या जिन लोगों के पास ऐसी भाषाएँ हैं, जिसमें किसी संदर्भ के लिए ज़्यादा शब्द हैं वे ज़्यादा बारीकी से महसूस कर सकते हैं, ज़्यादा गहराई से उस संदर्भ के बारे में सोच सकते हैं।

यह सोचकर देखें कि जो लोग रेगिस्तान में रहते हैं, उनके दिमाग़ी पुस्तकालय में तो ऊँट के बारे में बहुत समृद्ध अनुभव होंगे। इसी प्रकार बर्फ़ के बारे में आपकी शब्दावली सीमित होगी अगर आप अधिक बरसातवाली (tropical), पॉम के पेड़ों और तोतोंवाली दुनिया में रहते हैं। इसी तरह जिस प्रदेश में चावल अधिक उगाया जाता है व खाया जाता है व यहाँ लोगों की सामान्यतः अलग–अलग तरह के चावल व उनसे बनने वाले विभिन्न व्यंजनों की समृद्ध शब्दावली होगी। इस सबके बावजूद यह बात विवादास्पद है और यह ज़ोर देकर कहना संभव नहीं है कि हमारी शब्दावली की हमारे विचार व मानसिक ढाँचे को बनाने में कोई अहम भूमिका है।

ऐपियर व वोर्फ के सिद्धांत के विपरीत इलेनोर रोश द्वारा किए गए एक अध्ययन ने दिखाया है कि किन्हीं लोगों के पास अवधारणाओं के लिए शब्द न होना उनकी चीज़ को महसूस कर पाने व उसके बारे में सोच पाने की क्षमता को नहीं रोकता है। रोश दानी समूह के लोग जो कि न्यू गिनी में रहते हैं के साथ, उनकी रंगों की पहचानने की क्षमता का अध्ययन किया। दानी लोगों के रंगों को दिखाने के लिए दो ही शब्द हैं – एक जिसका अर्थ लगभग सफेद के समकक्ष है और दूसरा जो लगभग काले के समकक्ष है। अगर भाषाई सापेक्षता की धारणा सही हो तो दानी लोग हरे, नीले, लाल, पीले और जामुनी रंग के बीच अंतर नहीं कर सकेंगे। किन्तु रोश ने पाया कि दानी समूह के लोग रंगों को ठीक वैसे ही देखते हैं जैसे हम। रंगों की अनुभूति व उन्हें देख पाने की क्षमता हमारी जैविक काबिलीयतों में शामिल है और उसके लिए हमारे रेटिना में उपस्थित रिसेप्टर ज़िम्मेदार हैं।

भाषा में संज्ञान (समझ) की भूमिका

शोधकर्ता यह भी देखने का प्रयास कर रहे हैं कि भाषा के लिए क्या संज्ञान एक महत्त्वपूर्ण नींव है अगर सामान्य तौर पर भाषा संज्ञान को प्रतिबिंबित करती है, तब हम यह अपेक्षा करेंगे कि सामान्य समझ, भाषाई क्षमता और बुद्धि क्षमता में क़रीबी रिश्ता हो। ख़ास तौर पर हम यह अपेक्षा करेंगे कि एक क्षेत्र (भाषा) में आनेवाली समस्याओं के तुल्य समस्याएँ दूसरे क्षेत्र (संज्ञान) में भी आएँगी। जैसे – यह कल्पना करेंगे कि सामान्य बौद्धिक पिछड़ना, भाषाई क्षमता में भी पिछड़ेपन को इंगित करेगा। यह कई बार होता है पर हर बार नहीं। क्या आपने कभी ऐसे किसी व्यक्ति को देखा है जो बौद्धिक रूप से पिछड़ा हुआ है या मानसिक रूप से कमज़ोर है। इसलिए उसमें भाषाई क्षमताएँ भी कमज़ोर हैं, वह अच्छे से बोल नहीं पाता, दूसरों की बातें सुनकर प्रतिक्रिया नहीं कर सकता।

शोधकर्ताओं ने पाया है कि बौद्धिक पिछड़ने के साथ हमेशा भाषाई क्षमताओं में कमी नहीं पाई जाती। विलियम्स सिंड्रोम– यह एक तरह की अनुवांशिक बीमारी है। यह बच्चों की शारीरिक वृद्धि, हाव–भाव, शारीरिक दिखावट, संज्ञानात्मक क्षमताओं (जैसे– वर्गीकरण करना, विश्लेषण करना, तर्क करना) पर प्रभाव ड़ालती है। इन बच्चों को नई चीज़ें सीखने में भी परेशानी होती है और ये बच्चे बौद्धिक रूप से अन्य हम उम्र सामान्य बच्चों से पिछड़े लगते हैं। किन्तु इनकी भाषाई क्षमता औसत स्तर के समकक्ष होती है। भाषा को संप्रेषण के लिए उपयोग करने में भी उनकी क्षमता कम नहीं होती। विलियम्स सिंड्रोम की प्रकृति यह इंगित करती है कि इन्सान के दिमाग़ में भाषाई क्षमताओंवाली जैविक रूप से ही तैयार सोचने की इकाइयाँ होती हैं। यानी दिमाग़ को सभी कुछ करनेवाली संज्ञान क्षमता वाली समग्र इकाई, जिसमें भाषा भी शामिल है के रूप में नहीं देखा जा सकता।

बहरे बच्चों पर किए गए अध्ययनों से भी इस बात का प्रमाण मिलता है कि सम्पूर्ण संज्ञान क्षमता, भाषाई क्षमता से फ़र्क़ है सोचने व समस्या हल करने के बहुत से काम बहरे बच्चे, अपनी उम्र के बाक़ी बच्चों के समान ही कर पाते हैं। इस अध्ययन में शामिल बहुत से बच्चों को लिखित भाषा अथवा संकेत भाषा का भी ज्ञान नहीं था (Furth 1977)। यानी किसी भी तरह का भाषाई अनुभव व क्षमता उन्हें मदद नहीं कर रही थी। संक्षेप में कहें तो इसके बावजूद विचारों का ढाँचा हमारी भाषाई क्षमता को प्रभावित करता है और भाषाई क्षमता संभवतः विचारों के ढाँचे को, ऐसे भी प्रमाण उपलब्ध हैं, जो दिखाते हैं कि ये दोनों (संज्ञान व भाषा) एक ही ढाँचे के हिस्से नहीं है। इनका विकास मानव की जीव वैज्ञानिक विकास प्रक्रिया में दिमाग़ के अलग–अलग हिस्से के माड्यूल (Modules) के रूप में हुआ है।

हमने अभी पढ़ा कि दिमाग़ में अलग–अलग मॉड्यूल/हिस्से होते हैं और भाषा व संज्ञान (समझ) एक ही मॉड्यूल में नहीं होते है। दिमाग़ में भाषा के लिए एक अलग मॉड्यूल होता है पता कीजिए इस बारे में चौम्स्की क्या कहते हैं ?

सीखना क्या जैविक मंत्र है

सन् 1799 में 11 वर्ष का एक बच्चा फ्रांस के जंगलों में मिला। चूँकि वह इंसानों के पास नहीं आता था इसलिए उसे पकड़ना पड़ा था। इसको एवेरोन के जंगली लड़के के नाम से जाना जाता है ऐसा माना जाता है कि वह 6 साल से जंगल में अकेला रह रहा था। जब उसे पकड़ा गया तो उसने बातचीत का कोई प्रयास नहीं किया। कई वर्षों के बाद भी उसने ठीक से अपनी बात समझाना व दूसरों की बात समझना नहीं सीखा। यह वाकया ''बच्चे भाषा कैसे सीखते हैं'' के बारे में कई सवाल उठाता है क्या भाषा के नियम बना पाना और उनसे असंख्य शब्द बना पाना जैविक कारकों और जैविक विकास के कारण है ? या फिर भाषा परिवेश से ही सीखी जाती है? या फिर उसके जैविक कारण भी है, पर वह परिवेश से भी प्रभावित होती है? इन प्रश्नों के उत्तर जटिल हैं और अभी भी शोध का केन्द्र है।

भाषाओं व उनके विकास पर जीवशास्त्रीय प्रभाव, हालाँकि अलग–अलग लोग गणना के अलग–अलग अनुमान लगाते हैं, फिर भी सामान्यतः वैज्ञानिक मानते हैं कि इन्सानों ने लगभग 100,000 साल पहले भाषा हासिल की। इस प्रकार जैविक विकास के संदर्भ में भाषा एक काफ़ी नई इन्सानी क्षमता है, लेकिन कई विशेषज्ञ मानते हैं कि जैविक विकास का ढाँचा जिसने इंसानों को भाषाई क्षमतावाला जीव बनाया, पूरी भाषाई क्षमता के आने के बहुत पहले ही इंसान के पास आ चुका था। हमारे पूर्वजों के दिमाग़, तंत्रिका तंत्र और वाक् तंत्र (बोलने का ढाँचा) लाखों साल में बदले। एक बार जीव वैज्ञानिक क्षमता आने के बाद इन्सान आवाज़ें निकालने व चिल्लाने से बढ़कर धीरे–धीरे अमूर्त भाषा तक पहुँचे। इस भाषाई क्षमता ने इन्सानों को बाक़ी जानवरों के मुक़ाबले काफ़ी बेहतर बना दिया और संघर्ष में उनके बचने की संभावना को भी बहुत बढ़ा दिया (पिंकर 1994)।

भाषा यानी अंतर्निहित क्षमता?

भाषा वैज्ञानिक नोम चौम्स्की (1975) उनमें से एक हैं जो कहते हैं कि इन्सान भाषा सीखने के लिए जीव वैज्ञानिक रूप से तैयार होकर पैदा होते हैं। यह उनमें अंतर्निहित है कि वे एक विशेष समय पर और विशेष तरह से भाषा सीखेंगे। चौम्स्की व कई और भाषा विशेषज्ञों के अनुसार भाषा के जीव वैज्ञानिक होने का पक्का सबूत यह है कि पूरी दुनिया के अलग–अलग भाषा बोलनेवाले व अलग–अलग मात्रा में अलग–अलग प्रकार के परिवेश से भाषाई अनुभव प्राप्त करनेवाले बच्चे भाषा सीखने के चरण विकास क्रम में लगभग साथ–साथ व उसी क्रम में हासिल करते हैं। जैसे कि कई ऐसी भी संस्कृतियाँ हैं, जिनमें जब तक कि शिशु एक साल के न हो जाएँ, वयस्क उनसे कोई बात नहीं करते, फिर भी शिशु भाषा सीख लेते हैं। इसके अलावा जितनी छोटी उम्र में बच्चे भाषा सीख लेते हैं उसको समझने के लिए जीव वैज्ञानिक कारकों के अलावा और कोई उपयुक्त नहीं लगता (लोक 1999, मारातोस 1999)। चौम्स्की कहते हैं कि बच्चे सुनकर व सुनी बात की नक़ल करके, सारे नियम व भाषा का ढाँचा नहीं अख़्तियार कर सकते। इसके स्थान पर यही मानना होगा कि प्रकृति ने हर बच्चे के दिमाग़ में सार्वभौमिक व्याकरण का स्वरूप पहले से ही डाल रखा है जो उन्हें किसी भी भाषा के बुनियादी नियमों को समझने और जो सुन रहे हैं उन पर लागू करने की क्षमता देता है वे भाषा सीख जाते हैं, बग़ैर उसकी संरचना के तर्कों को जाने।

जो लोग मानते हैं कि भाषा का एक जीव वैज्ञानिक आधार है, उनकी बात के समर्थन में बहुत से प्रमाण हैं। तंत्रिका–तंत्र विज्ञान में हुए शोध ने यह दिखाया है कि दिमाग़ में विशेष हिस्से होते हैं, जिनकी प्रकृति उन्हें भाषा के लिए उपयोग करने योग्य बनाती है, अभी जो प्रमाण इकट्ठे हो रहे हैं वे भी कुछ हद तक दिखाते हैं कि भाषा प्रसंस्करण (Processing) ज़्यादातर बाएँ अर्द्धगोलार्ध में ही होता है (डिक़ व अन्य, 2004, ग्रॉडज़िस्की, 2001)। उन्होंने जीवित व्यक्ति के काम कर रहे दिमाग़ की छवि देखकर ऐसा कहा। (यह प्रक्रिया जिसे (Imaging Technique कहते हैं Photography या तस्वीर बनाने से फ़र्क होते हैं। यहाँ छवि बनाना फ़ोटो लेने अन्य होलोग्राम के) शोधकर्ताओं ने पता किया है कि लगभग 9 महीने के शिशु के दिमाग़ का वह हिस्सा जो स्मृति का भंडार व उसकी विषय सूची है, पूरी तरह से कार्य करने लगता है (Bloom नेल्सन और लेजरसन 2001)। इस दौरान शिशु शब्दों को अर्थ देने में सक्षम बनता प्रतीत होता है इससे भाषा, संज्ञान व दिमाग़ के विकास में संबंध दिखता है।

परिवेश व भाषा

व्यवहारवादी भाषा को जीव वैज्ञानिक रूप से निर्धारित नहीं मानते। वे कहते हैं कि भाषा मुख्यतः परिवेश के प्रभाव से निर्धारित होती है। उदाहरण के तौर पर स्किनर (1957) ने कहा कि भाषा अन्य व्यवहारों जैसे चलना, भागना आदि जैसा ही एक और व्यवहार है। उन्होंने कहा कि सभी व्यवहार (भाषा भी) अभ्यास पुनरावर्ती व पुरस्कार (Reinforcement) से सीखे जाते हैं। अनर्बर बंदुश (1977) ने बाद में इस बात पर भी ज़ोर दिया कि भाषा नक़ल द्वारा सीखी जाती है।

रोजर ब्राऊन (1973) ने छोटे बच्चों व उनके माता–पिता को अंतःक्रिया करते समय कई–कई घंटों तक देखा। वह इस बात का प्रमाण चाहते थे कि बच्चे माता–पिता के पुष्टीकरण व शाबाशी (मुस्कराहट, प्यार से भींचना, पीठ थपथपना, ठीक करने के लिए फीड बैक) से भाषा के नियम सीखते हैं। उन्हें पता चला कि हालाँकि माता–पिता उनके सही वाक्य बोलने पर मुस्कराते और शाबाशी देते थे लेकिन कई बार वह व्याकरणीय रूप से ग़लत बात पर भी शाबाशी दे देते थे। ब्राउन का निष्कर्ष था कि इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि पुष्टीकरण, सुदृढ़ीकरण (Reinforcement) भाषा के नियमों की समझ के विकास में मदद करता है। बच्चे बहुत से नये वाक्य बोलते हैं, क्योंकि ये वाक्य बच्चों ने कभी सुने नहीं होते। एक बच्चा यह वाक्य सुनेगा कि 'प्लेट ज़मीन पर गिर गई', परन्तु तत्काल ही यह भी कह पाएगा कि 'मेरा गिलास टेबल पर गिर गया।' नकल व पुष्टीकरण इस क्षमता को समझा ही नहीं सकते।

हालाँकि नक़ल (Imitation) व पुष्टीकरण बच्चों द्वारा भाषा के नियम पकड़ने के लिए जिम्मेदार नहीं हैं, फिर भी यह आवश्यक है कि बच्चे भाषा की क्षमता रखने वाले लोगों के बीच रहें (स्नो 1999)। ऐवरोन के जंगल से आया लड़का बचपन की शुरुआत में ऐसे लोगों के साथ नहीं रहा था, जो भाषा जानते हों, इससे उसके भाषाई विकास को नुक़सान पहुँचा था।

बातचीत, समझ व भाषा का विकास

भाषा सीखने के ढंग पर अध्ययन का एक और विषय, माँ का शिशु के सामने बोलना व भाषाई क्षमता के विकास के सम्बन्ध का है, (Huttertocher अन्य, 1991)। वे माएँ जो शिशुओं के साथ भाषा का उपयोग ज़्यादा करती थीं, उनके बच्चों के शब्दकोश अन्य बच्चों से काफ़ी अधिक थे। दूसरे जन्मदिवस तक आते–आते शब्द क्षमता के ये अंतर काफ़ी स्पष्ट दिखते थे।

भाषा सीखने में मदद कैसे हो

शिशुओं के साथ बात करने के अच्छे तरीक़े क्या हो सकते हैं? इनमें से कुछ हैं (बैसेन 1992) :

- एक सक्रिय बातचीत करनेवाले साथी बनें। वयस्क, शिशु से बातचीत करने में पहल करें। अगर बच्चा पूरे दिन किसी बालवाड़ी में रहता है, तो सुनिश्चित कर लें कि उसे पर्याप्त भाषाई उद्दीपन (भाषा के साथ सम्पर्क) मिलता है।
- यह मानकर बात करें कि आप क्या कह रहे हैं शिशु समझ रहा है कि वयस्क अगर ऐसा मानेंगे, तो आपका यह मानना सच होने लगेगा और बच्चे समझने लगेंगे। इसमें 4–5 साल लग सकते हैं। लेकिन धीरे–धीरे जो भाषाई मॉडल प्रस्तुत किए जा रहे हैं उनके स्तर तक बच्चे पहुँच जाते हैं।
- जिस प्रकार की भाषाई शैली में आप व बच्चा सहज हैं, वही इस्तेमाल करें। यह चिन्ता न करें कि आपकी बातचीत बाकी वयस्कों को कैसी लग रही होगी। जो भावना आपकी बातचीत से महसूस होती है वह शिशु के लिए ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है, बनिस्बत उससे, जो आप कह रहे हैं। बच्ची के पहले साल में जिस भी तरह की बातचीत में आप सहज महसूस करें, वह करें।

भाषा सीखने पर परिवेश के प्रभाव के संदर्भ में शोध इसके बुनियादी कारणों की समझ को उलझा देते हैं। भाषा सीखने की वास्तविक दुनिया में न तो बच्चे सिर्फ़ जीव वैज्ञानिक कारणों से स्वतः भाषा सीखने के लिए पूरी तरह तैयार दिखते हैं और न ही वे सिर्फ़ समाज व परिवेश से ही सीखते हैं (रेट्नर 1993)। जैसा कि मनोविज्ञान के हर पहलू के साथ होता है, हमें यह देखना होगा कि जीव विज्ञान व परिवेश अंतःक्रिया कैसे करते हैं।

शुरुआती भाषा का विकास व अवधारणाएँ

भाषाई विकास के बारे में एक रोचक बात यह है कि बच्चों की अन्य वयस्कों व माता–पिता के साथ होनेवाली भाषाई अंतःक्रिया कुछ नियमों का पालन करती है (Machhinney, 1999)। यद्यपि बच्चे शब्दावली व अवधारणाएँ एक छोटी उम्र से ही सीखते रहते हैं। वे साथ–साथ यह भी सीखते हैं कि भाषा कैसे गुँथती है। भाषा सीखने की इस पहल पर एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन में जीन बेर्को (1958) ने स्कूल पूर्व व कक्षा एक के बच्चों को कुछ जैसे कार्ड दिखाए। बच्चों को इनको देखना था, जबकि एक वयस्क उस पर लिखे शब्दों को ज़ोर से पढ़ता था। बच्चों को वह शब्द ढूँढ़ना था जो कि खाली स्थान पर भरा जा सकता है इसका सही जवाब वुग्स (Wugs) था। वुग्स ढूँढ़ पाना आपको आसान लग सकता है, पर उसे ढूँढ़ने के लिए बहुवचन के अंत में आनेवाली अंतिम ध्वनि की सही समझ की ज़रूरत है यद्यपि बच्चों के उत्तर हमेशा सही नहीं होते थे फिर भी वे बेतरतीब यानी

बग़ैर किसी समझ व नियम से उभरे उत्तरों के क्रम से बहुत बेहतर थे। इस अध्ययन की महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ये शब्द काल्पनिक थे और इस अध्ययन के लिए ही गढ़े गए थे। इसलिए जवाब पुराने अनुभवों के आधार पर नहीं दे सकते थे और वे नियमों (पैटर्न) की मदद लेने को बाध्य थे।

क्या भाषाई क्षमता की जगह व अन्य अवधारणाओं की जगह पूर्व निर्धारित व अलग है

साठ के दशक में, एरिक लेनन बर्ग 1917) ने कहा कि 18 माह में वयस्कता (प्यूबर्टी) के बीच का समय अति संवेदनशील (critical) अंतराल है, इसी दौरान ही बच्चे को अपनी पहली भाषा और उसके नियम को हासिल करना है इस बात की पुष्टि के लिए लेनन बर्ग ने कुछ बच्चों व वयस्कों जिनके मस्तिष्क के बाएँ अर्द्ध गोलार्द्ध पूरे ठीक नहीं थे, कुछ बहरे बच्चे, जिनके दिमाग़ का विकास नहीं हुआ था और कुछ अन्य वयस्क लोग जो सामान्य तरह से भाषा नहीं सीख पाए थे को लिया। उसने इन सबका अध्ययन किया (Toger - Lusberg 1994, 1999)। लेनन बर्ग ने पाया कि अध्ययन में शामिल बच्चे तो अपनी भाषाई क्षमता पुनः प्राप्त कर पाए, किन्तु वयस्क नहीं कर पाए। लेनन बर्ग का मानना है कि फ़र्क़ यह है कि बच्चों के दिमाग़ में लचीलापन (प्लास्टिसिटी) था और वे भाषाई क्षमताओं को उन हिस्सों को दे पाए जिनमें कोई भी चोट नहीं थी। चूँकि वयस्कों के दिमाग़ ढल चुके थे और एक प्रकार से ज़्यादा सख़्त हो गए थे, इसलिए वयस्कों में यह क्षमता नहीं बची थी कि वे भाषाई क्षमता पुनः हासिल कर लें।

हाल ही में मिले कुछ और बच्चे जो एवेरान की तरह जंगल में रहते थे, इस बात की पुष्टि करते हैं। उनकी भाषाई क्षमता भी अधूरी ही रही यानी वह भी भाषा हासिल करने के लिए महत्त्वपूर्ण विशेष समय को पार कर चुके थे। 1970 में कैलिफोर्निया के एक सामाजिक कार्यकर्ता को 13 वर्षीय एक लड़की जिनी मिली। इसे दुनिया से अलग ताले में रखा गया था और यह पूरा बचपन भर खुलकर हिलने–डुलने से भी प्रतिबंधित थी व बिल्कुल अकेलेपन में रखी गई थी। जिनी, न तो बोल सकती थी और न ही सीधे खड़ी हो सकती थी। जब भी वह कोई आवाज़ निकालती उसका पिता उसे मारता। वह उससे शब्दों में बात नहीं करता था और उस पर गुर्राता और भौंकता था। जिनी ने पुनर्वास (rehabilitation) कार्यक्रमों में कई वर्ष गुजारे। इसमें चलने–फिरने व बोलने के भी कार्यक्रम थे (कर्टिसन, 1977, राइमर 1993)। वह आख़िर तक कई शब्दों को समझना सीख गई और टूटे–फूटे वाक्य भी बोलने लगी लेकिन वह बहुत कम था। सामान्य बच्चे जिस तरह के सवाल पूछते हैं, ऐसा जिनी नहीं कर पाई थी और वह व्याकरण भी नहीं समझ पाती थी। वह अलग–अलग सर्वनामों के बीच विभेद नहीं कर पाती थी और सक्रिय (active) व निष्क्रिय (passive) क्रिया भी अलग नहीं कर पाती। वयस्क होने के बाद भी वह छोटे–छोटे बेतरतीब वाक्यों में ही बोलती थी। जैसे 'पिता ने टाँग मारा' (Father hit leg)] "Bigwood", और जिनी चोट (Ginne hurt)। इस बच्ची की यह कहानी इस बात की पुष्टि करती है कि लोगों को बचपन में ही भाषा के नियम सीखने होते हैं, वरना वह भाषा में पूर्ण सक्षम होने से रह जाएँगे।

भाषा सीखने के चरण

सौभाग्य से ज़्यादातर लोग बचपन में ही अपनी–अपनी भाषा के ढाँचे की स्पष्ट समझ व एक बड़ी शब्दावली पा लेते हैं। उदाहरण के लिए अमेरिका देश में ज़्यादातर वयस्क 50,000 या इससे अधिक शब्द सीख जाते हैं। जिस प्रक्रिया से भाषा के यह पहलू विकसित होते हैं उसमें शोधकर्ताओं ने बहुत रुचि ली है कई अध्ययनों के माध्यम से वे भाषा अख़्तियार करने की प्रक्रिया के प्रमुख पड़ाव अब समझते हैं।

ध्वनि से सार्थक ध्वनि व अर्थ

अपने पहले शब्द बोलने से पहले शिशु तुतलाते (Babble) हैं। याने एक ही आवाज़ और अक्षर (Syllable) को बार–बार बोलते ही जाना। जैसे– बा, बा, बा अथवा दा, दा, दा। इसकी शुरुआत 3 से 6 माह की उम्र में होती है और प्राकृतिक विकास व शारीरिक तैयारी से होती है न कि सुदृढ़ीकरण (reinforcement) अथवा सुनने की

क्षमता से (लोक 1993)। बहरे शिशु भी काफ़ी देर तक तुतलाते (Babble) रहते हैं (लेनन बर्ग, रेबेलेस्की और निकोलस 1963)। तुतलाने (Babbling) की यह प्रक्रिया शिशुओं के स्वर तंतुओं की कसरत करवा देती है और उसे अलग–अलग आवाज़ को तौल पाने में मदद करती है।

पैट्रिशिया के शोध में बच्चे को टेप पर संग्रहित आवाज़ें, जिसमें आवाज़ों के टुकड़े, (अक्षर) (Syllable) दोहराए गए हों सुनाते हैं। जब आवाज़ (अक्षर) (Syllable) बदल जाती है, बच्चे जल्दी से सामने रखे खिलौने भालू की ओर देखना सीख जाते हैं। इस तरीक़े का उपयोग कुहल ने दिखाया है कि लगभग 6 माह तक बच्चे सार्वभौमिक भाषाविद (व्याकरणविद्) होते हैं।

बोलना शुरू करने के बहुत पहले से ही शिशु बोली गई, बहुत सी आवाज़ों से 6 अर्थपूर्ण आवाज़ों को छाँट पाते हैं। पैट्रिशिया कुहल (1993, 2000) कहती हैं कि जन्म से लगभग 6 महीने की उम्र तक बच्चे सार्वभौमिक भाषाविद् होते हैं। वे उस हर आवाज़ को अलग पहचान सकते हैं जो इन्सानी भाषा बनाती है लेकिन 6 महीने की उम्र तक आते–आते वे अपनी स्वाभाविक (Native) भाषा की आवाज़ों पर केन्द्रित होने लग जाते हैं।

10 से 13 माह की उम्र के बीच बच्चे के पहले शब्द आते हैं। इनमें सबसे पहले महत्त्वपूर्ण शब्द हैं क़रीबी लोगों के सम्बोधन। वह सबसे पहले यही सीखती है कि उन्हें कैसे पुकारूँ (दादा, नाना, मामा, नानी, मौसी आदि को)। इसके अलावा अन्य शब्द हैं परिचित जानवरों के नाम (किटी), गाड़ियाँ, खिलौने (बॉल), खाना–पीना (दूध), शरीर के अंग, (आँख) कपड़े (टोपी), घर का सामान (घड़ी) और अभिवादन (इलम)। शिशुओं के पहले शब्द 50 साल पहले भी यही थे और आज भी शिशुओं के पहले शब्द यही हैं (क्लार्क 1983)।

वाक्य, लम्बे वाक्य, ज्यादा उलझे विचारों से सामना

बच्चे जब 18 से 24 माह की उम्र में पहुँचते हैं वे सामान्यतः दो शब्द वाले कथन बोलने लगते हैं। वे अवधारणाओं को व्यक्त करने का महत्त्व जल्दी से समझ लेते हैं और भाषा बातचीत व संप्रेषण में क्या भूमिका अदा करती है, यह भी जान जाते हैं (शेफर, 1999)।

दो शब्दोंवाले कथनों से अपनी बात को सार्थक ढंग से व्यक्त करने के लिए बच्चे हाव भाव, बोलने का ढंग, उतार–चढ़ाव व संदर्भ का बहुत उपयोग करता है और दो शब्दों की अभिव्यक्ति से ही बच्चे बहुत सारा अर्थ व्यक्त कर पाते हैं (स्लोविच 1972)।

जैसे : पहचानने के लिए : कुत्ता देखो

वस्तु की जगह दिखाने के लिए : किताब वहाँ

दोहराने के लिए : और दूध

कुछ बचा नहीं : सब गई चीज़

नकारने के लिए : भेड़िया नहीं

मिल्कियत : मेरी टॉफ़ी

गुण बताना : बड़ी कार

कर्ता–कार्य : माँ चलो

क्रिया सीधे किसी पर : तुम्हें मारूँगा (Fist you)

क्रिया सीधे नहीं : पापा को दो (Give papa)

क्रिया–उपकरण : चाकू काटो

सवाल : गेंद कहाँ?

यह उदाहरण उन बच्चों की बात के अनुवाद हैं, जिनकी पहली भाषा अंग्रेज़ी, जर्मन, रूसी, फिनीश, टर्किश और समोअन थीं। हर भाषा में बच्चे द्वारा उपयोग किए गए पहले दो शब्द वाले कथनों में तार (Telegram) में उपयोग होनेवाली भाषा जैसे गुण होते हैं, यह बहुत ही संक्षिप्त होती है और इसमें सब ग़ैर ज़रूरी शब्द छोड़ दिए जाते हैं। तार जैसे गुणोंवाली भाषा दो शब्द वाले उच्चारणों तक सीमित नहीं होती। जैसे–जैसे बच्चे दो – शब्द वाला चरण छोड़ते हैं, वे जल्दी ही तीन, चार और पाँच शब्द वाले उच्चारणों जैसे ''माँ आइसक्रीम दो,'' या माँ टोनी को आइसक्रीम दो,'' बोलने लग जाते हैं।

माता–पिता व अन्य परिवार के सदस्यों के साथ हुई अनौपचारिक अंतःक्रिया भाषा की क्षमता के शुरुआती विकास में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान अदा करती है। लेकिन, स्कूल की औपचारिक शिक्षा इसके आगे के विकास के लिए ज़रूरी है यहाँ बच्चे भाषा संरचना के ज़्यादा गहरे/विस्तृत नियम सीखते हैं, अपने शब्दकोश को बढ़ाते हैं और भाषा का उपयोग, व्यापक अवधारणाएँ सीखने में करते हैं। नीचे दी गई तालिका भाषा सीखने के पड़ाव इंगित करती है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि सभी सामान्य बच्चे ठीक इसी तरह नहीं सीखते, इनमें से कुछ थोड़ा पहले और कुछ थोड़ा बाद में उस चरण तक पहुँचते हैं।

चित्र भाषा सीखने के चरण

0 – 6 माह	स्व ध्वनियों में अन्तर, 6 महीने तक आते–आते ब ब.... जैसी ध्वनि निकालना
6 – 12 माह	ब ब ब.... ध्वनियाँ जो धीरे–धीरे बोली जा रही भाषा के शब्दों तक पहुँचे संकेत जो वस्तुओं को इंगित करें, 10 – 13 माह में पहले शब्द
12 – 18 माह	औसत शब्दावली 50 + शब्द
18 – 24 माह	औसत शब्दावली 200 शब्द, 2 शब्दों के जोड़े
2 साल	लगातार तेज़ी से बढ़ती शब्दावली बहुवचन का सही उपयोग, भूतकाल का प्रयोग
3 – 4 साल	औसत बोले गए शब्द समूह 3–4 (वाक्य रूप) हो। हाँ या न का उपयोग, ऐसे सवाल जो हाँ न में हो, क्यों, क्या, कैसे, कहाँ जैसे प्रश्न नकारात्मक व आदेशात्मक वाक्य उपयोग की उपयुक्तता की ज़्यादा समझ।
5 – 6 साल	10,000 शब्दों की औसत शब्दावली सरल वाक्यों को जोड़कर उपयोग
6 – 8 साल	लगातार बढ़ती शब्दावली भाषा नियमों का ज़्यादा सक्षम बातचीत की क्षमता का उपयोग और विकास
9 – 11 साल	शब्द परिभाषाएँ जो समानार्थी शब्द शामिल करती हैं। बातचीत के तरीके बेहतर ज़्यादा।
11 – 14 साल	ज़्यादा अमूर्त शब्द शब्दावली में शामिल – जटिल व्याकरणीय प्रकारों की समझ – शब्दों की वाक्य में भूमिका की ज़्यादा बेहतर समझ। – तुलना, व्यंग्य, अलंकार आदि की समझ
15 – 20 साल	वयस्कों के साहित्य को समझ पाना।

कुछ प्रश्न :

- यह लेख भाषा को संवाद व संप्रेषण का माध्यम मानता है? अभी तक पढ़ी सामग्री के आधार पर क्या आप इससे सहमत हैं ? अपने उत्तर को विस्तार से समझाएँ।
- अध्याय में लेखक कहता है इंसानों व जानवरों के ग़ैर–शाब्दिक संप्रेषण में कुछ–कुछ समानता है।

  (1) क्या समानताएँ हैं लिखिए। (2) कुछ अंतर भी होंगे, उन्हें भी लिखें।
- पाठ भाषा के हम पर असर के बारे में क्या–क्या कहता है?
- (अ) इस सूची के साथ–साथ हर उम्र तक अन्य क्षमताओं में इन्सान क्या–क्या हासिल कर लेता है? सोचकर लिखें।

  जैसे 2 साल तक वह माँगा गया सामान ला सकता है, चल सकता है, रास्ता बता सकता है–

  (ब) यह कर पाने के लिए उसे क्या–क्या आना चाहिए और उसमें क्या–क्या क्षमताएँ होनी चाहिए?
- व्यवहारवादी जीव वैज्ञानिक मानते हैं कि ''भाषा मुख्यतः परिवेश के प्रभाव से निर्धारित होती है?'' क्या आप इस बात से सहमत है? हाँ तो क्यों? ना तो क्यों? व्याख्या कीजिए।

अध्याय – 4

भाषा का सीखने – सिखाने से संबंध

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्‌देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
    - भाषा क्यों ज़रूरी है?
    - भाषा का सीखने – सिखाने से संबंध

परिचय :

हम सभी जानते हैं कि भाषा बच्चा अपनी निहित क्षमता के द्वारा सीख लेता है लेकिन वह भाषा उसके मातृभाषा से सम्बिन्धित होती है। अब सवाल यह उठता है कि बच्चे को भाषा किस प्रकार सिखाई जाए और भाषा सीखने–सिखाने से संबंध क्या है?

बच्चे को भाषा सिखाने से तात्पर्य है कि बच्चा अपने मन की बात को आसानी से दूसरों के सामने मौखिक, लिखित या अन्य किसी और तरीके से प्रदर्शित कर सके। बच्चा भाषा का कुछ अंश अपने आप सीखता है और कुछ अंश उसको सिखाया जाता है। ताकि बच्चा भाषा में अपने आपको कमज़ोर महसूस न करें। इस पाठ के अन्तर्गत प्रयास किया गया है कि बालक के अर्जित भाषा के ज्ञान को आधार बना कर ही भाषा विषय को सिखाया जाए।

उद्‌देश्य :

- मनुष्य के लिए भाषा की आवश्यकता क्यों है? की समझ को विकसित करना।
- भाषा सीखने–सिखाने के आधार के प्रति एक स्वस्थ्य दृष्टिकोण को विकसित करना।
- भाषा सीखने–सिखाने के संबंध के विषय में समझ बना पाना।
- बच्चों के भाषा संबंधित अर्जित समझ को समझ पाना।

भाषा क्यों ज़रूरी है?

प्राथमिक शिक्षा का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पहलू है बच्चे का भाषा सीख पाना। यह तो सभी मानते हैं। यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पहलू क्यों है? इसके जवाब में बहुत सारी बड़ी सूची बनाई जा सकती है। भाषा ही बच्चे के लिए स्रोत का काम करती है और वह अभिव्यक्ति का भी औज़ार है। इसी से होकर शिक्षा के अन्य पहलुओं तक बालक की पहुँच हो पाती है विज्ञान, गणित, सामाजिक अध्ययन आदि भाषा में ख़ासतौर पर औपचारिक व पुस्तक की भाषा पर पर्याप्त क्षमता हासिल किए बिना समझ पाना संभव ही नहीं है। भाषा के माध्यम से ही बालक विचार का ताना–बाना बुन पाता है, निर्णय के लिए तर्क गढ़ पाता है। यह भूमिका मात्र माध्यम के रूप में नहीं है। अक्सर इस पर विचार करते

समय भाषा की भूमिका को समझने में एक ख़ास तरह का एकांगीपन भी आ जाता है। जैसे यह समझा जा सकता है कि भाषा एक साधन है जो इन सब उद्देश्यों के लिए आवश्यक है ऐसा साधन जो हथौड़े की तरह या फिर दीवार पर चढ़ने के लिए उसके साथ खड़ी एक सीढ़ी की तरह। जिस प्रकार उद्देश्य छत पर चढ़ना है व सीढ़ी साधन उसी प्रकार भाषा भी एक साधन है, संप्रेषण का, विचार कर पाने का, विज्ञान, गणित आदि सीखने, निर्णय ले पाना, आदि का एक साधन है जो हमसे इतर है और सबके लिए एक सा ही है। यह बात एक तरह से ठीक है पर अधूरी है असल में जितनी ठीक है उतनी ग़लत भी है भाषा साधन होने के साथ–साथ बहुत कुछ और भी है यह हमारे व्यक्तित्व व अहम का आधार है, हमारी संस्कृति व समझ का भंडार भी है।

इंसान अपने आस–पास की दुनिया को केवल महसूस ही नहीं करता; वह उसे अपने लिए अर्थ भी देता है। मुझे आसमान में बादल दिखता है इस देखने से मैं जो महसूस करता हूँ, मेरे मस्तिष्क पर जो प्रभाव पड़ता है, मेरे काम पर जो प्रभाव पड़ता है, वह आसमान में अलग–अलग आकार व रंगवाली आकृति मात्र देखने का प्रभाव नहीं है वह मेरे और 'बादल' के बीच और उस समय की मेरी स्थिति के बीच अंतःक्रिया का प्रभाव है।

बादल को बरसात से लेकर मोर के नाचने तक बहुत–सी चीज़ों से जोड़कर देखा जा सकता है। मेरे ऊपर पड़नेवाला प्रभाव आसमान के उस ख़ास रंग, व आकृति को जोड़ पाने का प्रभाव है तो यह प्रभाव स्वाभाविक है। यदि मेरे साथ ऐसा हो कि आसमान में मैं कोई आकृति देखूँ और उसे किसी भी अन्य चीज़ से जोड़ न पाऊँ, तो मेरे ऊपर इसका कोई प्रभाव नहीं होगा। मेरा उससे कुछ छवि जोड़ना ही उस आकृति को अर्थ देना है हम दुनिया की हर वस्तु को इसी प्रकार अर्थ देते हैं। उसे मात्र 'होने से ऊपर उठाकर' सार्थक होने के स्तर तक पहुँचाते हैं। यह सार्थकता हम अवधारणाओं के माध्यम से पैदा करते हैं।

ये अवधारणाएँ हमारे दिमाग़ में कैसे रहती हैं ? और विकसित होती हैं समझना एक वृहद् विषय है किन्तु हम यह ज़रूर कह सकते हैं कि इन अवधारणाओं पर चर्चा कर पाने के लिए हम व बच्चे इंगित करने के लिए अपने मानस में बहुत सारे प्रतीक बनाते हैं और फिर उन प्रतीकों व अवधारणाओं के बीच आपसी संबंधों की धारणाएँ बनाते हैं। इतने सारे प्रतीकों के बिना हम यह विचार–चर्चा व अपनी कल्पना का संचालन कर ही नहीं सकते। भाषा इसी प्रतीक के बनाने, इन्हें बदलने व आदान–प्रदान की नींव पर खड़ी होती है और वैसे यह स्पष्ट ही है कि इन सब प्रतीकों का आदान–प्रदान भाषा के बिना हो ही नहीं सकता व इसका आवश्यक व अविभाज्य अंग है बिना अवधारणाओं को, विचारों को नाम दिए हम इनके आपसी संबंध निर्धारण में तथा अन्य कार्यों में सक्षम नहीं हो सकते हैं। शब्द एक दृष्टि से देखें तो इन अवधारणाओं के नाम ही हैं। अवधारणा संरचना के इस ढाँचे को बना पाने को ही 'समझ बना पाना' कहते हैं अर्थात् समझ बना पाना और भाषा का विकास एक–दूसरे पर आधारित है। बिना एक के दूसरे का अस्तित्व संभव नहीं, भाषा मात्र साधन नहीं है वह समझ का व व्यक्तित्व का अविभाज्य अंग है। हर व्यक्ति का ढाँचा अलग है, उसके हिस्सों में अन्तर्सम्बन्ध अलग–अलग हैं।

कुछ प्रश्न :

- बालक विचार का ताना बाना भाषा के माध्यम से बुन पाता है? उदाहरण से समझाइए।
- भाषा केवल साधन नहीं और भी बहुत कुछ है? समझाइए।

मौखिक भाषा की छोटी से छोटी सार्थक इकाई शब्द है शब्द ध्वनियों का ऐसा समूह है जिसमें ध्वनियाँ एक निश्चित क्रम से उच्चारित की जाती हैं। यदि इस प्रकार के ध्वनि समूहों को किसी निश्चित अवधारणा से ना जोड़ा जाए तो वे सार्थक शब्द नहीं बनेंगे। शब्द ऐसा क्रमिक ध्वनि समूह है जो किसी अवधारणा को इंगित करता है। इस ध्वनि समूह तथा इसके द्वारा इंगित अवधारणा में संबंध किसी तर्क पर आधारित नहीं है। यह ठीक है कि सभी हिन्दीभाषी 'पेड़' के उच्चारण को सुनकर एक ही अर्थ समझते हैं, अर्थात् उच्चारण और अर्थ का संबध सुस्थिर है तथा एक भाषा–भाषियों के समूह में सार्वभौम भी है, पर अन्ततः यह मनमाना ही है पेड़ के अर्थ को इंगित

करने के लिए बंगाली बोलनेवाले 'गाछ' कहेंगे और अंग्रेजी बोलनेवाले लोग 'ट्री' कहेंगे। दूसरी बात, अर्थ के निर्माण के लिए शब्दों का प्रयोग निश्चित नियमों के अनुसार किया जाता है अर्थात् शब्दों के उच्चारण का क्रम निर्धारण नियमानुसार होता है। जब हम कहते हैं 'बंदर पेड़ पर चढ़ा' तो सुननेवाले एक अर्थ ग्रहण करते हैं और जब कहते हैं 'पेड़ बंदर पर चढ़ा'। तो दूसरा अर्थ बनता है ये नियम भी मूलतः मनमाने ही हैं। हमने तय कर लिया कि हिन्दी जब बोलेंगे तो उसमें बंदर पेड़ पर चढ़ा का अर्थ होगा, शब्द का उच्चारण, शब्द का अर्थ तथा इन सबके संबंध सुस्थिर तथा भाषा–भाषी समूह में कमोबेश सार्वभौम हैं। भाषा, ध्वनि समूहों से अर्थों (अवधारणाओं) के अनुबंध तथा इस प्रकार बने शब्दों को व्यवहार में लाता है। समूह के अंदर नियम मानने होते हैं और सभी को उन्हीं मान्य नियमों के अन्तर्गत चलना होता है। कोई यह नहीं कह सकता कि मैं तो अलग ही नियम चलाऊँगा या जब मन आए वैसे बोलूँगा अथवा लिखूँगा। मनमानापन इस बात में है कि यह पहले से तय नहीं है वह नियमों का तंत्र है। और यह तंत्र सुव्यवस्थित तथा पूर्णतया मानवकृत है भाषा सीखने का अर्थ है इस तंत्र पर अधिकार तथा इसका अर्थ निर्माण, अर्थ ग्रहण करने व अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए दक्ष प्रयोग कर पाना। अर्थात् मौखिक–भाषा में हम सुनी गई ध्वनियों पर कुछ नियम लगाकर अर्थ ग्रहण करते हैं। इस प्रकार अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए निश्चित नियमानुसार ध्वनि उच्चारित करते हैं।

सुनकर समझना–

ध्वनियाँ अर्थ ⟶

अभिव्यक्ति–

अर्थ ध्वनियाँ ⟶

जिस तरह मौखिक भाषा में श्रव्य प्रतीकों (ध्वनियों) का प्रयोग होता है उसी तरह लिखित भाषा में दृश्य प्रतीकों (अक्षरों–यानी काग़ज़ पर बनी आकृतियों) का प्रयोग होता है अक्षर वास्तव में ध्वनि के लिए प्रतीक का काम करते हैं (चीनी व कुछ अन्य भाषाओं में लिपि की संरचना अलग है और उसमें ध्वनि व लिखने के चिह्नों में संबंध नहीं है)।

बोलने में हमारे पास एक तो आवाज़ में उतार–चढ़ाव के प्रयोग की स्वतंत्रता होती है दूसरी, भाव–भंगिमाओं से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होती है तथा तीसरे, क्योंकि संवाद आमने–सामने होता है अतः अस्पष्टता या भ्रामकता के स्पष्टीकरण के अवसर उपलब्ध होते हैं। ये तीनों सुविधाएँ लिखित भाषा के उपयोग में उपलब्ध नहीं होतीं। अतः एक तो लिखित भाषा में ध्वनि प्रतीकों के अलावा भी कुछ प्रतीक चिह्नों की आवश्यकता होती है। जैसे– पूर्ण विराम, अर्धविराम, प्रश्न वाचक चिह्न आदि। दूसरे लिखित भाषा में भाषा के नियमों की अनुपालना अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है ऐसा इसलिए क्योंकि संदर्भ से अन्य अर्थ निकालने की संभावना नहीं होती।

कुछ प्रश्न :

- भाषा में कहाँ मनमानापन है और कहाँ मनमानापन नहीं चल सकता? उदाहरण सहित समझाइए।

लिखित भाषा में अर्थ ग्रहण करने के लिए हम केवल दृश्य प्रतीकों को देखते हैं। उसमें आवाज़ का उतार–चढ़ाव, हाव–भाव कुछ नहीं होता। लिखित भाषा में लिखकर अभिव्यक्ति की प्रक्रिया इससे उल्टी होती है। यहाँ भी ध्वनि तथा दृश्य प्रतीक का संबंध सुनिश्चित तथा भाषा–भाषी समूह में सार्वभौम है तथा मनमाना भी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लिखित भाषा में अर्थ तक पहुँचने में मौखिक भाषा से अधिक चरण हैं। मनमाने संबंधों की स्मृति व नियमों का उपयोग दो बार करना पड़ता है, यह कर पाने के लिए तर्क क्षमता का दो तीन बातों को एक साथ दिमाग़ में रख पाने आदि सभी की क्षमता बढ़ाने की ज़रूरत होगी।

यहाँ यह सब लिखने का उद्देश्य किसी प्रकार की भाषा–शास्त्रीय विवेचना करना नहीं है बल्कि एक बहुत ही सीमित उद्देश्य है। यहाँ पर केवल उन्हीं मान्यताओं को सूचीबद्ध कर रहे हैं जो आरंभिक भाषा शिक्षण में सीधे उपयोग की हैं। भाषा के बारे में और भी बहुत कुछ कहा जा सकता है और उसका भाषा के विकास से संबंध भी हो सकता है। यहाँ हम मात्र वे चीज़ें लिख रहे हैं जो सीधे–सीधे उक्त सामग्री व विधि के मूल में हैं।

तो अभी तक के विवेचन से हम इन निष्कर्षों पर पहुँचे हैं –

1. बालक की समझ का विकास और उसकी भाषा का विकास एक दूसरे से गहरे रूप से सम्बन्धित हैं।

2. मौखिक भाषा में (और मूलतः भाषा मौखिक ही होती है) क्रमित ध्वनि समूहों का अवधारणाओं से मनमाना संबंध होता है। इस संबंध के पीछे कोई तर्क नहीं होता। लेकिन अवधारणाओं का ढाँचा और उसमें पारस्परिक संबंध तर्कपूर्ण होता है और उसके आधार पर ही विचार आगे बढ़ते हैं।

3. ध्वनि समूहों तथा अवधारणाओं का यह संबंध सुस्थिर तथा भाषा–भाषी समूह में सार्वभौम होता है। इन अवधारणा–अनुबंधित–क्रमित–ध्वनि समूहों (शब्दों) के उपयोग के नियम भी मनमाने, सार्वभौम तथा सुस्थिर होते हैं। इस प्रकार भाषा एक सुव्यवस्थित प्रतीक तंत्र है।

4. लिखित भाषा में अक्षर ध्वनियों के दृश्य प्रतीक होते हैं। आकृतियों व ध्वनियों का संबंध भी मनमाना, सुस्थिर तथा सार्वभौम होता है।

5. लिखित भाषा द्वारा अर्थ तक पहुँचने में मौखिक भाषा से अर्थ तक पहुँचने की तुलना में एक चरण अधिक आता है तंत्र–गत नियमों व अनुबंधों का प्रयोग दो बार करना पड़ता है।

6. लिखित भाषा में संदर्भ, उतार–चढ़ाव, हाव–भाव और कोई संकेत नहीं होते। इसमें व्यक्त बात को समझने के लिए व्यवस्थित विचार क्रम की आवश्यकता होती है, लिखित भाषा के साथ जूझने के लिए अमूर्त विचार–विमर्श की क्षमता भी चाहिए। पढ़ने की क्षमता बढ़ने से न सिर्फ़ स्रोतों तक पहुँच बढ़ती है वरन् अमूर्त विचार करने पाने की व तर्क कर पाने की क्षमता भी।

भाषा का सीखने–सिखाने से संबंध

किसी प्रक्रिया को शिक्षण की प्रक्रिया कहे जाने के लिए यह आवश्यक है कि उस प्रक्रिया में समझ का विकास हो रहा हो। अतः भाषा–शिक्षण पर ठीक से विचार करने के लिए हमें पहले समझ व समझ के विकास की कुछ यहाँ संगत मान्यताओं को समझना तो पड़ेगा ही। यहाँ समझ व समझ के विकास के विस्तृत विवेचन की नहीं है। मात्र उन मान्यताओं को समझने का प्रयास करेंगे जो हमारी सामग्री व शिक्षण–विधि में काम में ली गई है और उन मान्यताओं को भी तार्किक दृष्टि से स्थापित नहीं कर रहे हैं। हालाँकि हमारा मानना है कि ये सभी मान्यताएँ सामान्य अवलोकन व तर्क के आधार पर स्थापित की जा सकती हैं। पर हमें लगता है कि यहाँ इन्हें केवल समझने भर से काम चल जाएगा।

इंसान अपने आस–पास की दुनिया को देखता है, छूता है, सूँघता है, चखता है और सुनता है देखना, सुनना इत्यादि को हम इंद्रिय–संप्रेषण कह सकते हैं। इंसान इन इंद्रिय–संप्रेषणों को अपनी स्मृति में रख सकता है। उस स्मृति को जागृत कर सकता है। विभिन्न स्मृतियों व इंद्रिय–संप्रेषणों में संबंध देख सकता है इन क्षमताओं व संप्रेषणों के आधार पर वह 'विचार' बनाता है 'लाल', 'पीला' आदि रंगों के 'विचार'। 'चारपाई', 'पेड़' आदि वस्तुओं के 'विचार'। इन 'विचारों' को हम 'अवधारणाएँ' कह सकते हैं। इन अवधारणाओं में आपसी संबंध पहचानता है जैसे– 'भेड़', 'ऊन', 'कपड़ा', 'ठंड' में संबंध। 'आम', 'गर्मी, 'मीठा', 'केरी', 'अचार' में संबंध। और भी कई तरह के संबंध। इस प्रकार आपस में जुड़ी अवधारणाओं के समूह को हम 'अवधारणाओं की संरचना' कह सकते हैं।

इस तरह इंसान अवधारणाओं की संरचनाएँ बना लेता है अब इन अवधारणा संरचनाओं के आधार पर वह अपने इंद्रिय–संप्रेषणों की व्याख्या करता है। समझ शब्द का उपयोग यहाँ दो अर्थों में किया जाएगा। एक, इस संपूर्ण अवधारणा–संरचना–तंत्र को इंगित करने के लिए। तथा, दो, मानव की अपने इंद्रिय–संप्रेषणों की व्याख्या कर पाने की क्षमता को इंगित करने के लिए। कहाँ कौन सा अर्थ वांछित है; यह संदर्भ से स्पष्ट हो जाएगा। जहाँ भ्रम की गुंजाइश होगी वहाँ स्पष्ट कर दिया जाएगा।

इंद्रिय–संप्रेषणों से होनेवाली सीधी दैहिक अनुभूति को हम यहाँ अनुभव कहेंगे। अनुभव शब्द का दूसरा अधिक विस्तृत अर्थ भी है पर यहाँ इसी सीमित अर्थ में इस शब्द का उपयोग करेंगे। समझ की ऊपर दी गई परिभाषा से ही स्पष्ट है कि इसका आधार व्यक्ति के अपने अनुभव ही हो सकते हैं। क्योंकि मूल अवधारणाएँ सीधे अनुभवों से ही बन सकती हैं। जैसे बिना देखे 'लाल' की अवधारणा बना पाना संभव ही नहीं है अर्थात् समझ का आधार अनुभव होते हैं। समझ का उपयोग अनुभवों की व्याख्या और वांछित अनुभव प्राप्ति के लिए होता हैं।

अनुभवों की व्याख्या अपनी ही समझ के आधार पर संभव है। किसी दूसरे की समझ के आधार पर जब मैं कुछ स्वीकार करता हूँ तब भी उनकी अपनी समझ में रूपांतरित करके ही स्वीकार करता हूँ। अतः बालक की समझ के विकास का एकमात्र रास्ता उसके लिए विभिन्न अनुभव देनेवाली परिस्थितियों का निर्माण करना तथा उसी की अवधारणाओं के माध्यम से उन अनुभवों को विवेचित/व्याख्यायित करने में मदद करना है। कोई अन्य व्याख्या उस पर आरोपित कर देने से समझ का विकास नहीं हो सकता। मात्र बालक को ढोंग करने के लिए बाध्य किया जा सकता है। समझ के विकास की गति हर बालक की अपनी होती है क्योंकि उसके अनुभव उसके अपने ही होते हैं। बालक की समझ के विकास की गति को प्रभावित तो किया जा सकता है पर कुछ सीमाओं के अंदर ही अर्थात् बहुत से बालकों की समझ की गति को समान बना पाना संभव नहीं है। यदि सबकी समझने की गति को समान बनाने की कोशिश करें तो कुछ की गति को घटाना पड़ेगा तथा कुछ को समझने का नाटक करने के लिए बाध्य करना पड़ेगा।

उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर हम शिक्षण विधियों के बारे में कुछ दिशानिर्देश प्राप्त कर सकते है–

- शिक्षण–विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जो बालकों के अनुभव के आधार को बढ़ाएँ। यह तभी हो सकता है जब वे नए अनुभव प्रदान करने के लिए बनाई गई परिस्थितियों व की जानेवाली गतिविधियों में स्वेच्छा से हिस्सा लें।
- बालक की अर्जित समझ को आधार बनाकर ही आगे बढ़ा जा सकता है उससे कटकर, हटकर या उसे नकारकर आगे बढ़ना संभव नहीं है।
- शिक्षण–विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जो बालक को आगे बढ़ने की गति को स्वतंत्रता दें।

पिछले अध्याय में हमने एक निष्कर्ष यह निकाला था कि बालक की समझ का विकास व भाषा का विकास एक दूसरे पर आश्रित होते हैं। एक दूसरे में मिले–जुले होते हैं। बालक जब विद्यालय में आता है तो उसकी अपनी एक समझ व अपनी भाषा दोनों ही होती हैं। अतः शिक्षण में, और विशेष रूप से भाषा–शिक्षण में, हमें आगे का काम इसी उपलब्ध आधार पर आरंभ करना चाहिए। हमें बालक की भाषा से ही आरंभ करना चाहिए। उसको इतना अवसर देना चाहिए कि वह अपनी मातृभाषा (जो सामान्यतः कोई स्थानीय भाषा होती है) से सहज रूप से मानक भाषा पर आ सके। बिना दबाव महसूस किए तथा बिना अपनी भाषा को हीन तथा त्याज्य महसूस किए।

ये भाषा–शिक्षण के बारे में सामान्य दिशा निर्देश हैं। अब विशेष रूप से पढ़ने–लिखने के बारे में विचार करने की ज़रूरत है। जैसा कि पहले कह चुके हैं मौखिक भाषा एक श्रव्य–प्रतीक तंत्र है इसी की तुलना में हम लिखित भाषा को दृश्य–प्रतीक तंत्र कह सकते हैं। पर यह एक बड़ी भूल होगी। भाषा को दृश्य–प्रतीक तंत्र कहने

का अर्थ होगा कि दृश्य–प्रतीकों (अक्षराकृतियों) से हम सीधे अर्थ तक पहुँच सकते हैं। पर यह बात सही नहीं है अक्षराकृतियों से हम केवल ध्वनियों तक पहुँचते हैं। अर्थ का संबंध अक्षराकृतियों से नहीं बल्कि ध्वनि समूहों (शब्दों) से है। वास्तव में हम पढ़ने से पहले अक्षराकृतियों की ध्वनियों के रूप में व्याख्या करते हैं। और फिर ध्वनियों की सार्थक व्याख्या करते हैं। अर्थात् पढ़ने में हम दो भिन्न–भिन्न तंत्रों का क्रम से उपयोग करते हैं। इस सामान्य–सी बात को, जिसे सब जानते हैं, यहाँ इस प्रकार रेखांकित करके लिखने के दो कारण हैं। पहला, यह ठीक है कि इस बात को सब जानते हैं। पर साथ ही विद्यालयों में 'पढ़ना' सिखाने के तरीक़ों को और उन परिणामों को देखें तो पाएँगे कि वास्तव में पढ़ना सीखते समय इसको लगभग सभी लोग भूल जाते हैं। पढ़ना सिखाते समय सारा ज़ोर अक्षराकृतियों की ध्वनियों के रूप में व्याख्या करके शब्दोच्चार सिखा देने पर होता है। नतीजा यह होता है कि बालक पुस्तक को देखकर लिखे अनुसार उच्चारण करना सीख जाता है। शिक्षक मान लेता है कि वह पढ़ना सीख गया। वास्तव में उसने लिखे को देखकर उच्चारण मात्र किया है, उसे अर्थ से तो जोड़ा ही नहीं अर्थात् उसने लिपि को एक 'अव्याख्यायित औपचारिक तंत्र के रूप में सीखा है दूसरा कारण इससे संबंधित है। अव्याख्यायित औपचारिक तंत्रों पर अधिकार प्राप्त करने में किसी गणितज्ञ या तर्कशास्त्री की तो रुचि हो सकती है, पर सामान्य बालकों को यह निरर्थक कवायद लगती है और वे इसे पसंद नहीं करते। अतः हम जैसा पढ़ना सिखाना चाहते हैं उसे भी वे बीच में ही छोड़ देते हैं।

कुछ प्रश्न :

- लिखित भाषा सीखना, मौखिक भाषा से कठिन क्यों लगता है? समझाइए।

इस समस्या से उबरने के लिए पढ़ना सार्थक रूप से सिखाना पड़ेगा। सार्थक रूप से पढ़ने का अर्थ है लगातार दो व्याख्याएँ साथ–साथ करते जाना। पहले अक्षराकृतियों को देखकर उनसे ध्वनियाँ बनाना। फिर ध्वनियों से अर्थ निकालना। कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि लिखित प्रतीक चिह्नों (अक्षरों) से सीधे अर्थ तक पहुँचना पढ़ने की क्रिया है। यह बात स्पष्टतः गलत है अक्षर मात्र ध्वनियों से जोड़ते हैं और ध्वनियाँ अकेली अपने आप में अर्थहीन हैं। इस भ्रामक धारणा का कारण यह है कि सक्षम पाठक अपने पढ़ने की क्रिया में शब्दोच्चार नहीं करता। पूर्णतया मूक पठन द्वारा लिखित का अर्थ ग्रहण करता है पर यह स्थिति बहुत अभ्यास के बाद आती है। होता मात्र यह है कि सक्षम पाठक ने इस दक्षता में वह स्तर प्राप्त कर लिया है जहाँ बीच के चरण को वह अनदेखा कर सकता है।

जो भी हो पढ़ना सीखने के लिए लिपि पर अधिकार आवश्यक है लिपि मौखिक भाषा से कहीं अधिक औपचारिक तंत्र है। इसके नियम मौखिक भाषा से कम लचीले होते हैं। इन पर अधिकार के लिए व्यवस्थित अभ्यास आवश्यक है। इसके बिना समय अधिक लगेगा और ग़लतियाँ अधिक रहेंगी।

इस सबको देखते हुए हम पढ़ना–लिखना सिखाने के लिए एक और दिशा–निर्देश प्राप्त कर सकते हैं। पढ़ना–लिखना सीखने के लिए पर्याप्त सुव्यवस्थित अभ्यास होना चाहिए। पर उस अभ्यास को सार्थक व रुचिकर तरीके से करना आवश्यक है।

ये बहुत मोटे–मोटे निष्कर्ष हैं। अभी इनका भाषा–शिक्षण की प्रक्रिया के स्वरूप पर ठीक–ठीक क्या प्रभाव पड़ेगा यह बहुत स्पष्ट नहीं है। इन निष्कर्षों को वास्तविक परिस्थितियों, आवश्यक दक्षताओं, क्षमताओं आदि से जोड़कर देखने पर हमें दिशा मिल सकेगी। इन अन्य चीज़ों का ज़िक्र यथास्थान करना ही उचित होगा।

सभार : रोहित धनकर

कुछ प्रश्न :

- मौखिक भाषा जितनी तेज़ बदलती है लिखित भाषा उतनी तेज़ी से नहीं बदलती है इसके क्या कारण है?
- पढ़ने का मतलब सिर्फ अक्षराकृतियों की ध्वनियाँ निकालना मात्र है या और कुछ है? समझाइए।

* अव्याख्यायित– यहाँ इसका संदर्भ लिपि संकेतों (अ,आ, ... कमल..........) को अर्थ देने से है। लेखक कहते हैं कि बच्चे पढ़ने वक़्त लिपि संकेतों का उच्चारण कर लेते हैं जैसे कमल लेकिन कमल माने क्या? यह उनका पता ही नहीं होता।

इकाई – V

हिन्दी भाषा व उसका व्याकरण

पाठ की रूपरेखा

- परिचय
- उद्देश्य
- शीर्षक व उप–शीर्षक
  - व्याकरण क्या है?
    - शब्दों के स्तर पर नियम
    - शब्द निर्माण
    - बहुवचन नियम
  - संवाद
  - भाषा व व्याकरण का संबंध
  - कैसे बने व्याकरण की किताबें?
  - व्याकरण कैसे सिखाए?
    - बगुला और केकड़ा
  - सारांश

परिचय :

व्याकरण को भाषा सीखने–सिखाने का एक अनिवार्य हिस्सा माना जाता है। अक्सर भाषा सिखाने को व्याकरण सिखाने के तुल्य समझा जाता है। भाषा शिक्षण के इन प्रयासों में व्याकरण सिखाने के लिए नये–नये तरीके खोजे जाते रहे हैं और इस पर कुल समय का काफी बड़ा हिस्सा भी लगाया जाता रहा है। व्याकरण सिखाने के ऐसे अधिकांश प्रयासों में व्याकरण सिखाने को नियमों व परिभाषाओं की स्पष्ट जानकारी के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा है। यह तो शायद माना जाता है कि व्याकरण के नियम व परिभाषाएँ भाषायी सामग्री में ही निहित है लेकिन फिर भी इन्हें सिखाने के लिए भाषायी संदर्भ व सामग्री से काट कर अमूर्त तथ्यों के रूप में रखा जाता है। सीखने वाले से अपेक्षा की जाती है कि वह इन्हें इस अमूर्त स्वरूप में आत्मसात कर पाएगा। ऐसे प्रयास अक्सर व्याकरण सीखने से भाषा को बेहतर उपयोग की क्षमता से बिल्कुल जोड़ नहीं पाते, फिर भी यह समझाया जाता है कि व्याकरण सीखे बिना भाषा नहीं सीखी जा सकती।

भाषा विज्ञान व भाषा शिक्षण के क्षेत्र में हुए शोधों ने भाषायी संदर्भ से अलग कर व्याकरण सिखाने के इस तरीके पर प्रश्न खड़े किए हैं। इस सबसे भाषा शिक्षण का नजरिया बदला है। इस इकाई में हम इस बदलते नजरिए के बारे में बात करेंगे।

उद्देश्य :

- भाषा में व्याकरण की भूमिका की समझ बना पाना।
- व्याकरण क्या होता है? इस विषय पर एक स्पष्ट दृष्टिकोण विकसित करना।
- भाषा में व्याकरण शिक्षण क्यों आवश्यक है? इसकी समझ बना पाना।
- भाषा शिक्षण में भाषा विज्ञान के शोधों के प्रति एक नया दृष्टिकोण विकसित करना।
- भाषा व व्याकरण के संबंध को समझ पाना।
- व्याकरण की किताब कैसे बने? व इसे कैसे सिखाया जाए? की समझ विकसित करना।

इस इकाई के केन्द्र में ये तीन प्रश्न होंगे।

1. व्याकरण से हमारा क्या तात्पर्य है? हम व्याकरण को क्या समझते हैं?
2. भाषा व व्याकरण में किस तरह का संबंध है?
3. व्याकरण शिक्षण क्यों आवश्यक है? और इसी के साथ–साथ किस तरह का व्याकरण शिक्षण उपयोगी व सार्थक है।

व्याकरण क्या है?

हर भाषा चाहे वह छत्तीसगढ़ी हो या तमिल, गोंडी हो या हल्बी, हिंदी हो या अंग्रेजी या फिर अन्य कोई भी भाषा, व्याकरण युक्त होती ही है। वह ध्वनि, शब्द, वाक्य व संवाद के स्तर पर नियमबद्ध होती है। भाषायी इकाइयों के गठन के ये नियम ही व्याकरण हैं। (हालाँकि इनके अलावा कुछ और नियम भी शामिल होते हैं जो विशिष्ट समय के लिए होते हैं।) आगे हम कुछ उदाहरण लेकर यह समझाने का प्रयास करेंगे कि कैसे भाषाएँ हर स्तर पर नियमबद्ध होती हैं।

क्या आप जानते हैं कि हिन्दी भाषा में कितनी स्वतंत्र ध्वनियाँ हैं जिनसे हिन्दी की पूरी भाषायी सामग्री की रचना होती है? क्या आप स्वर व व्यंजन ध्वनि का भेद जानते हैं? यह सब हमने इस पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष में पढ़ा था। चाहें तो इसे दोहरा लें।

हिन्दी भाषा में कुल 46 ध्वनियाँ होती है 10 स्वर ध्वनियाँ व 36 व्यंजन ध्वनियाँ, इन्हीं ध्वनियों को जोड़कर हम शब्द बनाते हैं, लेकिन ऐसा नहीं हो सकता कि जब जिसको जो ठीक लगा उसी के हिसाब से उसने ध्वनियों को रख कर मन–माफिक शब्द बना लिया। हालाँकि इन ध्वनियों को आगे–पीछे रखकर कई तरह से जोड़ा जा सकता है और इससे असंख्य शब्द बना सकते हैं, फिर भी इन्हें जोड़ने की संभावना और उसके क्रम पर कई बंधन हैं। सार्थक शब्द बनाने के लिए भाषा हमें ध्वनियों के साथ खेलने की नियमबद्ध स्वतंत्रता देती है। इन ध्वनियों को क्रम में रखने के कुछ नियमों के बारे में हमने प्रथम वर्ष में पढ़ा है। एक नियम यह है कि हिन्दी भाषा के अधिकांश शब्दों की सरंचना व्यंजन–स्वर, व्यंजन–स्वर होती है। यदि हम हिन्दी भाषा के शब्दों की सूची बनाएँ और उनकी ध्वनियों को बारीकी से जाँचे तो हम पाएँगे कि उनमें से ज्यादातर शब्दों में बारी–बारी से व्यंजन व स्वर ध्वनियाँ निकलती हैं।

जैसे	वायु	=	व्	+ आ	+ य्	+ उ
			व्यंजन	+ स्वर	+ व्यंजन	+ स्वर
	भाषा	=	भ्	+ आ	+ ष्	+ आ
			व्यंजन	+ स्वर	+ व्यंजन	+ स्वर

आप भी इसी तरह हिन्दी, छत्तीसगढ़ी, गोंडी, हल्बी.... या फिर अन्य भाषाओं के शब्दों को लीजिए व देखिए की क्या उनमें भी ध्वनि जोड़ने में यही नियम होता है? क्या इसका न पालन करने वाले शब्द मिले? क्या उनमें कुछ और नियम खोजा जा सकता है? क्या आप सिर्फ स्वर ध्वनियों अथवा सिर्फ व्यंजन ध्वनियों वाले शब्द ढूँढ़ पाए?

ऐसे शब्दों का एक वर्ग है जिनमें केवल स्वर ध्वनियाँ होती हैं पर ऐसे शब्द नहीं होंगे जिसमें केवल व्यंजन ध्वनियाँ ही हों।

कुछ प्रश्न :

- उदाहरण के लिए आओ, ओ, इत्यादि ऐसे शब्द हैं जिनमें केवल स्वर ध्वनियाँ हैं। क्या आप ऐसे और शब्दों को ढूँढ़ सकते हैं जिनमें केवल स्वर ध्वनियाँ हों? शब्द सोचिए व लिखिए।
- क्या कुछ शब्द ऐसे मिले जिनमें केवल व्यंजन ध्वनियाँ हों?
- क्या ऐसे शब्द मिले जिनमें व्यंजन स्वर व्यंजन स्वर न हो? क्या आप ऐसे 10 शब्द ढूँढ़ सकते हैं? इनकी संख्या स्वर व्यंजन स्वर... वाले शब्दों से कम होगी अथवा ज्यादा?

दूसरा नियम यह है कि ध्वन्यात्मक मूल्य स्थान के अनुसार अलग–अलग हो सकते हैं। 'लड़का' में 'ल' पूरा है लेकिन कमल व कलकल के तीनों ल् आधे हैं।

काला = क् + आ + ल् + आ

व्यजंन + स्वर + व्यजंन + स्वर

कमला = क् + अ + म् + ल् + आ

व्यजंन + स्वर + व्यजंन + व्यजंन + स्वर

कलकल= क् + अ + ल् + क् + अ + ल

व्यजंन + स्वर + व्यजंन + व्यंजन + स्वर + व्यजंन

हिन्दी का ही एक अन्य नियम है कि व्यजंन–स्वर– व्यजंन–स्वर की कड़ी में अंतिम 'अ' स्वर बोला नहीं जाएगा। आप इन शब्दों के बारे में व ऐसे ही अन्य शब्दों के बारे में सोचिए। कमल, सरल, बात, साथ क्या इनमें हम अंतिम अ स्वर बोलते हैं?

क्या आप ऐसे कुछ और नियम सोच सकते हैं? कोई भी और भाषा जो आप जानते हैं लेकर देखिए कि क्या ये नियम उस भाषा पर भी लागू होते हैं?

यह हुई ध्वनि के स्तर पर नियमों की बात। यह जरूर हो सकता है कि भाषा विशेष के संदर्भ में इन नियमों में थोड़ा फर्क हो। लेकिन कोई भी भाषा यह स्वतन्त्रता नहीं देती कि व्यक्ति अपने मन मुताबिक किन्हीं भी ध्वनियों को मिला सके। उनको जोड़कर सार्थक शब्द बनाने के नियम हैं।

शब्दों के स्तर पर नियम

किसी भी भाषा में अर्थ के स्तर पर सबसे छोटी इकाई शब्द है। इस हिस्से में हम हिन्दी भाषा में शब्दों के स्तर पर लागू नियमों तथा शब्दों के बीच सम्बन्धों को समझने का प्रयास करेंगे। शब्दों को मुख्यता दो वर्गों में रखा जा सकता है। 1. वे शब्द जो परिवर्तित नहीं होते यानी अपरिवर्तित/अपरिवर्तनीय शब्द (जिन्हें अविकारी शब्द कहा जाता है) 2. परिवर्तित होने वाले शब्द (विकारी शब्द कहा जाता है) किसी भी टेक्स्ट यथा कहानी, कविता, निबंध में दोनों तरह के शब्द मिलेंगे। यदि आप ऊपर लिखे गए हिस्से को भी फिर से पढ़ें तो पाएँगे कि इसमें भी दोनों तरह के शब्द हैं। कुछ शब्द ऐसे हैं, जो बार–बार आए हैं, अलग–अलग जगहों पर आए हैं। लेकिन उनका रूप परिवर्तित नहीं हुआ है जैसे के, ने, में, का, पर इत्यादि।

क्या ऐसे कुछ और शब्द आप सोच सकते हैं?

छत्तीसगढ़ी में भी क्या ऐसे शब्द हैं?

कुछ प्रश्न :

- अभी तक लिखे गए अनुच्छेदों (पैराग्राफो) को ध्यान से पढ़िए व बताइए क्या उनमें इस तरह के और भी शब्द आए हैं? वे शब्द कौन–कौन से हैं?
- क्या आप बता सकते हैं कि दूसरे वर्ग के शब्दों में कौन से शब्द सम्मिलित होंगे?
- दूसरी तरह के 10 शब्दों व उनके स्वरूपों को लिखें।

आपकी मदद हेतु एक उदाहरण– जैसे एक शब्द आया है भाषा, मूल शब्द है भाषा लेकिन विभिन्न शब्द निर्माण प्रक्रियाओं के जरिये अनेक शब्दों में यह दिखता है, जैसे भाषायी, भाषाओं (ये दोनों ऊपर अनुच्छेद में भी आए है), भाषाएँ, भाषी, भाषिक इत्यादि।

शब्द निर्माण

चलिए अब कुछ शब्द निर्माण प्रक्रियाओं को देखें, सबसे पहले हिन्दी में संज्ञाओं के संदर्भ में लिंग के निरूपण को रखते है।

सुनार, लुहार, कामगार, कुम्हार, सियार इत्यादि। ये पुल्लिंग संज्ञाएं इन्सानों अथवा पशुओं के लिए उपयोग होती हैं। इन्हें स्त्रीलिंग बनाने के लिए उनमें 'इन' जोड़ दिया जाता है।

लुहार – लुहारिन

कुम्हार – कुम्हारिन

कुछ प्रश्न :

- आप कुछ ऐसे ही और शब्द बनाएँ जिनमें 'इन' जोड़ने से स्त्रीलिंग बन जाता है।

हिन्दी भाषा में सामान्य तौर पर अजीवित संज्ञाओं एवं पौधों में पुल्लिंग व स्त्रीलिंग दोनों एक साथ नहीं होते। यदि गेंद स्त्रीलिंग है तो वही रहेगी और बल्ला पुल्लिंग ही। हिन्दी भाषा में पुल्लिंग संज्ञा से स्त्रीलिंग संज्ञा बनाने के कुछ और नियम सोचें।

अगर हम शेर, मोर इत्यादि शब्दों को देखें तो इनमें 'नी' जोड़ने से पुल्लिंग का स्त्रीलिंग बनता है, यानी ऊपर बनाया गया नियम इस तरह के शब्दों पर लागू नहीं है।

कुछ प्रश्न :

- दोनों श्रेणियों जैसी 5–5 संज्ञाएँ लीजिए व उनके स्त्रीलिंग व पुल्लिंग शब्द बनाइए। ऐसे अभ्यास और बनाएँ–
- सेठ का स्त्रीलिंग सेठानी है। सेठ जैसे और कौन से शब्द आप सोच सकते हैं?

- इन शब्दों को देखिए और बताइए कि इनके स्त्रीलिंग शब्द कैसे बनेंगे।

  लड़का, बेटा, दादा, धोबी, माली
- क्या आप इन सभी शब्दों को एक ही वर्ग में रखेंगे अथवा अलग–अलग? क्यों?
- इन दोनों श्रेणियों की क्या खास बात है? कौन सा गुण इन्हें अलग करता है? हर श्रेणी में और 5–5 शब्द रखें।

बहुचवन बनाने के नियम

अक्सर भाषा की कक्षाओं में यह पढ़ाया जाता है कि हिन्दी में हर संज्ञा का एक बहुवचन रूप होता है। यथा लड़का का लड़के, कुर्सी का कुर्सियाँ इत्यादि। लेकिन क्या यह सही है? कुर्सियों को..., लड़कों को ... में कुर्सियों व लड़कों बहुवचन के रूप हैं। ध्यान से सोचें तो हिन्दी में वचन व कारक के अनुसार हर संज्ञा के एक या दो नहीं बल्कि छह रूप होते है। इनमें से कुछ रूप एक सामान होते हैं लेकिन पूरे संदर्भ को देखें तो फर्क पता चलेगा। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्यों को देखें–

1. लड़का जाता है।
2. लड़के जाते हैं।
3. लड़के ने खाना खाया।
4. लड़कों ने खाना खाया।
5. ओ लड़के चला जा।
6. ओ लड़को! चले जाओ।

आप देख सकते है कि वाक्य 2 व वाक्य 3 व वाक्य 5 में आए लड़के शब्द का रूप एक जैसा है लेकिन वाक्य दो में जहाँ लड़के बहुवचन है (कर्ता) वहीं वाक्य 3 में एकवचन।

वाक्य 2,3,5 तीनों में 'लड़के' आया है। इनमें वाक्य 2 में लड़के कई लड़कों के लिए है, इसलिए अलग है। वाक्य 5 में आया लड़के भी वाक्य 3 के लड़के से अलग है क्योंकि यदि इन दोनों के स्त्रीलिंग रूप को देखें तो ऐसा मिलेगा ''ओ लड़के चला जा, ओ लड़की चली जा।''

लड़के ने खाना खाया। लड़की ने खाना खाया।

अर्थात दोनों में से एक रूप ऐसा है जिसके साथ वाक्य में कुछ बदलाव आ सकता है और कुछ रूप ऐसा है जिसमें यह बदलाव नहीं आता। यह कहना जरूरी होगा कि हर वाक्य 5 जैसे वाक्य में परिवर्तित नहीं होता। ओ लड़के चल, ओ लड़की चल।

यानी देखने पर तो लड़का संज्ञा के चार रूप हैं लड़का, लड़के, लड़कों, लड़को लेकिन प्रयोग के आधार पर 6 रूप, जैसा कि आप इस तालिका में देख सकते हैं।

लड़का		
कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	लड़का	लड़के
विभक्ति पूर्व	लड़के	लड़कों
संबोधन	लड़के!	लड़को!

कुछ प्रश्न :

- आप भी इसी तरह वाक्य लिखकर निम्नलिखित शब्दों के बहुवचन बनाएँ।

  नदी, घर कमरा, लड़की, बेटा, मछली, कहानी और फिर बताएँ कि प्रत्येक के छह रूप कौन–कौन से हैं?
- ऐसे कौन–कौन से शब्द हैं जिनमें रूपों के प्रकार की संख्या समान है? जैसे लड़का के 4 रूप हैं। किसी एक अन्य भाषा में भी संज्ञा व उसके बहुवचन के रूप खोजने का प्रयास करें।

इन वाक्यों को देखें:

1. हनीफ खाना खाता है
2. अंजलि खाना खाती है
3. वह खेलता है
4. वह खेलती है
5. मैं खेलता हूँ
6. मैं खेलती हूँ
7. हम खेलते हैं
8. हम खेलती हैं
9. तुम खेलते हो
10. तुम खेलती हो

इन सभी वाक्यों को ध्यान से देखें तो हम पाएँगे कि हिन्दी में कर्त्ता व क्रिया में सीधा सम्बन्ध है। क्रिया कर्त्ता के लिंग के अनुसार बदल रही है। यदि कर्ता हनीफ है यानि पुल्लिंग तो क्रिया में भी यह दिखाई देता है। यह सम्बन्ध इतना स्पष्ट है कि सामान्य तौर पर हम सिर्फ क्रिया को देख कर बता सकते है कि कर्त्ता का लिंग, वचन व पुरूष क्या होगा। उदाहरण के लिए वाक्य तीन देखें, ''वह खेलता है'', इसमें 'वह' – तृतीय पुरूष, एकवचन, पुल्लिंग है।

कुछ प्रश्न :

- अब आप को वाक्यों में कर्त्ता व क्रिया देखकर बताएँ कि कर्त्ता कौन है?

  कुछ और वाक्य उदाहरण हेतु नीचे लिखे गए हैं।

  राम खाना खाता है।

  गीता खाना खाती है।

  सोहन ने रोटी खाई।

  सीता ने रोटी खाई।

  वह हँस रहा है।

- आप भी हिन्दी भाषा के ऐसे सामान्य 20 वाक्य लिखिए।
- इन वाक्यों को लिखने के बाद पता कीजिए कि क्या इन वाक्यों में कर्त्ता और क्रिया में कोई संबंध है? यदि हाँ तो बताइये।
- ऐसे ही 20 वाक्य आप अपनी स्थानीय भाषा व अंग्रेजी भाषा के लिखें व उनका विश्लेशण करें। क्या कर्त्ता और क्रिया में सीधा संबंध है?
- क्या हिन्दी में सभी वाक्यों में कर्त्ता व क्रिया में सीधा संबंध होता है? यदि नहीं तो ऐसे कुछ वाक्य लिखिए जिनमें यह संबंध न हो।
- इन वाक्यों में क्या खास गुण हैं?

  रेशमा ने 6 ऐसे वाक्य लिखे हैं–

  राम ने रोटी खाई।

  लक्ष्मी ने पत्थर मारा

  कुत्ते ने चुहियों को खाया।

  कुत्ते ने चूहे को खाया।

  बिल्ली ने चुहिया को खाया।

  बिल्ली ने चूहे को खाया।

- कुछ और ऐसे वाक्य लिखें और बताएँ इनमें क्या गुण हैं।

संवाद

हमने देखा कि भाषा ध्वनि, शब्द व वाक्य के स्तर पर नियमबद्ध है। उसी प्रकार संवाद के भी नियम होते हैं। एक दूसरे से बात करते वक्त हमें इन नियमों का ध्यान रखना होता है वरना बातचीत नहीं हो पाएगी।

आपकी किसी के साथ हुई बातचीत के बारे में सोचिए।

पहली बात यह है कि बात करने वालों को यह पता होता है कि किस के बारे में बात हो रही है व उसका संदर्भ क्या है। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप किसी से पूछते हैं– जनाब आप कहा जा रहे हैं? इसके जवाब में यदि वह कहता है टमाटर तो इसका अर्थ निकलेगा कि वह टमाटर लेने, बेचने, खाने अथवा फेंकने जा

रहा है। इस एक शब्द में एक पूरा कथन है जो संदर्भ से स्पष्ट हो सकता है। इसी तरह अगर वह कहता है हथियार, क्रिकेट, बाजार, मेला या ऐसा कुछ तो इस कथन का अर्थ संदर्भ से निकल सकता है। किन्तु अगर वह आप के सवाल के जवाब में बोले 'नी' या 'का' या 'के' तो फिर संवाद नहीं शुरू हुआ। इसके बाद आप कोई और सवाल पूछ कर बात को आगे नहीं बढ़ा सकते। इसका अर्थ यह है कि संवाद के नियम हमें बहुत कम शब्दों के इस्तेमाल के साथ काफी बड़े कथन प्रेषित करने की क्षमता देते हैं। ऐसा कर पाने के लिए ध्यान से सुनना व ध्यान से पढ़ना आवश्यक है।

इस कथन को पढ़ें। ''लक्ष्मी और रश्मि खेल रही थीं। लक्ष्मी छोटी है और इसलिए उसका ज्यादा ध्यान रखा जाता है। ऐसे उसकी बहन हमेशा पहले खेलने देती है। हालाँकि ऐसा करते समय उसे दुःख जरूर होता है लेकिन फिर भी वह अपनी बहन के प्यार की वजह से अपना दुःख भुला देती है।'' इस पैरा में एक ही बात पर ध्यान दें। यहाँ लक्ष्मी और रश्मि की बात कही जा रही है। पैराग्राफ में शुरू के बाद कहीं भी इनके नाम नहीं आए हैं किन्तु हम हर जगह उस, अपने आदि की जगह रश्मि अथवा लक्ष्मी कौन आएगी बता सकते हैं। यह हम इसलिए बता सकते हैं क्योकि भाषा में संवाद के स्तर के नियम हम जानते हैं। ये नियम पढ़ते–लिखते समय व बोलते–सुनते समय हम इस्तेमाल करते हैं।

भाषा और विचार के स्तर पर और भी कई ऐसे लक्षण हैं जो वाक्यों की लड़ी को एक संवाद में बुन देते हैं। उदाहरण के लिए 'वह, उसने, पर, और, क्योंकि, इसलिए आदि' ऐसे शब्द हैं जिनके बिना संवाद की कल्पना करना संभव नहीं है। मानो कोई कहता है : मुझे इसलिए देर हो गई क्योंकि रास्ते में ट्रैफिक बहुत था। यदि इस वाक्य में से हम 'इसलिए' और 'क्योंकि' निकाल दें तो यह वाक्य लगभग निरर्थक हो जाएगा। विचारों के स्तर पर एक संवाद तभी सार्थक होता है जब उसमें आए वाक्य एक विशेष क्रम में लगे हों। जैसे ही वह क्रम टूटेगा पूरा संवाद शब्दों का एक निरर्थक जाल भर रह जाएगा।

भाषायी नियमों के अलावा संवाद के कुछ सामाजिक नियम भी होते हैं। जैसे–

कई बार ऐसा होता है कि प्रश्न कुछ और पूछा जाता है और उसका जवाब कुछ और आता है। इस स्थिति में वक्ता व श्रोता दोनों को ही यह प्रयास करना पड़ता है कि वे एक दूसरे की बात को ध्यान से सुनें व वही समझने का प्रयास करें जो कहा जा रहा है। अतः संवाद का एक नियम यह भी है कि वक्ता को अपनी बात कहने का पूरा समय दिया जाय। जब वह बात कर रहा हो तो उसकी बात बीच में न काटी जाए, और साथ ही श्रोता द्वारा उस बात को ध्यान पूर्वक सुना जाय। ऐसा नहीं हो सकता कि जब वक्ता अपनी बात कह रहा हो तो श्रोता किसी और से बात करने में व्यस्त हो अथवा किसी का फोन सुनने में, जैसा कि अमूमन होता है।

दूसरे को अपनी बात कहने देना व उसके द्वारा कही गई बात को धैर्य पूर्वक सुनना, समझना यह भी भाषा शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। लेकिन कक्षा में भाषा शिक्षण के दौरान इस पर ध्यान नहीं दिया जाता।

कुछ प्रश्न :

- क्या आप सोचते है कि संवाद में भी व्याकरण का प्रयोग होता है? तो कैसे उदाहरण द्वारा समझाइए?

भाषा व व्याकरण का संबंध

इस हिस्से की शुरुआत हम दो प्रश्नों से करेंगे। पहला, क्या बगैर व्याकरण भाषा हो सकती है? व दूसरा यह कि पहले व्याकरण बनी या भाषा।

आप इन सवालों के बारे में क्या सोचते हैं?

पहले सवाल के बारे में सोचें तो देखेंगे कि प्रत्येक भाषा में कुछ पैटर्न होते हैं और यही पैटर्न अथवा नियम उपयोग करके हम शब्द व वाक्य गढ़ते हैं। यदि वाक्यों को गढ़ने के नियम न हों और शब्दों को किसी भी क्रम में रखा जा सके तो अर्थ निकालना संभव नहीं होगा। जैसे, वाक्य 'रजनी ने खत लिखा' में ''ने'' खत के पहले है और यह नियमबद्ध है। यदि नियम न हो और ''खत ने लिखा रजनी'' उचित हो या ''लिखा ने रजनी खत'' तो समझना मुश्किल होगा कि कौन लिख रहा है और क्यों लिख रहा है? अगर बहुवचन बनाने के नियम न हो तो पता नहीं चलेगा कि एक खत की बात हो रही है अथवा अनेक खतों की। हिन्दी भाषा बोलने वाले इन नियमों को जानते हैं। वे लोग जो हिन्दी का उपयोग करते हैं, वे काफी कम उम्र में (काफी जल्दी) ध्वनि, शब्द, वाक्य, संवाद स्तर के पैटर्नो को सहजता से आत्मसात कर लेते हैं। हिन्दी उपयोग करने वाले सभी लोग इन पैटर्नो को समझते हैं और तभी वे उस भाषा का उपयोग कर पाते हैं। ऐसा नहीं कि हम इन नियमों व पैटर्नों को बता सकें पर हम जानते है। इनके अभाव में हम एक दूसरे से बात ही नहीं कर पाएँगे। ऐसा सभी भाषाओं में होता है। हर भाषा के अपने नियम होते हैं और सभी नियम हर भाषा में हों ऐसा आवश्यक नहीं। हालांकि कुछ ऐसे भी नियम हैं जो सभी भाषाओं में हैं। इनमें से एक नियम ध्वनि स्तर पर व्यंजन स्वर–व्यंजन स्वर... वाले शब्दों की बहुतायत का है। यह नियम लगभग सभी भाषाओं में मिलता है। हम कह सकते हैं कि भाषा होगी तो उसका व्याकरण भी साथ–साथ होगा ही और उस भाषा को जानने वाले इन नियमों का उपयोग करते ही होंगे। व्याकरण भाषा में अंर्तनिहित है, इससे अलग नहीं किया जा सकता। यह दोहराना होगा कि ऐसा जरूरी नही है कि वे व्यक्ति जो व्याकरण सहजता से जान रहे हैं, उसकी बारीकियों को या मोटे नियमों को ही किसी अन्य के सामने प्रस्तुत कर सकें। यानी वह जानता है उपयोग कर सकता है लेकिन वह किसी को यह नही बता सकता कि वह क्या जानता है।

अब दूसरा प्रश्न। सवाल यह है कि पहले व्याकरण बनी या भाषा। तार्किक स्तर पर तो यह कहा जा सकता है कि हम पहले व्याकरण रच सकते हैं और फिर उससे भाषा बना सकते हैं किन्तु यह स्पष्ट है कि ऐसा करने के लिए पहले व्यक्तियों की जरूरत होगी। व्यक्ति ही सोचेंगे कि व्याकरण बनाएं और उससे भाषा बनाएं। इसका अर्थ यह हुआ कि व्याकरण बनाने से पहले व्यक्ति होने चाहिए, उन्हें पता होना चाहिए। व्याकरण बनाना है और यह भी कि व्याकरण से भाषा बनेगी, यानि व्याकरण बनने से पहले ही उन्हें भाषा व व्याकरण पता होना चाहिए। अतः हम कह सकते हैं कि भाषा के लिए पहले व्यक्तियों का होना आवश्यक है, यदि लोग ही नहीं होंगे तो भाषा की जरूरत ही नही होगी। अतः लोग मिलजुलकर अपनी भाषा का निर्माण करते है। और फिर बनते है उसके शब्दकोष व व्याकरण। दूसरे शब्दों में यदि भाषा नहीं होगी तो व्याकरण नहीं होगा। यानी व्याकरण भाषा के अधीन है। ऐसी संभावना नहीं है कि पहले व्याकरण और इसके नियम आएँ व फिर भाषा आए।

कैसे बनें व्याकरण की किताबें

जैसा कि आप प्रथम वर्ष में और इस वर्ष इकाई एक में पढ़ चुके हैं कि भाषा सीखने–सिखाने की प्रक्रिया घर पर ही शुरू हो जाती है। बच्चे अपने माता–पिता, भाई बहन अन्य रिश्तेदारों से अंतर्क्रिया करते हुए सहज रूप से अपनी–अपनी घरेलू भाषा सीख लेते हैं और विद्यालय आने तक आते आते वे उसमें पूर्ण रूप से दक्ष हो चुके होते हैं। वे न केवल अपने भाषा के हजारों शब्द जान रहे होते हैं वरन् उसके विभिन्न स्तर यथा शब्द, वाक्य, संवाद पर क्या नियम हैं यह भी उपयोग कर सकते हैं। 3–4 वर्ष की उम्र का एक बच्चा अपनी मातृभाषा में हो रहे संवाद में आत्मविश्वास से हिस्सा ले सकता है। वह अपनी बात दूसरों को समझा सकता है व दूसरों की बात समझ सकता है। वह यह क्षमता रखता है कि व्यक्ति, स्थान और विषय के अनुसार उसे भाषा में कहाँ व कैसे परिवर्तन करना है, कर सकता है। जल्दी–जल्दी या ध्यान बँटने की वजह से या किसी अन्य कारण से वह कुछ गलती कर ले लेकिन ऐसी गलती तो बड़ों से भी होती है उसे अपनी भाषा सही बोलने के लिए व्याकरण की कोई किताब नहीं चाहिए।

हमने यह भी बातचीत की है कि किसी भी भाषा के नियम पता करने के लिए उस भाषा के बोलने वाले व्यक्तियों के संवादों का अध्ययन एक मात्र तरीका है। यदि हमें गोंडी का व्याकरण बनाना है तो हमें गोंडी भाषी व्यक्तियों को सुनना होगा। उनके द्वारा उपयोग किए गए वाक्यों व संवादों का दस्तावेजीकरण करना होगा और प्राप्त डाटा को व्यवस्थित करना होगा। इस डाटा के अध्ययन से ही हम उन नियमों तक पहुँचेंगे जो उस भाषा को व्यवस्थित करते हैं। यह कहना कि कोई व्यक्ति अपने समाज की भाषा नहीं जानता, तार्किक रूप से अंसगत है।

उपर्युक्त बिन्दुओं से हम यह समझ सकते हैं कि चाहे किसी भाषा को बोलने वाला उसके नियम व्यक्त न कर पाए, किन्तु यह अहसास जरूर कर सकता है कि जो कहा जा रहा है वह सही है अथवा नहीं। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह भाषा के व्याकरण का ज्ञाता है। उसे ज्यादा व्यवस्थित व बेहतर लिखने के लिए व्याकरण सीखने की आवश्यकता है।

यह समझना होगा कि बच्चा जो भाषा स्वाभाविक तौर से जानता है उसके व्याकरण की उसके भाषायी विकास में भूमिका है। इस सवाल पर विचार के बाद हम ज्यादा सार्थक व्याकरण कार्यक्रम बना पाएँगे। वैसे यह भी याद रखना होगा कि सामान्य स्कूलों में आने वाले अधिकांश बच्चों की प्रथम भाषा/मातृभाषा हिन्दी नहीं होती। इसलिए कक्षा में पढ़ाई जा रही हिन्दी व अंग्रेजी सीखने में उनके नियमों को पहचानना व समझना उनके लिए आवश्यक है। मातृभाषा शिक्षण तो उस स्थिति में करना होगा जब बच्चों की मातृभाषा हल्बी, गोंडी अथवा अन्य कोई भाषा को पढ़ाया जाए। अधिकांशतः छात्राओं के लिए हिन्दी मातृभाषा नहीं है। कुछ के लिए हिन्दी संपर्क भाषा तो हो सकती है।

कुछ प्रश्न :

- आप बच्चों को व्याकरण किस प्रकार सिखाना चाहेंगे और क्यों?

व्याकरण कैसे सिखाएँ?

भाषा सीखने–सिखाने के बारे में आम धारणा है कि बच्चों को संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि की परिभाषा, कर्त्ता–क्रिया जैसे शब्दों की जानकारी व एकवचन–बहुवचन इत्यादि के नियम याद होने चाहिए। व्याकरण के नियम याद हो जाएँ तो मानो कि बच्चा भाषा सीख गया है। भाषा में अच्छा होना याने व्याकरण के नियम जानना व उनका उपयोग करना। किन्तु जैसा कि हमने पढ़ा, चार साल का बच्चा भी भाषायी दृष्टि से किसी वयस्क के समान अपनी भाषा में संवाद करने, अवधारणाएँ बनाने व तर्क करने में सक्षम होता है। ज्यादा व्यापक चर्चा में शामिल होने के लिए उसे व्याकरण के तथ्यों व परिभाषाओं की जरूरत नहीं होती। कुछ लोग यहाँ तक मानते हैं कि किसी को किसी भी भाषा को सीखने के लिए उस भाषा में डूबना जरूरी है। अगर बच्चों को बातचीत के बहुत से मौके मिलें, पढ़ने के मौके मिलें, वे खूब रस लेकर पढ़ें व उसके साथ ज्यादा से ज्यादा क्रियाकलाप करें तो व्याकरण सीखने का काम खुद–ब–खुद हो जाएगा। वर्तमान समय में कक्षा–कक्ष में बच्चों को भाषा न सिखाकर व्याकरण सिखाने पर ज़्यादा ज़ोर है।

अगर बच्चों को खूब सामग्री पढ़ने को दी जाए, उसे भाषा का उपयोग करने दिया जाय, बिना किसी रोक–टोक के तो दी गई सामग्री को पढ़ कर व अपने उपयोग के संवादों में पैटर्न ढूँढ़ कर वह व्याकरण सीख सकता है।

नीचे हम ऐसे ही कुछ क्रियाकलाप दे रहे हैं जिनमें नियम खोजने का प्रयास है। इसके बाद आप सोचें क्या यह व्याकरण सिखाने का उपयुक्त ढंग है या नहीं।

बगुला और केकड़ा

गर्मी का मौसम था। एक तालाब में पानी कम हो रहा था। तालाब में बहुत–सी मछलियाँ थीं। तालाब के किनारे एक बगुला रहता था। वह साधु का वेष बनाए हुए बैठा हुआ था। तालाब की मछलियों से अपना पेट भरने का उपाय सोच रहा था।

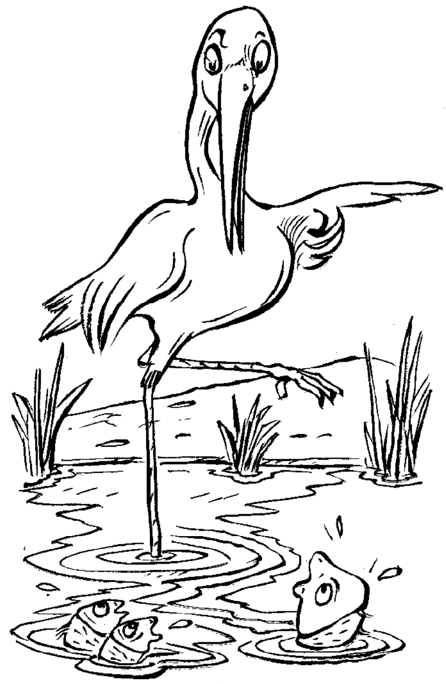

तालाब की मछलियों ने उसे उदास देखा।

उसे साधु जानकर पूछने आई।

वे बोलीं – ''क्या बात है बाबा! आज बहुत उदास हो?''

बगुला बोला– ''बस! तुम्हीं लोगों की चिंता में हूँ।''

''हमारी चिंता में? भला क्यों?'' मछलियाँ बोलीं।

''इस तालाब का पानी दिनों–दिन कम हो रहा है। गर्मी बढ़ रही है।

धीरे–धीरे तुम सब मौत के मुँह में चली जाओगी।''– बगुला गंभीर स्वर में बोला।

''तो हम क्या करें? बाबा, तुम्हीं कोई उपाय बताओ न।'' मछलियाँ ने घबराकर कहा।

''अब एक ही उपाय है। मैं एक–एक करके तुम सबको अपनी चोंच में पकड़कर दूर तालाब में छोड़ आऊँ''।

''लेकिन बाबा! इस दुनिया में आज तक कोई बगुला ऐसा नहीं हुआ जो मछलियों की भलाई के बारे में सोचे। भला हम कैसे तुम पर भरोसा कर लें।''

बगुले ने अब अपनी चाल चली– ''तुम ठीक कहती हो। जिस तरह एक गंदी मछली सारे तालाब को गंदा कर देती है, उसी तरह एक बगुले ने सारे बगुलों को बदनाम कर रखा है। तुम लोग ऐसा करो, किसी एक मछली को मेरे साथ भेजो। मैं उसे तालाब दिखा लाऊँगा। तुम उससे पूछ लेना। यदि विश्वास हो जाए तो एक–एक करके मेरे साथ चलना।''

मछलियाँ बगुले की चाल में आ गईं। उन्होंने एक मछली बगुले के साथ भेज दी। बगुला उसे बड़ा तालाब दिखाकर ले आया। उस मछली ने बड़े तालाब का बड़ा सुंदर वर्णन किया। उसे सुनकर सभी मछलियाँ चलने को तैयार हो गईं।

अब बगुला उस तालाब से एक मछली लाता। उसे मारकर खा जाता। धीरे–धीरे उसने तालाब की बहुत सारी मछलियाँ खा लीं। वह मोटा भी हो गया था। मछलियों को शंका हुई। उन्होंने केकड़े से सलाह की। कहीं बगुला हमें धोखा तो नहीं दे रहा। केकड़े ने कहा– ''आज मैं जाऊँगा। बगुला–भगत कैसे हैं? पता चल जाएगा।''

केकड़े ने बगुले से कहा– ''बगुला महाराज। आज मछलियाँ नहीं जाएँगी।

आज मुझे ले चलो।'' बगुला बोला– ''ठीक है! तुम्हीं चलो।'' केकड़ा बोला– ''लेकिन एक शर्त है।'' बगुला बोला– ''कैसी शर्त?'' '' मैं तुम्हारी चोंच में दबकर नहीं जाऊँगा। कहो तो गर्दन पर बैठकर चलूँ।'' बगुला तैयार हो गया।

बगुले ने सोचा– तू किसी तरह तालाब से बाहर तक तो चल। फिर मै खा लूँगा।

इस तरह उसने केकड़े की बात मान ली।

बगुला अपनी गर्दन पर केकड़े को बैठाकर चल पड़ा। जैसे ही वह उसे तालाब के बाहर कुछ दूर ले गया, केकड़े ने मछलियों की हड्डियों का ढेर देखा। वह पूरी बात समझ गया। उसने बगुले की गर्दन में अपने काँटे गड़ाए और बोला, ''दुष्ट, तू मुझे सीधी तरह वापिस तालाब के किनारे ले चल...... या तेरी गर्दन दबाऊँ।''

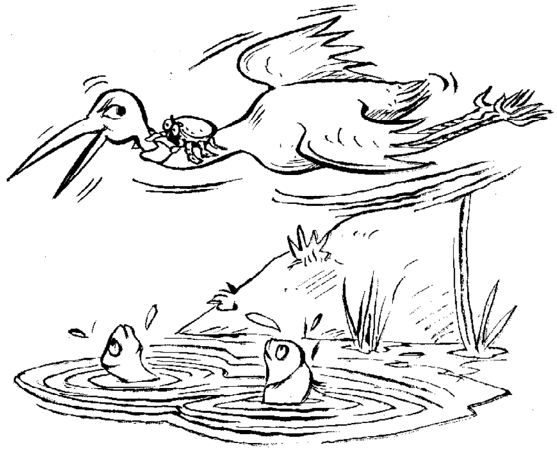

बगुला दर्द से कराह उठा। वह केकड़े को चुपचाप तालाब के किनारे ले आया। जैसे ही वे तालाब के किनारे पहुँचे, केकड़े ने बगुले की गर्दन दबा दी। बगुला छटपटा कर मर गया। केकड़ा तालाब के अंदर चला गया।

कुछ प्रश्न :

यहाँ इस कहानी से संबंधित कुछ प्रश्न दिए गए हैं। आप इन प्रश्नों को कीजिए व बताइए कि क्या व्याकरण सिखाने में ये प्रश्न मददगार होंगे? कैसे?

- अ. मछली, बगुला, केकड़ा के क्या–क्या रुप कहानी में आए हैं? उन्हें लिखिए।

  ब. इन रुपों में क्या अन्तर है?
- कहानी में से ऐसे वाक्य ढूँढ़िये जिनके अन्त में यह ''?'' चिह्न आया है इन वाक्यों की क्या विशेषता है?
- अब बगुला उस तालाब से मछली लाता। उसे मारकर खा जाता। धीरे–धीरे उसने तालाब की बहुत सारी मछलियाँ खा लीं। वह मोटा भी हो गया था।

  उसने, वह शब्दों का उपयोग बगुला शब्द की जगह किया गया है। कहानी में मछली, केकड़ा इत्यादि शब्दों के स्थान पर और कौन–कौन से शब्द उपयोग में लिए गए हैं बताइए?
- जाएँगी, जाऊँगा, जाओगी इत्यादि शब्द कहानी में आए हैं। ये सभी शब्द 'जा' से संबंधित हैं आप इस तरह के और शब्द सोचिए व इस जाल को पूरा कीजिए।

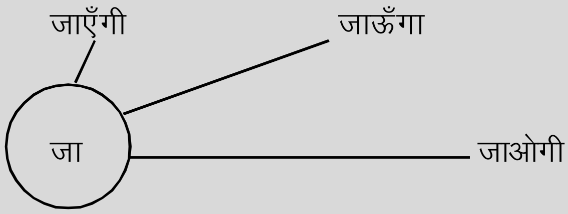

ऐसा ही जाल ''खा'' शब्द के लिए भी बनाइए।

अब इन प्रश्नों को भी कीजिए व ऐसे ही और प्रश्न बनाइए।

- सावन में जब बरसेगी घटाएँ घिरकर होगी हरी धरती बंजर
  - (i) उपर्युक्त वाक्य में सही स्थान पर विराम चिह्न लगाइए।
  - (ii) आप यह विराम चिह्न कितनी तरह से लगा सकते हैं?
  - (iii) क्या हर परिस्थिति में कथन का अर्थ एक ही है?
  - (iv) कौन सा अर्थ कथन का आशय प्रस्तुत करता प्रतीत होता है?
- नीचे तीन तरह के टेक्स्ट – एक पहेली, एक चुटुकला व एक समाचार (गप्प आधारित दिए गए हैं।) इनको ध्यान से पढ़िए व फिर दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

टेक्स्ट – 1

मेरी नानी कोयला खाती

मैं खाती हूँ बिजली

मम्मी मेरी डीज़ल पीती

यही कहानी पिछली

टेक्स्ट – 2

दीपू – पिताजी आपने एक सप्ताह पहले जो गुलाब की कलम लगाई थी उसमें अभी तक जड़ें नहीं निकली हैं।

पितजी – तुम्हे कैसे पता?

दीपू – क्योंकि में उसे रोज उखाड़कर देखता हूँ।

टेक्स्ट – 3

कल रात राजधानी में जोरदार बारिश हुई। सरकार ने सभी गंजों को घर में रहने की हिदायत दी।

सरगुजा क्षेत्र में हाथियों के बढ़ते हुए आतंक को देखते हुए सरकार ने चार मच्छरों को वहाँ भेजा है। जैसे ही गड़बड़ी फैलाने वाले हाथी वहाँ नज़र आएँगे मच्छर उन्हें उठाकर मैत्री बाग वाले चिड़ियाघर में ले आएँगे।

तीनों टेक्स्ट की वाक्य रचना को देखिए क्या आपको उनमें कोई फर्क नज़र आता है?

निम्नलिखित आधार काम में ले सकते हैं–

(i) शब्दों का स्थान यथा पहेली में व अन्य टेक्स्ट में।

(ii) कौन से काल का प्रयोग है व क्यों?

(iii) विराम चिह्नों का उपयोग इत्यादि।

आप भी बच्चों के लिए कुछ ऐसे सवाल बनाइए जिनसे उन्हें व्याकरण के नियम खोजने व समझने में मदद मिले।

सारांश

इस इकाई में हमने व्याकरण क्या है? भाषा व व्याकरण के बीच संबंध क्या है? इस बारे में बात की। हमने यह भी समझने का प्रयास किया कि बच्चे को व्याकरण कैसे सिखाएँ? जैसा कि आप जानते हैं कि स्कूल आने से पहले बच्चे अपनी भाषा अच्छी तरह से बोलना जानते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि वे अपनी भाषा का व्याकरण भी जानते हैं, नहीं तो वे उस भाषा का प्रयोग ही नहीं कर पायेंगे। यह इकाई इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए यह समझने में मदद करती है कि यदि बच्चे में भाषा सीखने की इतनी क्षमता है तो उसके साथ भाषा सीखने–सिखाने का कार्य कैसे हो? चाहे वह उसकी अपनी भाषा हो अथवा नई भाषा। नई भाषा सीखने के लिए भी यह जरूरी है बच्चे उस भाषा का अधिक से अधिक प्रयोग करें, बिना किसी रोकटोक के, हिचकिचाहट के, बिना डरे कि गलती होने पर कोई डाँटेगा या हँसेगा। और जब वे भाषा का प्रयोग करने लगे तब उन्हें उसके व्याकरण से भी रुबरु होने का मौका मिले। व्याकरण से परिचय का सबसे सरल तरीका है। सीखने वाला उसके वाक्यों से खेलें व उसमें विद्यमान व्यवस्था व नियमों को देखें।

सिर्फ पढ़ने के लिए – साहित्य की अनुभूति

जो बीत गई (कविता)

जो बीत गई सो बात गई!
जीवन में एक सितारा था,
माना, वह बेहद प्यारा था,
वह डूब गया तो डूब गया;
अंबर के आनन को देखो,
कितने इसके तारे टूटे,
कितने इसके प्यारे छूटे,
जो छूट गए फिर कहाँ मिले;
पर बोलो टूटे तारों पर
कब अंबर शोक मनाता है!
जो बीत गई सो बात गई!
जीवन में वह था एक कुसुम,
थे उस पर नित्य निछावर तुम,
वह सूख गया तो सूख गया;
मधुवन की छाती को देखो,
सूखीं कितनी इनकी कलियाँ,
मुरछाईं फिर कहाँ वल्लरियाँ,
जो मुरछाईं फिर कहाँ खिली;
पर बोलो सूखे फूलों पर
कब मधुवन शोर मचाता है;
जो बीत गई सो बात गई!

हरिवंशराय बच्चन

छोटा जादूगर (कहानी)

कार्निवल के मैदान में बिजली जगमगा रही थी। हँसी और विनोद का कलनाद गूंज रहा था। मैं खड़ा था। उस छोटे फुहारे के पास, जहाँ एक लड़का चुपचाप शराब पीने वालों को देख रहा था। उसके गले में फटे कुरते के ऊपर से एक मोटी सी सूत की रस्सी पड़ी थी और जेब में कुछ ताश के पत्ते थे। उसके मुँह पर गंभीर विषाद के साथ धैर्य की रेखा थी। मैं उसकी ओर न जाने क्यों आकर्षित हुआ। उसके अभाव में भी संपूर्णता थी। मैंने पूछा, ''क्यों जी, तुमने इसमें क्या देखा?''

''मैंने सब देखा है। यहाँ चूड़ी फेंकते हैं। खिलौनों पर निशाना लगाते हैं। तीर से नंबर छेदते हैं। मुझे तो खिलौनों पर निशाना लगाना अच्छा मालूम हुआ। जादूगर तो बिलकुल निकम्मा है। उससे अच्छा तो ताश का खेल मैं ही दिखा सकता हूँ।'' उसने बड़ी प्रगल्भता से कहाँ उसकी वाणी में कहीं रुकावट न थी।

मैंने पूछा, ''और उस परदे में क्या है? वहाँ तुम गए थे।''

''नहीं, वहाँ मैं नहीं जा सका। टिकट लगता है।''

मैंने कहा, ''तो चल, मैं वहाँ पर तुमको लिवा चलूँ।'' मैंने मन–ही–मन कहा, ''भाई! आज के तुम्हीं मित्र रहे।''

उसने कहा, ''वहाँ जाकर क्या कीजिएगा? चलिए, निशाना लगाया जाएँ''

मैंने उससे सहमत होकर कहा, ''तो फिर चलो, पहले शरबत पी लिया जाएँ'' उसने स्वीकार–सूचक सिर हिला दिया।

मनुष्यों की भीड़ से जाड़े की संध्या भी वहाँ गर्म हो रही थी। हम दोनों शरबत पीकर निशाना लगाने चले। राह में ही उससे पूछा, ''तुम्हारे और कौन हैं?''

''माँ और बाबू जी।''

''उन्होंने तुमको यहाँ आने के लिए मना नहीं किया?''

''बाबू जी जेल में हैं।''

''क्यों?''

''देश के लिए।'' वह गर्व से बोला।

''और तुम्हारी माँ?''

''वह बीमार है।''

''और तुम तमाशा देख रहे हो?''

उसके मुँह पर तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी। उसने कहा, ''तमाशा देखने नहीं दिखाने निकला हूँ। कुछ पैसे ले जाऊँगा, तो माँ को पथ्य दूँगा। मुझे शरबत न पिलाकर आपने मेरा खेल देखकर मुझे कुछ दे दिया होता, तो मुझे अधिक प्रसन्नता होती!''

मैं आश्चर्य से उस तेरह–चौदह वर्ष के लड़के को देखने लगा।

''हाँ, मैं सच कहता हूँ बाबू जी? माँ जी बीमार है; इसलिए मैं नहीं गया।''

''कहाँ?''

''जेल में! जब कुछ लोग खेल–तमाशा देखते ही हैं, तो मैं क्यों न दिखाकर माँ की दवा करूँ और अपना पेट भरूँ।''

मैंने दीर्घ निश्वास लिया। चारों ओर बिजली के लट्टू नाच रहे थे। वह व्यग्र हो उठा। मैंने उससे कहा, ''अच्छा चलो, निशाना लगाया जाएँ''

हम दोनों उस जगह पर पहुँचे, जहाँ खिलौने को गेंद से गिराया जाता था। मैंने बारह टिकट खरीदकर उस लड़के को दिए।

वह निकला पक्का निशानेबाज़। उसका कोई गेंद खाली नहीं गया। देखने वाले दंग रह गए। उसने बारह खिलौनों को बटोर लिया; लेकिन उठाता कैसे? कुछ मेरे रूमाल में बँधे, कुछ जेब में रख लिए गए?

लड़के ने कहा, ''बाबू जी, आपको तमाशा दिखाऊँगा। बाहर आइए, मैं चलता हूँ।'' वह नौ–दो ग्यारह हो गया। मैंने मन–ही–मन कहा, ''इतनी जल्दी आँख बदल गई।''

मैं घूमकर पान की दुकान पर आ गया। पान खाकर बड़ी देर तक इधर–उधर टहलता देखता रहा झूले के पास लोगों का ऊपर–नीचे आना देखने लगा। अकस्मात किसी ने ऊपर के हिंडोले से पुकारा, ''बाबू जी!''

मैंने पूछा, ''कौन?''

''मैं हूँ छोटा जादूगर।''

कलकत्ते के सुरम्य बोटनिकल–उद्यान में लाल कमलिनी से भरी हुई एक छोटी–सी–झील के किनारे घने वृक्षों की छाया में अपनी मंडली के साथ बैठा हुआ मैं जलपान कर रहा था। बातें हो रही थीं। इतने में वही छोटा जादूगर दिखाई पड़ा। हाथ में चारखाने की खादी का झोला। साफ जाँघिया और आधी बाँहों का कुरता। सिर पर मेरी रूमाल सूत की रस्सी से बँधी हुई थी। मस्तानी चाल से झूमता हुआ आकर कहने लगा, ''बाबू जी, नमस्ते! आज कहिए, तो खेल दिखाऊँ।''

''नहीं जी, अभी हम लोग जलपान कर रहे हैं।''

''फिर इसके बाद क्या गाना–बजाना होगा, बाबू जी?''

''नहीं जी, तुमको...'', क्रोध से मैं कुछ और कहने जा रहा था। श्रीमती ने कहा, ''दिखलाओ जी, तुम तो अच्छे आए भला, कुछ मन तो बहले।'' मैं चुप हो गया, क्योंकि श्रीमती की वाणी में वह माँ की–सी मिठास थी, जिसके सामने किसी भी लड़के को रोका नहीं जा सकता। उसने खेल आरंभ किया।

उस दिन कार्निवल के सब खिलौने उसके खेल में अपना अभिनय करने लगे। भालू मनाने लगा। बिल्ली रूठने लगी। बंदर घुड़कने लगा। गुड़िया का ब्याह हुआ। गुड्डा वर काना निकला। लड़के की वाचालता से ही अभिनय हो रहा था। सब हँसते–हँसते लोट–पोट हो गए।

मैं सोच रहा था। बालक को आवश्यकता ने कितना शीघ्र चतुर बना दिया। यही तो संसार है। ताश के सब पत्ते लाल हो गए। फिर सब काले हो गए। गले की सूत की डोरी टुकड़े–टुकड़े होकर जुड़ गई। लट्टू अपने से नाच रहे थे। मैंने कहा, ''अब हो चुका, अपना खेल बटोर लो, हम लोग भी अब जाएँगे।''

श्रीमती जी ने धीरे से उसे एक रुपया दे दिया। वह उछल उठा।

मैंने कहा, ''लड़के!''

''छोटा जादूगर कहिए। यही मेरा नाम है। इसी से मेरी जीविका है।''

मैं कुछ बोलना ही चाहता था कि श्रीमती ने कहा, ''अच्छा, तुम इस रुपए से क्या करोगे?''

''पहले भर पेट पकौड़ी खाऊँगा। फिर एक सूती कंबल लूँगा।''

मेरा क्रोध अब लौट आया। मैं अपने पर बहुत क्रुद्ध होकर सोचने लगा, ओह! कितना स्वार्थी हूँ मैं। उसके एक रुपए पाने पर मैं ईर्ष्या करने लगा था न!

वह नमस्कार करके चला गया। हम लोग लता कुंज देखने के लिए चले। उस छोटे से बनावटी जंगल में संध्या सांय–सांय करने लगी थी। अस्ताचलगामी सूर्य की अंतिम किरण वृक्षों की पत्तियों से बिदाई ले रही थी। एक शांत वातावरण था। हम लोग धीरे–धीरे मोटर से हबड़ा की ओर आ रहे थे। रह–रहकर छोटा जादूगर स्मरण होता था। सचमुच वह एक झोंपड़ी के पास कंबल कंधे पर डाले खड़ा था। मैंने मोटर रोककर उससे पूछा, ''तुम यहाँ कहाँ?''

''मेरी माँ यहीं है न। अब उसे अस्पतालवालों ने निकाल दिया है।'' मैं उतर आया। उस झोंपड़ी में देखा, तो एक स्त्री चिथड़ों से लदी हुई काँप रही थी।

छोटे जादूगर ने कंबल ऊपर से डालकर उसके शरीर से चिमटते हुए कहा, ''माँ।''

मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े।

बड़े दिन की छुट्टी बीत चली थी। मुझे अपने ऑफिस में समय से पहुँचना था। कलकत्ते से मन ऊब गया था। फिर भी चलते–चलते एक बार उस उद्यान को देखने की इच्छा हुई। साथ–ही–साथ जादूगर भी दिखाई पड़ जाता, तो और भी... मैं उस दिन अकेले ही चल पड़ा। जल्द लौट आना था।

दस बज चुका था। मैंने देखा कि उस निर्मल धूप में सड़क के किनारे एक कपड़े पर छोटे जादूगर का रंगमंच सजा था। मोटर रोककर उतर पड़ा। वहाँ बिल्ली रूठ रही थी। भालू मनाने चला था। ब्याह की तैयारी थी; यह सब होते हुए भी जादूगर की वाणी में वह प्रसन्नता की तरी नहीं थी। जब वह औरों को हँसाने की चेष्टा कर रहा था, तब जैसे स्वयं कॉप जाता था। मानो उसके रोएँ रो रहे थे। मैं आश्चर्य से देख रहा था। खेल हो जाने पर पैसा बटोरकर उसने भीड़ में मुझे देखा। वह जैसे क्षणभर के लिए स्फूर्तिमान हो गया। मैंने उसकी पीठ थपथपाते हुए पूछा, ''आज तुम्हारा खेल जमा क्यों नहीं?''

''माँ ने कहा है कि आज तुरंत चले आना। मेरी घड़ी समीप है।'' अविचल भाव से उसने कहाँ

''तब भी तुम खेल दिखलाने चले आए!'' मैंने कुछ क्रोध से कहां। मनुष्य के सुख–दुख का माप अपना ही साधन तो है। उसी के अनुपात से वह तुलना करता है।

उसके मुँह पर वही परिचित तिरस्कार की रेखा फूट पड़ी। उसने कहा, ''क्यों न आता!'' और कुछ अधिक कहने में जैसे वह अपमान का अनुभव कर रहा था।

क्षण–भर में मुझे अपनी भूल मालूम हो गई। उसके झोले को गाड़ी में फेंककर उसे भी बैठाते हुए मैंने कहा, ''जल्दी चलो।'' मोटरवाला मेरे बताए हुए पथ पर चल पड़ा।

कुछ ही मिनटों में मैं झोंपड़े के पास पहुँचा। जादूगर दौड़कर झोंपड़े में माँ–माँ पुकारते हुए घुसा। मैं भी पीछे था; किंतु स्त्री के मुँह से, ''बे....' निकलकर रह गया। उसके दुर्बल हाथ उठकर गिर गए। जादूगर उससे लिपटा रो रहा था, मैं स्तब्ध था। उस उज्जवल धूप में समग्र संसार जैसे जादू–सा मेरे चारों ओर नृत्य करने लगा।

जयशंकर प्रसाद

पिता के पत्र पुत्री के नाम (पत्र)

यह ख़त जवाहरलाल नेहरु द्वारा अपनी पुत्री इन्दिरा को लिखे गए खतों की एक श्रृंखला में से एक है। ये ख़त पिता जवाहरलाल ने तब लिखे थे जब वे इलाहाबाद में थे और 10 साल की इन्दिरा मसूरी में थी।

प्रिय इन्दिरा,

अपने पिछले खत में मैंने नए पत्थर–युग के आदमियों का ज़िक्र किया था जो ख़ासकर झीलों के बीच में मकानों में रहते थे। उन लोगों ने बहुत–सी बातों में बड़ी तरक़्क़ी कर ली थी। उन्होंने खेती करने का तरीक़ा निकाला। वे खाना पकाना जानते थे और यह भी जानते थे कि जानवरों को पाल कर कैसे काम लिया जा सकता है। ये बातें कई हज़ार वर्ष पुरानी हैं और हमें उनका हाल बहुत कम मालूम है लेकिन शायद आज दुनिया में आदमियों की जितनी कौमें हैं उनमें से अकसर उन्हीं नए पत्थर–युग के आदमियों की सन्तान हैं। यह तो तुम जानती ही हो कि आजकल दुनिया में गोरे, काले, पीले, भूरे सभी रंगों के आदमी हैं। लेकिन सच्ची बात तो यह है कि आदमियों की क़ौमों को इन्हीं चार हिस्सों में बाँट देना आसान नहीं है। क़ौमों में ऐसा मेलजोल हो गया है कि उनमें से बहुतों के बारे में यह बतलाना कि किस क़ौम में से हैं बहुत मुश्किल है। वैज्ञानिक लोग आदमियों के सिरों को नापकर कभी–कभी उनकी क़ौम का पता लगा लेते हैं, और भी ऐसे कई तरीके हैं जिनसे इस बात का पता चल सकता है।

अब सवाल यह होता है कि ये तरह–तरह की क़ौमें कैसे पैदा हुईं? अगर सब के सब एक ही कौम के हैं तो उनमें आज इतना फ़र्क़ क्यों है? जर्मन और हब्शी में कितना फर्क है। एक गोरा है और दूसरा बिलकुल काला। जर्मन के बाल हल्के रंग के और लम्बे होते हैं मगर हब्शी के बाल काले, छोटे और घुँघराले होते हैं। चीनी को देखो तो वह इन दोनों से अलग है। तो यह बतलाना बहुत मुश्किल है कि यह फ़र्क़ क्योंकर पैदा हो गया हाँ इसके कुछ कारण हमें मालूम हैं। मैं तुम्हें पहले ही बतला चुका हूँ कि ज्यों–ज्यों जानवरों का रंग–ढंग आसपास की चीज़ों के मुताबिक़ होता गया उनमें धीरे–धीरे तब्दीलियाँ पैदा होती गईं। हो सकता है कि जर्मन और हब्शी अलग–अलग क़ौमों से पैदा हुए हों लेकिन किसी न किसी ज़माने में उनके पुरखे एक ही रहे होंगे। उनमें जो फर्क पैदा हुआ उसकी वजह या तो यह हो सकती है कि उन्हें अपना रहन–सहन अपने पास पड़ोस की चीज़ों के मुताबिक़ बनाना पड़ा या यह कि बाज़ जानवरों की तरह कुछ जातियों ने औरों से ज़्यादा आसानी के साथ अपना रहन–सहन बदल दिया हो।

मैं तुमको इसकी एक मिसाल देता हूँ। जो आदमी उत्तर के ठंडे और बर्फीले मुल्कों में रहता है उसमें सर्दी बरदाश्त करने की ताक़त पैदा हो जाती है। इस ज़माने में भी इस्कीमो जातिवाले उत्तर के बर्फीले मैदानों में रहते हैं और वहाँ की भयानक सर्दी बरदाश्त करते हैं। अगर वे हमारे जैसे गर्म मुल्क में आएँ तो शायद जीते ही न रह सकें। और चूँकि वे दुनिया के और हिस्सों से अलग हैं और उन्हें बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, उन्हें दुनिया की उतनी बातें नहीं मालूम हुईं जितनी और हिस्सों के रहनेवाले जानते हैं। जो लोग अफ़्रीका या विषुवत रेखा के पास रहते हैं, जहाँ बड़ी सख़्त गर्मी पड़ती है, इस गर्मी के आदी हो जाते हैं। इसी तेज़ धूप के सबब से उनका रंग काला हो जाता है। यह तो तुमने देखा ही है कि अगर तुम समुद्र के किनारे या कहीं और देर तक धूप में बैठो तो तुम्हारा चेहरा साँवला हो जाता है। अगर चन्द हफ्तों तक धूप खाने से आदमी कुछ काला पड़ जाता है तो वह आदमी कितना काला होगा जिसे हमेशा धूप ही में रहना पड़ता है। तो फिर जो लोग सैकड़ों वर्षों तक गर्म मुल्कों में रहें और वहाँ रहते उनकी कई पीढ़ियाँ गुज़र जाएँ उनके काले

हो जाने में क्या ताज्जुब है। तुमने हिन्दुस्तानी किसानों को दोपहरी की धूप में खेतों में काम करते देखा है। वे ग़रीबी की वजह से न ज़्यादा कपड़े पहन सकते हैं, न पहनते हैं। उनकी सारी देह धूप में खुली रहती है और इसी तरह उनकी पूरी उम्र गुज़र जाती है। फिर वे क्यों न काले हो जाएँ।

इससे तुम्हें यह मालूम हुआ कि आदमी का रंग उस आबोहवा की वजह से बदल जाता है जिसमें वह रहता है। रंग से आदमी की लियाकत, भलमनसी या ख़बसूरती पर कोई असर नहीं पड़ता। अगर गोरा आदमी किसी गर्म मुल्क में बहुत दिनों तक रहे और धूप से बचने के लिए टट्ट्यों की आड़ में या पंखों के नीचे न छिपा बैठा रहे, तो वह ज़रूर साँवला हो जायगा। तुम्हें मालूम है कि हम लोग कश्मीरी हैं और सौ साल पहले हमारे पुरखे कश्मीर में रहते थे। कश्मीर में सभी आदमी, यहाँ तक कि किसान और मज़दूर भी, गोरे होते हैं। इसका सबब यही है कि कश्मीर की आबोहवा सर्द है। लेकिन वही कश्मीरी जब हिन्दुस्तान के दूसरे हिस्सों में आते हैं, जहाँ ज़्यादा गर्मी पड़ती है, कई पुश्तों के बाद साँवले हो जाते हैं। हमारे बहुत से कश्मीरी भाई खूब गोरे हैं और बहुत से बिलकुल साँवले भी हैं। कश्मीरी जितने ज़्यादा दिनों तक हिन्दुस्तान के इस हिस्से में रहेगा उसका रंग उतना ही साँवला होगा।

अब तुम समझ गईं कि आबोहवा ही की वजह से आदमी का रंग बदल जाता है। यह हो सकता है कि कुछ लोग गर्म मुल्क में रहें लेकिन मालदार होने की वजह से उन्हें धूप में काम न करना पड़े, वे बड़े–बड़े मकानों में रहें और अपने रंग को बचा सकें। अमीर खानदान इस तरह कई पीढ़ियों तक अपने रंग को आबोहवा के असर से बचाए रख सकता है लेकिन अपने हाथों से काम न करना और दूसरों की कमाई खाना ऐसी बात नहीं जिस पर हम गुरूर कर सकें। तुमने देखा है कि हिन्दुस्तान में कश्मीर और पंजाब के आदमी आमतौर पर गोरे होते हैं लेकिन ज्यों–ज्यों हम दक्षिण में जावें वे काले होते जाते हैं। मद्रास और लंका में ये बिलकुल काले होते हैं। तुम ज़रूर ही समझ जाओगी कि इसका सबब आबोहवा है। क्योंकि दक्षिण की तरफ़ हम जितना ही बढ़ें विषुवत–रेखा के पास पहुँचते जाते हैं ओर गर्मी बढ़ती जाती है। यह बिलकुल ठीक है और यही एक ख़ास वजह है कि हिन्दुस्तानियों के रंग में इतना फ़र्क़ है। हम आगे चलकर देखेंगे कि यह फ़र्क़ कुछ इस वजह से भी है कि शुरू में जो कौमें हिन्दुस्तान में आकर बसी थीं उनमें आपस में फ़र्क़ था। पुराने ज़माने में हिन्दुस्तान में बहुत सी क़ौमें आईं और हालाँकि बहुत दिनों तक उन्होंने अलग रहने की कोशिश की लेकिन वे आख़िर में बिना मिले न रह सकीं। आज किसी हिन्दुस्तानी के बारे में यह कहना मुश्किल है कि वह पूरी तरह से किसी एक असली क़ौम का है।

तुम्हारे पिताजी

जवाहरलाल

नमक का दारोगा (कहानी)

जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वर प्रदत्त वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया तो लोग चोरी–छिपे इसका व्यापार करने लगे। अनेक प्रकार के छल–प्रपंचों का सूत्रपात हुआ, कोई घूस से काम निकालता था, कोई चालाकी से। अधिकारियों के पौ–बारह थे। पटवारीगिरी का सर्वसम्मानित पद छोड़–छोड़कर लोग इस विभाग की बरकंदाज़ी करते थे। दारोगा पद के लिए तो वकीलों का भी जी ललचाता था। यह वह समय था जब अंग्रेज़ी शिक्षा और ईसाई मत को लोग एक ही वस्तु समझते थे। फारसी का प्राबल्य था। प्रेम की कथाएँ और शृंगार रस के काव्य पढ़कर फारसी दो लोग सर्वोच्च पदों पर नियुक्त हो जाया करते थे।

मुंशी वंशीधर भी जुलेखा की विरह कथा समाप्त करके मजनूं और फरहाद के प्रेम–वृत्तांत को नल और नील की लड़ाई और अमेरिका के आविष्कार से अधिक महत्व की बातें समझते हुए रोज़गार की खोज में निकले।

उनके पिता एक अनुभवी पुरुष थे। समझाने लगे, बेटा! घर की दुर्दशा देख रहे हो। ऋण से दबे हुए हैं। लड़कियाँ हैं, वह घास–फूस की तरह बढ़ती चली जाती हैं। मैं कगारे पर का वृक्ष हो रहा हूँ, न मालूम कब गिर पड़ूँ। अब तुम्हीं घर के मालिक मुख्तार हो। नौकरी में ओहदे की ओर ध्यान मत देना, यह तो पीर का मज़ार है। निगाह चढ़ावे और चादर पर रखनी चाहिए। ऐसा काम ढूँढना जहाँ कुछ ऊपरी आय हो। मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है, जो एक दिन दिखाई देता है और घटते–घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है। वेतन मनुष्य देता है, इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती। ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसकी बरकत होती, है, तुम स्वयं विद्वान हो, तुम्हें क्या समझाऊँ। इस विषय में विवेक की बड़ी आवश्यकता है। मनुष्य को देखो, उसकी आवश्यकता को देखो और अवसर देखो, उसके उपरांत जो उचित समझो, करो। गरजवाले आदमी के साथ कठोरता करने में लाभ–ही–लाभ है। लेकिन बेगरज को दाँव पर पाना ज़रा कठिन है। इन बातों को निगाह में बाँध लो। यह मेरी जन्मभर की कमाई है।

इस उपदेश के बाद पिता जी ने आशीर्वाद दिया। वंशीधर आज्ञाकारी पुत्र थे। ये बातें ध्यान से सुनीं और तब घर से चल खड़े हुए। इस विस्तृत संसार में उनके लिए धैर्य अपना मित्र, बुद्धि अपनी पथ–प्रदर्शक और आत्मावलंबन ही अपना सहायक था। लेकिन अच्छे शकुन से चले थे, जाते ही जाते नमक विभाग के दारोगा पद पर प्रतिष्ठित हो गए। वेतन अच्छा और ऊपरी आय का तो ठिकाना ही न था। वृद्ध मुंशी जी को सुख–संवाद मिला तो फूले न समाए। महाजन कुछ नरम पड़े, कलवार की आशालता लहई–लट्टा। पड़ोसियों के हृदय में शूल उठने लगे।

जाड़े के दिन थे और रात का समय। नमक के सिपाही, चौकीदार नशे में मस्त थे। मुंशी वंशीधर को यहाँ आए अभी छह महीनों से अधिक न हुए थे, लेकिन इस थोड़े समय में ही उन्होंने अपनी कार्यकुशलता और उत्तम आचार से अफसरों को मोहित कर लिया था। अफसर लोग उनपर बहुत विश्वास करने लगे। नमक के दफ्तर से एक मील पूर्व की ओर जमुना बहती थी, उस पर नावों का एक पुल बना हुआ था। दारोगा जी किवाड़ बंद किए मीठी नींद सो रहे थे। अचानक आँख खुली तो नदी के प्रवाह की जगह गाड़ियों की गड़गड़ाहट तथा मल्लाहों का कोलाहल सुनाई दिया। उठ बैठे। इतनी रात गए गाड़ियाँ क्यों नदी के पार जाती हैं? अवश्य कुछ–न–कुछ गोलमाल है। तर्क ने भ्रम को पुष्ट किया। वरदी पहनी, तमंचा जेब में रखा और बात–की–बात में घोड़ा बढ़ाए हुए पुल पर आ पहुँचे। गाड़ियों की एक लंबी कतार पुल के पार जाती देखी। डाँटकर पूछा, ''किसकी गाड़ियाँ हैं?''

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा। आदमियों में कुछ कानाफूसी हुई, तब आगे वाले ने कहा, ''पंडित अलोपीदीन की।''

''कौन पंडित अलोपीदीन!''

''दातागंज के।''

मुंशी वंशीधर चौंके। पंडित अलोपीदीन इस इलाके के सबसे प्रतिष्ठित जमींदार थे। लाखों रुपयों का लेन–देन करते थे, इधर छोटे से बड़े कौन ऐसे थे जो उनके ऋणी न हों। व्यापार भी लंबा–चौड़ा था। बड़े चलते–पुरजे आदमी थे। अंग्रेज अफसर इनके इलाके में शिकार खेलने आते थे और उनके मेहमान होते। बारहों मास सदाव्रत चलता था।

मुंशजी ने पूछा, ''गाड़ियाँ कहाँ जाएँगी?'' उत्तर मिला, ''कानपुर।'' लेकिन इस प्रश्न पर कि इनमें क्या है, सन्नाटा छा गया। दारोगा साहब का संदेह और भी बढ़ा। कुछ देर तक उत्तर की बाट देखकर वह ज़ोर से बोले, ''क्या गूँगे हो गए हो? हम पूछते हैं, इनमें क्या लदा है?''

जब इस बार भी कोई उत्तर न मिला तो उन्होंने घोड़े को एक गाड़ी से मिलाकर बोरे को टटोला। भ्रम दूर हो गया। यह नमक के ढेले थे।

पंडित अलोपीदीन अपने सजीले रथ पर सवार, कुछ सोते, कुछ जागते चले आते थे। अचानक कई गाड़ीवानों ने घबराए हुए आकर जगाया और बोले, ''महाराज! दारोगा ने गाड़ियाँ रोक दी हैं और घाट पर खड़े आपको बुलाते हैं।''

पंडित अलोपीदीन का लक्ष्मी जी पर अखंड विश्वास था। वह कहा करते थे कि संसार का तो कहना ही क्या, स्वर्ग में भी लक्ष्मी का ही राज्य है। उनका यह कहना यथार्थ ही था। न्याय और नीति सब लक्ष्मी के ही खिलौने हैं, इन्हें वह जैसे चाहती हैं नचाती हैं। लेटे–ही–लेटे गर्व से बोले, चलो हम आते हैं। यह कहकर पंडित जी ने बड़ी निश्चिंतता से पान के बीड़े लगाकर खाए। फिर लिहाफ ओढ़े हुए दारोगा के पास आकर बोले, ''बाबू जी आशीर्वाद! कहिए, हमसे ऐसा कौन–सा अपराध हुआ कि गाड़ियाँ रोक दी गईं। हम ब्राह्मणों पर तो आपकी कृपा दृष्टि रहनी चाहिए।''

वंशीधर रुखाई से बोले, ''सरकारी हुक्म!''

पंडित अलोपीदीन ने हँसकर कहा, ''हम सरकारी हुक्म को नहीं जानते और न सरकार को। हमारे सरकार तो आप ही हैं। हमारा और आपका तो घर का मामला है, हम कभी आपसे बाहर हो सकते हैं? आपने व्यर्थ का कष्ट उठाया। यह हो ही नहीं सकता कि इधर से जाएँ और इस घाट के देवता को भेंट न चढ़ावें। मैं तो आपकी सेवा में स्वयं ही आ रहा था।'' वंशीधर पर ऐश्वर्य की मोहिनी वंशी का कुछ प्रभाव न पड़ा। ईमानदारी की नई उमंग थी। कड़क कर बोले, ''हम उन नमकहरामों में नहीं हैं जो कौड़ियों पर अपना ईमान बेचते फिरते हैं। आप इस समय हिरासत में हैं। आपका कायदे के अनुसार चालान होगा। बस मुझे अधिक बातों की फुर्सत नहीं है। जमादार बदलू सिंह! तुम इन्हें हिरासत में ले चलो, मैं हुक्म देता हूँ।''

पंडित अलोपीदीन स्तंभित हो गए। गाड़ीवानों में हलचल मच गई। पंडित जी के जीवन में कदाचित् यह पहला ही अवसर था कि पंडित को ऐसी कठोर बातें सुननी पड़ीं। बदलू सिंह आगे बढ़ा, किंतु रोब के मारे यह साहस न हुआ कि उनका हाथ पकड़ सके। पंडित जी ने धर्म को धन का ऐसा निरादर करते कभी न देखा था। विचार किया कि यह अभी उद्दंड लड़का है। माया–मोह के जाल में अभी नहीं पड़ा। अल्हड़ है, झिझकता है। बहुत दीन–भाव से बोले, ''बाबू साहब, ऐसा न कीजिए, हम मिट जाएँगे। इज़्ज़त धूल में मिल जाएगी। हमारा अपमान करने से आपके हाथ में क्या आएगा। हम किसी तरह आपसे बाहर थोड़े ही हैं!''

वंशीधर ने कठोर स्वर में कहा, ''हम ऐसी बातें नहीं सुनना चाहते।''

अलोपीदीन ने जिस सहारे को चट्टान समझ रखा था, वह पैरों के नीचे खिसकता हुआ मालूम हुआ। स्वाभिमान और धन–ऐश्वर्य को कड़ी चोट लगी। किंतु अभी तक धन की सांख्यिक शक्ति का पूरा भरोसा था। अपने मुख्तार से बोले, ''लाला जी, एक हज़ार के नोट बाबू साहब को भेंट करो, आप इस समय भूखे सिंह हो रहे हैं।''

वंशीधर ने गरम होकर कहा, ''एक हज़ार नहीं, एक लाख भी मुझे सच्चे मार्ग से नहीं हटा सकते।'' धर्म की इस बुद्धिहीन दृढ़ता और देव–दुर्लभ त्याग पर मन बहुत झुँझलाया। अब दोनों शक्तियों में संग्राम होने लगा। धन ने उछल–उछल कर आक्रमण करने शुरू किए। एक से पाँच, पाँच से दस, दस से पंद्रह और पंद्रह से बीस हज़ार तक नौबत पहुँची, किंतु धर्म अलौकिक वीरता के साथ इस बहुसंख्यक सेना के सम्मुख अकेला पर्वत की भाँति अटल, अविचलित खड़ा था।

अलोपीदीन निराश होकर बोले, ''अब इससे अधिक मेरा साहस नहीं। आगे आपको अधिकार है।'' वंशीधर ने अपने जमादार को ललकारा। बदलू सिंह मन में दारोगा जी को गालियाँ देता हुआ पंडित अलोपीदीन की ओर

बढ़ा। पंडित जी घबराकर दो–तीन कदम पीछे हट गए। अत्यंत दीनता से बोले, बाबू साहब, ईश्वर के लिए मुझ पर दया कीजिए, मैं पच्चीस हज़ार में निपटारा करने को तैयार हूँ।

'असंभव बात है।'

'तीस हजार पर।'

'क्या चालीस हज़ार पर भी नहीं?'

''बदलू सिंह, उस आदमी को अभी हिरासत में ले लो। अब मैं एक शब्द भी नहीं सुनना चाहता।''

धर्म ने धन को पैरों तले कुचल डाला। अलोपीदीन ने एक हृष्ट–पुष्ट मनुष्य को हथकड़ियाँ लिए हुए अपनी तरफ आते देखा। चारों ओर निराश और कातर दृष्टि से देखने लगे। इसके बाद मूर्छित होकर गिर पड़े।

दुनिया सोती थी पर दुनिया की जीभ जागती थी। सवेरे देखिए तो बालक–वृद्ध सबके मुँह से यही बात सुनाई देती थी। जिसे देखिए वही पंडित जी के इस व्यवहार पर टीका–टिप्पणी कर रहा था, निंदा की बौछारें हो रही थीं, मानो संसार से अब पापी का पाप कट गया। पानी को दूध के नाम से बेचने वाला ग्वाला, कल्पित रोजनामचे भरने वाले अधिकारी वर्ग, रेल में बिना टिकट सफर करने वाले बाबू लोग, जाली दस्तावेज़ बनाने वाले सेठ और साहूकार यह सब–के–सब देवताओं की भाँति गर्दनें चला रहे थे। अब दूसरे दिन पंडित अलोपीदीन अभियुक्त होकर कांस्टेबलों के साथ, हाथों में हथकड़ियाँ, हृदय में ग्लानि और क्षोभ भरे, लज्जा से गर्दन झुकाए अदालत की तरफ चले तो सारे शहर में हलचल मच गई। मेलों में कदाचित आँखें इतनी व्यग्र न होती होंगी। भीड़ के मारे छत और दीवार में कोई भेद न रहा।

किंतु अदालत में पहुँचने की देर थी। पंडित अलोपीदीन इस अगाध वन के सिंह थे। अधिकारी वर्ग उनके भक्त, अमले उनके सेवक, वकील–मुख्तार उनके आज्ञापालक और अरदली, चपरासी तथा चौकीदार तो उनके बिना मोल के गुलाम थे। उन्हें देखते ही लोग चारों तरफ से दौड़े। सभी लोग विस्मित हो रहे थे। इसलिए नहीं कि अलोपीदीन ने क्यों यह कर्म किया बल्कि इसलिए कि वह कानून के पंजे में कैसे आए। ऐसा मनुष्य जिसके पास असाध्य साधन करने वाला धन और अनन्य वाचालता हो, वह कानून के पंजे में आए। प्रत्येक मनुष्य उनसे सहानुभूति प्रकट करता था। बड़ी तत्परता से इस आक्रमण को रोकने के निमित्त वकीलों की एक सेना तैयार की गई। न्याय के मैदान में धर्म और धन में युद्ध ठन गया। वंशीधर चुपचाप खड़े थे। उनके पास सत्य के सिवा न कोई बल था, न स्पष्ट भाषण के अतिरिक्त कोई शस्त्र। गवाह थे, किंतु लोभ से डाँवाडोल।

यहाँ तक कि मुंशी जी को न्याय भी अपनी ओर से कुछ खिंचा हुआ दीख पड़ता था। वह न्याय का दरबार था, परंतु उसके कर्मचारियों पर पक्षपात का नशा छाया हुआ था। किंतु पक्षपात और न्याय का क्या मेल? जहाँ पक्षपात हो, वहाँ न्याय की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मुकदमा शीघ्र ही समाप्त हो गया। डिप्टी मजिस्ट्रेट ने अपनी तजवीज में लिखा। पंडित अलोपीदीन के विरुद्ध दिए गए प्रमाण निर्मूल और भ्रमात्मक हैं। वह एक बड़े भारी आदमी हैं। यह बात कल्पना के बाहर है कि उन्होंने थोड़े लाभ के लिए ऐसा दुस्साहस किया हो। यद्यपि नमक के दारोगा वंशीधर का अधिक दोष नहीं, लेकिन यह बड़े खेद की बात है कि उसकी उद्दंडता और विचारहीनता के कारण एक भलेमानुस को कष्ट झेलना पड़ा। हम प्रसन्न हैं कि वह अपने काम से सजग और सचेत रहता है, किंतु नमक से मुकद्दमे की बढ़ी हुई नमकहलाली ने उसके विवेक और बुद्धि को भ्रष्ट कर दिया। भविष्य में उसे होशियार रहना चाहिए।

वकीलों ने यह फैसला सुना और उछल पड़े। पंडित अलोपीदीन मुस्कराते हुए बाहर निकले। स्वजन बाधवों ने रुपयों की लूट की। उदारता का सागर उमड़ पड़ा। उसकी लहरों ने अदालत की नींव तक हिला दी। जब वंशीधर बाहर निकले तो चारों ओर से उनके ऊपर व्यंग्य–बाणों की वर्षा होने लगी। चपरासियों ने झुक.झुककर

सलाम किए किंतु इस समय एक–एक कटुवाक्य, एक–एक संकेत उनकी गर्वाग्नि को प्रज्ज्वलित कर रहा था। कदाचित इस मुकद्दमे में सफल होकर वह इस तरह अकड़ते हुए न चलते। आज उन्हें संसार का एक खेदजनक विचित्र अनुभव हुआ। न्याय और विद्वता, लंबी–चौड़ी उपाधियाँ, बड़ी–बड़ी दाढ़ियाँ और ढीले चोगे एक भी सच्चे आदर के पात्र नहीं हैं।

वंशीधर ने धन से बैर मोल लिया था, उसका मूल्य चुकाना अनिवार्य था। कठिनता से एक सप्ताह बीता होगा कि मुअत्तली का परवाना आ पहुँचा। कार्यपरायणता का दंड मिला। बेचारे भग्न हृदय, शोक और खेद से व्यथित घर को चले। बूढ़े मुंशी जी तो पहले ही से कुड़–बड़ा रहे थे कि चलते–चलते इस लड़के को समझाया था, लेकिन इसने एक न सुनी। सब मनमानी करता है। हम तो कलवार और कसाई के तगादे सहें, बुढ़ापे में भगत बनकर बैठें और वहाँ बस वही सूखी तनख्वाह! हमने भी तो नौकरी की है और कोई ओहदेदार नहीं थे, लेकिन काम किया, दिल खोलकर किया और आप ईमानदार बनने चले हैं। घर में चाहे अंधेरा हो, मस्जिद में अवश्य दिया जलाएंगे। खैर ऐसी समझ पर पढ़ना–लिखना सब अकारथ गया। इसके थोड़े ही दिनों बाद, जब मुंशी वंशीधर इस दुरवस्था में घर पहुँचे और बूढ़े पिता जी ने समाचार सुना तो सिर पीट लिया। बोले, जी चाहता है कि तुम्हारा और अपना सिर फोड़ लूँ। बहुत देर तक पछता–पछताकर हाथ अवश्य मलते रहे। क्रोध में कुछ कठोर बातें भी कहीं और यदि वंशीधर वहाँ से टल न जाते तो अवश्य ही यह क्रोध विकट रूप धारण करता। वृद्धा माता को भी दुख हुआ। जगन्नाथ और रामेश्वर यात्रा की कामनाएँ मिट्टी में मिल गईं। पत्नी ने तो कई दिन तक सीधे मुँह से बात भी नहीं की।

इसी प्रकार एक सप्ताह बीत गया। संध्या का समय था। बूढ़े मुंशी जी बैठे राम–नाम की माला जप रहे थे। इसी समय उनके द्वार पर सजा हुआ रथ आकर रुका। हरे और गुलाबी परदे, पछाहिए बैलों की जोड़ी, उनकी गर्दनों में नीले धागे, सींगें पीतल से जड़ी हुईं। कई नौकर लाठियाँ कंधों पर रखे साथ थे। मुंशी जी अगवानी को दौड़े। देखा तो पंडित अलोपीदीन हैं। झुककर दंडवत की और लल्लो–चप्पो की बातें करने लगे, ''हमारा भाग्य उदय हुआ जो आपके चरण इस द्वार पर आए। आप हमारे पूज्य देवता हैं, आपको कौन–सा मुँह दिखावें, मुँह में तो कालिख लगी है। किंतु क्या करें, लड़का अभागा कपूत है, नहीं तो आपसे क्यों मुँह छिपाना पड़ता? ईश्वर चाहे निःसंतान रक्खे पर ऐसी संतान न दे।''

अलोपीदीन ने कहा ''नहीं भाई साहब, ऐसा न कहिए।''

मुंशीजी ने चकित होकर कहा, ''ऐसी संतान को और क्या कहूँ?''

अलोपीदीन ने वात्सल्यपूर्ण स्वर में कहा, ''कुलतिलक और पुरुषों की कीर्ति उज्ज्वल करनेवाले संसार में ऐसे कितने धर्मपरायण मनुष्य हैं जो धर्म पर अपना सब कुछ अर्पण कर सकें?''

पंडित अलोपीदीन ने वंशीधर से कहा, ''दारोगा जी, इसे खुशामद न समझिए, खुशामद करने के लिए मुझे इतना कष्ट उठाने की ज़रूरत न थी। उस रात को आपने अपने अधिकार बल से मुझे अपनी हिरासत में लिया था, किंतु आज मैं स्वेच्छा से आपकी हिरासत में आया हूँ। मैंने हज़ारों रईस और अमीर देखे, हजारों उच्च पदाधिकारियों से काम पड़ा किंतु मुझे परास्त किया तो आपने। मैंने सबको अपना और अपने धन का गुलाम बनाकर छोड़ दिया। मुझे आज्ञा दीजिए कि आपसे कुछ विनय करूँ।''

वंशीधर ने अलोपीदीन को आते देखा तो उठकर सत्कार किया, किंतु स्वाभिमान सहित। समझ गए कि यह महाशय मुझे लज्जित करने और जलाने आए हैं। क्षमा–प्रार्थना की चेष्टा नहीं की, वरन् उन्हें अपने पिता की यह ठकुरसुहाती की बात असह्य–सी प्रतीत हुई, पर पंडित जी की बातें सुनीं तो मन की मैल मिट गई। पंडित जी की ओर मुड़ती हुई दृष्टि से देखा। सद्भाव झलक रहा था। गर्व ने अब लज्जा के सामने सिर झुका दिया।

शर्माते हुए बोले, ''यह आपकी उदारता है जो ऐसा कहते हैं। मुझसे जो कुछ अविनय हुई है,उसे क्षमा कीजिए। मैं धर्म की बेड़ी में जकड़ा हुआ था, नहीं तो वैसे मैं आपका दास हूँ। जो आज्ञा होगी, वह मेरे सिर–माथे पर।

अलोपीदीन ने विनीत भाव से कहा, ''नदी तट पर आपने मेरी प्रार्थना नहीं स्वीकार की थी, किंतु आज स्वीकार करनी पड़ेगी। वंशीधर बोले, ''मैं किस योग्य हूँ किंतु जो कुछ सेवा मुझसे हो सकती है उसमें त्रुटि न होगी।'' अलोपीदीन ने एक स्टांप लगा हुआ पत्र निकाला और उसे बंशीधर के सामने रखकर बोले ''पद को स्वीकार कीजिए और अपने हस्ताक्षर कर दीजिए। मैं ब्राह्मण हूँ, जब तक यह सवाल पूरा न कीजिएगा, द्वार से न हटूँगा।''

मुंशी वंशीधर ने उस कागज़ को पढ़ा तो कृतज्ञता से आँखों में आँसू भर आए। पंडित अलोपीदीन ने उनको अपनी सारी जायदाद का स्थाई मैनेजर नियुक्त किया था। छह हज़ार वार्षिक वेतन के अतिरिक्त रोज़ाना खर्च अलग, सवारी के लिए घोड़ा, रहने को बंगला, नौकर–चाकर मुफ्त। कंपित स्वर में बोले, ''पंडित जी, मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि आपकी उदारता की प्रशंसा कर सकूँ। किंतु ऐसे उच्च पद के योग्य नहीं हूँ।''

अलोपीदीन हँसकर बोले, ''मुझे इस समय एक अयोग्य मनुष्य की ही ज़रूरत है।''

वंशीधर ने गंभीर भाव से कहा, ''यों मैं आपका दास हूँ। आप जैसे कीर्तिवान, सज्जन पुरुष की सेवा करना मेरे लिए सौभाग्य की बात है, किंतु मुझमें न विद्या है, न बुद्धि, न वह स्वभाव जो इन त्रुटियों की पूर्ति कर देता है। ऐसे महान कार्य के लिए एक बड़े मर्मज्ञ अनुभवी मनुष्य की ज़रूरत है।''

अलोपीदीन ने कलमदान से कलम निकाली और उसे वंशीधर के हाथ में देकर बोले, ''न मुझे विद्वत्ता की चाह है, न अनुभव की, न मर्मज्ञता की, न कार्यकुशलता की। इन गुणों के महत्त्व का परिचय खूब पा चुका हूँ। अब सौभाग्य और सुअवसर ने मुझे वह मोती दे दिया है जिसके सामने योग्यता और विद्वत्ता की चमक फीकी पड़ जाती है। यह कलम लीजिए, अधिक सोच–विचार न कीजिए, दस्तख़त कर दीजिए। परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वह आपको सदैव वही नदी के किनारेवाला, बेमुरौवत, उद्दंड, कठोर परंतु धर्मनिष्ठ दारोगा बनाए रखे!''

वंशीधर की आँखें डबडबा आईं। हृदय के संकुचित पात्र में इतना एहसान न समा सका। एक बार फिर पंडित जी की ओर भक्ति और श्रद्धा की दृष्टि से देखा और काँपते हुए हाथ से मैनेजरी के कागज़ पर हस्ताक्षर कर दिए।

अलोपीदीन ने प्रफुल्लित होकर उन्हें गले लगा लिया।

छात्र की परीक्षा

छात्र श्रीमधुसूदन ! श्रीयुत् कालाचाँद मास्टर पढ़ा रहा हैं। अभिभावक का प्रवेश।

अभिभावक : मधुसूदन की पढ़ाई कैसी चल रही हैं, कालाचाँद बाबू?

कालाचाँद : जो, मधुसूदन दुष्ट तो हैं, पर पढ़ने–लिखने में बड़ा तेज़ हैं। कोई बात दुबारा नही बतानी पड़ती। एक बार का पढ़ाया फिर कभी नहीं भूलता।

अभिभावक : सच? तो, आज मैं उसकी परीक्षा कर देखता हूँ जरा।

कालाचाँद : खुशी से

मधुसूदन	:	(स्वगत) कल मास्टर साहब ने वह मार मारी कि आज भी पीठ चरचरा रही हैं। आज लूँगा बदला। इन्हें आज निकलवा न दिया तो मधु नाम नहीं।
अभिभावक	:	क्यों रे मधु, पिछली पढ़ाई भूली तो नहीं?
मधुसूदन	:	मास्टर साहब ने जो–कुछ बता दिया है, सब याद हैं।
अभिभावक	:	अच्छा, यह तो बता कि ऊद्भिद् किसे कहते हैं।
मधुसूदन	:	ऊद्भिद वह हैं जो मिट्टी को फोड़कर ऊपर की ओर निकलता हैं।
अभिभावक	:	कोई उदाहरण तो बताओ।
मधुसूदन	:	केचुँआ।
कालाचाँद	:	(आँखे तररेकर) ऐं? क्या कहा?
अभिभावक	:	जरा ठहरिये साहब, अभी आप कुछ न बोलिये।
		(मधुसूदन से) तुमने पद्यपाठ पढ़ा हैं;–यह बताओ कि वन में क्या खिलता हैं ?
मधुसूदन	:	काँटा।
		(कालाचाँद बेत उठाते हैं)
		क्यों साहब, मारते क्यों हैं? मैं कोई झूठ कहता हूँ ?
अभिभावक	:	अच्छा, सिराजुद्दौला को किसने मिटाया? इतिहास क्या कहता हैं ?
मधुसूदन	:	कीडों ने।
		(बेंत की मार)
		जी, ख़ामख़ाह मार खानी पड़ती हैं। सिर्फ़ सिराद्दौला को ही क्यों, सारे इतिहास को ही कीड़े चाट गये हैं। (प्रदर्शन। कालाचाँद मास्टर सिर खुजाते हैं।)
अभिभावक	:	व्याकरण याद हैं?
मधुसूदन	:	जी, हैं।
अभिभावक	:	कर्त्ता' क्या हैं? उदाहरण के साथ समझाओ तो ज़रा।
मधुसूदन	:	जी, कर्त्ता तो उसी टोले के जयलाल मुंशी हैं।
अभिभावक	:	क्यों भला?
मधुसूदन	:	वह हमेशा किया–कर्म को ही लिये रहते हैं।
कालाचाँद	:	(रोष में) तुम्हारा सिर !
		(पीठ पर बेंत)
मधुसूदन	:	(चौंककर) जी सिर नहीं, वह तो पीठ हैं।

अभिभावक : षष्ठी–तत्पुरूष किसे कहते हैं?

मधुसूदन : पता नहीं।

(कालाचाँद बेंत दिखाते हैं)

इसको तो अच्छी तरह जानता हूँ– यह है षष्ठी–तत्पुरूष ।

(अभिभावक का हँसना और कालाचाँद का ठीक विपरीत भाव)

अभिभावक : अंकगणित सीखा हैं?

अभिभावक : अच्छा, तुम्हें साढ़े छह पेड़े देकर यह कहा गया हैं कि पाँच मिनट तक पेड़ें खाने के बाद जो पेड़े बच रहें, उन्हें तुम अपने छोटे भाई को दे दो। एक पेड़ खाने में तुम्हें दो मिनट लगते हैं। बताओ, तुम अपने भाई को कितने पेड़ दोगें?

मधुसूदन : एक भी नहीं।

कालाचाँद : सो कैसे?

मधुसूदन : सब खा डालूँगा। दे नहीं पाऊँगा।

अभिभावक : अच्छा, बउ का एक पेड़ रोज पाव इंच ऊँचा होता हैं। इस बैसाख की पहली को वह दस इंच का था, तो अलगे साल बैसाख की पहली को वह कितना ऊँचा होगा?

मधुसूदन : पेड़ टेढ़ा हो जाय तब तो कहना मुश्किल है; हाँ, अगर सीधे ऊपर बढ़ता तो नाप कर देखने पर उसकी ऊँचाई का पक्का पता लग सकेगा; और अगर इसी बीच सूख गया, तब तो कोई बात ही नहीं।

कालाचाँद : मार खाये बिना तुम्हारी बुद्धि का पट नहीं खुलता! कमबख़्त, मार–मारकर पीठ लाल कर दूँगा! तभी सीधे होगे तुम।

मधुसूदन : जी, मार खाकर तो सीधी–से–सीधी चीज़ भी टेढ़ी हो जाती हैं।

अभिभावक : कालाचाँद बाबू, यह आपका भ्रम हैं। मारपीट से शायद ही कोई काम बन पाता हैं। कहा हैं कि गधे को पीटकर घोड़ा नहीं बनाया जा सकता, पर अक्सर घोड़ा पिटते–पिटते गधा हो जाता हैं। अधिकतर लड़के सीख सकते हैं, पर अधिकतर मास्टर सिखा ही नहीं सकते। और मार पड़ती है बेचारे लड़के पर ही। आप अपनी बेंत–छड़ी समेत यहाँ से विदा लें। कुछ दिन मधुसूदन की पीठ सुस्ता ले तो मैं आप भी इसे पढ़ाऊँगा।

मधुसूदन : (स्वगत) आह, जान बची!

कालाचाँद : जान बची, साहब। इस लड़के को पढ़ाना मजदूर का काम हैं; सोलहों मैनुअल

लेबर। तीस दिन एक लड़के को पीट कर मुझे सिर्फ़ पाँच रूपये मिलते हैं; उतनी ही मेहनत से कहीं छत–वत पीटूँ तो कम–से–कम दस रूपये तो मिल जायँगे।

कुछ करने को

- मधुसूदन जैसे बच्चे आपकी कक्षा में भी हो सकते है? ऐसे बच्चों के लिए योजना तैयार करें।
- बच्चों के मूल्यांकन में अभिभावकों की भूमिका पर अपने साथी शिक्षकों के साथ चर्चा कीजिए।

लोकगीत (निबन्ध)

लोकगीत अपनी लोच, ताज़गी और लोकप्रियता में शास्त्रीय संगीत से भिन्न हैं। लोकगीत सीधे जनता के संगीत हैं। घर, गाँव और नगर की जनता के गीत हैं ये। इनके लिए साधना की ज़रूरत नहीं होती। त्योहारों और विशेष अवसरों पर ये गाए जाते हैं। सदा से ये गाए जाते रहे हैं और इनके रचने वाले भी अधिकतर गाँव के लोग ही हैं। स्त्रियों ने भी इनकी रचना में विशेष भाग लिया है। ये गीत बाजों की मदद के बिना ही या साधारण ढोलक, झँडा, करताल, बाँसुरी आदि की मदद से गाए जाते हैं।

एक समय था जब शास्त्रीय संगीत के सामने इनको हेय समझा जाता था। अभी हाल तक इनकी बड़ी उपेक्षा की जाती थी। पर इधर साधारण जनता की ओर जो लोगों की नज़र फिरी है तो साहित्य और कला के क्षेत्र में भी परिवर्तन हुआ है। अनेक लोगों ने विविध बोलियों के लोक–साहित्य और लोकगीतों के संग्रह पर कमर बाँधी है और इस प्रकार के अनेक संग्रह अब तक प्रकाशित भी हो गए हैं।

लोकगीतों के कई प्रकार हैं। इनका एक प्रकार तो बड़ा ही ओजस्वी और सजीव है। यह इस देश के आदिवासियों का संगीत है। मध्य प्रदेश, दकन, छोटा नागपुर में गोंड–खांड, ओराँव–मुंडा, भील–संथाल आदि फैले हुए हैं, जिनमें आज भी जीवन नियमों की जकड़ में बँध न सका और निर्द्वंद्व लहराता है। इनके गीत और नाच अधिकतर साथ–साथ और बड़े–बड़े दलों में गाए और नाचे जाते हैं। बीस–बीस, तीस–तीस आदमियों और औरतों के दल एक साथ या एक–दूसरे केक जवाब में गाते हैं, दिशाएँ गूँज उठती हैं।

पहाड़ियों के अपने–अपने गीत हैं। उनके अपने–अपने भिन्न रूप होते हुए भी अशास्त्रीय होने के कारण उनमें अपनी एक समान भूमि है। गढ़वाल, किन्नौर, काँगड़ा आदि के अपने–अपने गीत और उन्हें गाने की अपनी–अपनी विधियाँ हैं। उनका अलग नामही 'पहाड़ी' पड़ गया है।

वास्तविक लोकगीत देश के गाँवों और देहातों में है। इनका संबंध देहात की जनता से है। बड़ी जान होती है इनमें। चैता, कजरी, बारहमासा, सावन आदि मिर्ज़ापुर, बनारस और उत्तर प्रदेश के अन्य पूरबी और बिहार के पश्चिमी ज़िलों में गाए जाते हैं। बाउल और भतियाली बंगाल के लोकगीत हैं। पंजाब में माहिया आदि इसी प्रकार के हैं। हीर–राँझा, सोहनी–महीवाल संबंधी गीत पंजाबी में और ढोला–मारू आदि के गीत राजस्थानी में बड़े चाव से गाए जाते हैं।

इन देहाती गीतों के रचयिता कोरी कल्पना को इतना मान न देकर अपने गीतों के विषय रोज़मर्रा के बहते जीवन से लेते हैं, जिससे वे सीधे मर्म को छू लेते हैं। उनके राग भी साधारणतः पीलू, सारंग, दुर्गा, सावल, सोरठ आदि हैं। कहरवा, बिरहा, धोतिबया आदि देहात में बहुत गाए जाते हैं और बड़ी भीड़ आकर्षित करते हैं।

इनकी भाषा के संबंध में कहा जा चुका है कि ये सभी लोकगीत गाँवों और इलाकों की बोलियों में गाए जाते हैं। इसी कारण ये बड़े आह्लादकर और आनंददायक होते हैं। राग तो इन गीतों के आकर्षक होते ही हैं, इनकी समझी जा सकने वाली भाषा भी इनकी सफलता का कारण है।

भोजपुरी में करीब तीस–चालीस बरसों से 'बिदेसिया' का प्रचार हुआ है। गाने वालों के अनेक समूह इन्हें गाते हुए देहात में फिरते हैं। उधर के ज़िलों में विशेषकर बिहार में बिदेसिया से बढ़कर दूसरे गाने लोकप्रिय नहीं हैं। इन गीतों में अधिकतर रसिकप्रियों और प्रियाओं की बात रहती है, परदेशी प्रेमी की और इनसे करुणा और विरह का रस बरसता है।

जंगल की जातियों आदि के भी दल–गीत होते हैं जो अधिकतर बिरहा आदि में गाए जाते हैं। पुरुष एक ओर और स्त्रियाँ दूसरी ओर एक–दूसरे के जवाब के रूप में दल बाँधकर गाते हैं और दिशाएँ गुँजा देते हैं। पर इधर कुछ काल से इस प्रकार के दलीय गायन का ह्रास हुआ है।

एक दूसरे प्रकार के बड़े लोकप्रिय गाने आल्हा के हैं। अधिकतर ये बुंदेलखंडी में पाए जाते हैं। आरंभ तो इसका चंदेल राजाओं के राजकवि जगनिक से माना जाता है जिसने आल्हा–रूदल की वीरता का अपने महाकाव्य में बखान किया पर निश्चय ही उसके छंद को लेकर जनबोली में उसके विषय को दूसरे देहाती कवियों ने भी समय–समय पर अपने गीतों में उतारा और ये गीत हमारे गाँवों में आज भी बहुत प्रेम से गाए जाते हैं। इन्हें गाने वाले गाँव–गाँव ढोलक लिए गाते फिरते हैं। इसी की सीमा पर उन गीतों का भी स्थान है जिन्हें नट रस्सियों पर खेल करते हुए गाते हैं। अधिकतर ये गद्य–पद्यात्मक हैं और इनके अपने बोल हैं।

अनंत संख्या अपने देश में स्त्रियों के गीतों की हैं। हैं तो ये गीत भी लोकगीत ही, पर अधिकतर इन्हें औरतें ही गाती हैं। इन्हें सिरजती भी अधिकतर वे ही हैं। वैसे मर्द रचने वालों या गाने वालों की भी कमी नहीं है पर इन गीतों का संबंध विशेषतः स्त्रियों से हैं। इस दृष्टि से भारत इस दिशा में सभी देशों से भिन्न है क्योंकि संसार के अन्य देशों में स्त्रियों के अपने गीत मर्दों या जनगीतों से अलग और भिन्न नहीं हैं, मिले–जुले ही हैं।

त्योहारों पर नदियों में नहाते समय के, नहाने जाते हुए राह के, विवाह के, मटकोड़, ज्यौनार के, संबंधियों के लिए प्रेमयुक्त गाली के, जन्म आदि सभी अवसरों के अलग–अलग गीत हैं, जो स्त्रियाँ गाती हैं। इन अवसरों पर कुछ आज से ही नहीं बड़े प्राचीनकाल से वे गाती रही हैं। महाकवि कालिदास आदि ने भी अपने ग्रंथों में उनके गीतों का हवाला दिया है। सोहर, बानी, सेहरा आदि उनके अनंत गानों में से कुछ हैं। वैसे तो बारहमासे पुरुषों के साथ नारियाँ भी गाती हैं।

एक विशेष बात यह है कि नारियों के गाने साधारणतः अकेले नहीं गाए जाते, दल बाँधकर गाए जाते हैं। अनेक कंठ एक साथ फूटते हैं। यद्यपि अधिकतर उनमें मेल नहीं होता, फिर भी त्योहारों और शुभ अवसरों पर वे बहुत ही भले लगते हैं। गाँवों और नगरों में गायिकाएँ भी होती हैं जो विवाह, जन्म आदि के अवसरों पर गाने के लिए बुला ली जाती हैं। सभी ऋतुओं में स्त्रियाँ उल्लसित होकर दल बाँधकर गाती हैं। पर होली, बरसात की कजरी आदि तो उनकी अपनी चीज़ है, जो सुनते ही बनती है। पूरब की बोलियों में अधिकतर मैथिल–कोकिल विद्यापति के गीत गाए जाते हैं। पर सारे देश के–कश्मीर से कन्या कुमारी–केरल तक और काठियावाड़–गुजरात–राजस्थान से उड़ीसा–आंध्र तक – अपने–अपने विद्यापति हैं।

स्त्रियाँ ढोलक की मदद से गाती हैं। अधिकतर उनके गाने के साथ नाच का भी पुट होता है। गुजरात का एक प्रकार का दलीय गायन 'गरबा' है जिसे विशेष विधि से घेरे में घूम–घूमकर औरतें गाती हैं। साथ ही लकड़ियाँ भी बजाती जाती हैं जो बाजे का काम करती हैं। इसमें नाच–गान साथ चलते हैं। वस्तुतः यह नाच ही है। सभी प्रांतों में यह लोकप्रिय हो चला है। इसी प्रकार होली के अवसर पर ब्रज में रसिया चलता है जिसे दल के दल लोग गाते हैं, स्त्रियाँ विशेष तौर पर।

गाँव के गीतों के वास्तव में अनंत प्रकार हैं। जीवन जहाँ इठला–इठलाकर लहराता है वहाँ भला आनंद के स्रोतों की कमी हो सकती है? उपाम जीवन के ही वहाँ के अनंत संख्यक गाने प्रतीक हैं।

भगवतशरण उपाध्याय

कुछ करने को

1. आप अपने इलाके के कुछ लोकगीत इकट्ठा करें। गाए जाने वाले मौकों के अनुसार उनका वर्गीकरण करें।
2. जैसे–जैसे शहर फैल रहे हैं और गाँव सिकुड़ रहे हैं, लोकगीतों पर उनका क्या असर पड़ रहा है? अपने आसपास के लोगों से बातचीत करके और अपने अनुभवों के आधार पर एक अनुच्छेद लिखें।
3. यह निबंध देश के कुछ भागों के लोकगीतों के बारे में है। आप भी अपने क्षेत्र के लोकगीतों, नृत्यों के बारे में एक ऐसा निबंध लिखिए। कुछ बिन्दु आपको लिखने में मदद करेंगे।

- लोकगीत से आप क्या समझते हैं।
- लोकगीतों के प्रकार।
- किन–किन के बारे में है अथवा उनमें क्या चरित्र है?
- कब कौन से गीत गाये जाते हैं? उनमें क्या फर्क है? इत्यादि।

सूफी कहानियाँ (लघुकथाएँ)

सही जगह

मुल्ला नसरुद्दीन ने अपने शागीर्दों को दावत पर बुलाया था। जमकर दावत उड़ी। सबने जी भरकर खाया–पीया और दुनिया– जहान की बातें कीं। आधी रात होने को आई तो सबने अपने–अपने घर जाने की सोची।

लज़ीज़ पकवान की एक तश्तरी बची पड़ी थी। मुल्ला ने शागीर्दों से कहा, इसे अभी का अभी खाकर खत्म करो।

मुल्ला का हुक्म मानकर सब खाने लगे। सिर्फ एक शागीर्द ने दृढ़ता से मना कर दिया। सब खा चुके तो उसने कहा, उस्ताद हमारी परीक्षा ले रहे थे कि हम अपनी इच्छा पर काबू रख सकते हैं या नहीं? सिर्फ मैं खरा उतरा।

तुमने गलत समझा। मुल्ला ने कहा। इच्छा को काबू में करने का सबसे अच्छा तरीका है कि उसे पूरा करके किस्सा खत्म करो। मैंने सिर्फ इतना चाहा कि बचे हुए लज़ीज़ खाने को तुम लोग अपने पेट के हवाले करो जो उसकी सही जगह है बजाय दिमाग के जिससे कुछ और बेहतर सोचना चाहिए।

मछली

एक सल्तनत का वज़ीर मर गया। सुलतान को अपनी रियाया की बड़ी फिक्र रहती थी। उसने अपने आदमियों से कहा, ऐसा कोई काबिल आदमी ढूँढकर लाओ जिसने गुर्बत (गरीबी) देखी हो। जो अपनी जड़ों से जुड़ा हो और तकलीफ के दिनों को भुला न बैठा हो। हम ऐसे ही किसी शख्स को अपना नया वज़ीर मुकर्रर करेंगे।

यह बात किसी तरह मुल्ला नसरुद्दीन के कानों तक पहुँच गई। उसने कहीं से मछली पकड़ने का एक पुराना जाल हासिल किया और उसे पगड़ी की तरह सिर पर लपेटकर घूमने लगा। सुलतान के आदमियों की नज़र मुल्ला पर पड़ी। उन्होंने उसे उसकी इस अजीबो–गरीब पगड़ी के बारे में पूछा।

मुल्ला ने जवाब दिया, यह जाल वही है जिससे मछली पकड़कर हमारे दादा हुज़ूर ने हमारी दो पीढ़ियों की परवरिश की। मैं उन गुर्बत और तकलीफ के दिनों को भूल न जाऊँ इसीलिए इस जाल को इज़्ज़त से पगड़ी की तरह पहने रहता हूँ।

ज़ाहिर है, बात सुलतान तक पहुँचनी ही थी। सुलतान ने मुल्ला को बुलाया और अपना वज़ीर मुकर्रर कर दिया।

पहले दिन मुल्ला जब कचहरी में जाकर बैठा, तो लोगों ने देखा, उसने ठीक वज़ीरों जैसा कमखाब का चोगा पहन रखा है और उसके सिर पर शानदार जड़ाऊ पगड़ी रखी है।

टोल्स्टोय की कहानियाँ (लघुकथाएँ)

शेर और गधा

एक बार एक शेर शिकार के लिए निकला तो उसने गधे को अपने साथ ले लिया और उससे बोला, गधे, तुम जंगल में जाकर पूरे ज़ोर–से रेंको। तुम्हारा गला काफी बड़ा है। तुम्हारे रेंकने से जो भी जानवर डरकर भागने लगेंगे, मैं उन्हें झपट लूँगा।

गधे ने ऐसा ही किया। वह खूब ज़ोर से रेंकने लगा और जानवर अपनी सुध–बुध भूलकर दौड़ने लगे। शेर उनका शिकार कर लेता था। शिकार खत्म होने पर शेर ने गधे से कहा, शाबाश है तुम्हें, तुम खूब रेंकते रहे।

तब से गधा इसी तरह रेंकता है और इन्तज़ार करता रहता है कि कोई उसकी तारीफ करे।

दो मेंढक

गर्मी से सारे तालाब और दलदल सूख गए। दो मेंढक पानी की तलाश में गए। फुदककर कुएँ की मेड़ पर बैठ गए और सोचने लगे कि कुएँ में कूदें या न कूदें। जवान मेंढक बोला, हमें कूद जाना चाहिए। वहाँ पानी बहुत है और वहाँ हमें परेशान भी कोई नहीं करेंगा।

लेकिन दूसरे ने जवाब दिया, नहीं, हमें नहीं कूदना चाहिए। पानी तो शायद वहाँ बहुत है लेकिन अगर कुआँ सूख गया तो हम वहाँ से बाहर तो नहीं निकल सकेंगे।

सूखी घास पर कुत्ता

एक कुत्ता सायबान में सूखी घास पर लेटा हुआ था। एक गाय का घास खाने का मन हुआ। वह सायबान में गई। उसने सूखी घास के ढेर के पास जाकर उसमें अपना सिर घुसेड़ दिया। और जैसे ही घास से मुँह भरा, वैसे ही कुत्ता गुर्राते हुए उस पर झपटा। गाय वहाँ से दूर हट गई और बोली, न तो खुद खाता है और न मुझे ही खाने देता है।

एक मध्यवर्गीय कुत्ता (व्यंग्य)

हरिशंकर परसाई ने इस रचना में कुत्ते के माध्यम से समाज की मध्यमवर्गीय मानसिकता पर करारा व्यंग्य किया है। एक ओर मध्यमवर्गीय व्यक्ति उच्चवर्गीय होने का ढोंग करता है, तो दूसरी ओर सर्वहारा वर्ग का साथ देने का प्रयास भी। इसी दोमुखी जिंदगी में फँसे मध्यमवर्गीय मनुष्य की दुर्दशा का यथार्थ चित्रण यहाँ दी गई रचना में किया गया है।

मेरे मित्र की कार बँगले में घुसी तो उतरते हुए मैंने पूंछा, ''इनके यहाँ कुत्ता तो नहीं है?''

मित्र ने कहा, ''तुम कुत्ते से बहुत डरते हो!''

मैंने कहा, ''आदमी की शक्ल में कुत्ते से नहीं डरता। उनसे निपट लेता हूँ। पर बच्चे कुत्ते से बहुत डरता हूँ।''

कुत्तेवाले घर मुझे अच्छे नहीं लगते। वहाँ जाओ तो मेज़बान के पहले कुत्ता भौंककर स्वागत करता है। अपने स्नेही से 'नमस्ते' हुई ही नहीं कि कुत्ते ने गाली दे दी– 'क्यों यहाँ आया बे? तेरे बाप का घर है? भाग यहाँ से!'

फिर कुत्ते के काटने का डर नहीं लगता– चार बार काट ले। डर लगता है उन चौदह बड़े–बड़े इंजेक्शनों का जो डॉक्टर पेट में घुसेड़ता है। यूँ कुछ आदमी कुत्ते से अधिक ज़हरीले होते हैं। एक परिचित को कुत्ते ने काट लिया था। मैंने कहा, ''इन्हें कुछ नहीं होगा। हालचाल उस कुत्ते के देखो और इंजेक्शन उसे लगाओ।''

एक नए परिचित ने मुझे घर पर चाय के लिए बुलाया। मैं उनके बँगले पर पहुँचा तो फाटक पर तख्ती टँगी दीखी– 'कुत्ते से सावधान!' मैं फ़ोरन लौट गया। कुछ दिनों बाद वे मिले तो शिकायत की, ''आप उस दिन चाय पीने नहीं आए।''

मैंने कहा, ''माफ करें। मैं बँगले तक गया था। वहाँ तख्ती लटकी थी– 'कुत्ते से सावधान।' मेरा ख़याल था, उस बँगले में आदमी रहते हैं। पर नेमप्लेट कुत्ते की टँगी दीखी।''

युँ कोई–कोई आदमी कुत्ते से बदतर होता है। मार्क ट्वेन ने लिखा है– 'यदि आप भूखे मरते कुत्ते को रोटी खिला दें, तो वह आपको नहीं काटेगा। कुत्ते में और आदमी में यही मूल अंतर है।'

बँगले में हमारे स्नेही थे। हमें वहाँ तीन दिन ठहरना था। मेरे मित्र ने घंटी बजाई तो जाली के अंदर से वही 'भौं–भौं की आवाज़ आई। मैं दो कदम पीछे हट गया। हमारे मेज़बान आए। कुत्ते को डाँटा– 'टाइगर! उनका मतलब था– 'शेर, ये लोग कोई चोर–डाकू नहीं हैं। तू इतना वफादार मत बन।'

कुत्ता जंजीर से बँधा था। उसने देख भी लिया था कि हमें उसके मालिक खुद भीतर ला रहे हैं, पर वह भौंके जा रहा था। मैं उससे काफी दूर से लगभग दौड़ता हुआ भीतर गया।

मैं समझा, यह उच्चवर्गीय कुत्ता है। लगता ऐसा ही है। मैं उच्चवर्गीय का बड़ा अदब करता हूँ। चाहे वह कुत्ता ही क्यों न हो। उस बँगले में मेरी अजब स्थिति थी। मैं हीनभावना से ग्रस्त था– इसी अहाते में एक उच्चवर्गीय कुत्ता और इसी में मैं। वह मुझे हिकारत की नज़र से देखता।

शाम को हम लोग लॉन में बैठे थे। नौकर कुत्ते को अहाते में घुमा रहा था।

मैंने देखा, फाटक पर आकर दो 'सड़किया' आवारा कुत्ते खड़े हो गए। वे सर्वहारा कुत्ते थे। वे इस कुत्ते को बड़े गौर से देखते। फिर यहाँ–वहाँ घूमकर लौट आते और इस कुत्ते को देखते रहते। पर यह बँगलेवाला उन पर भौंकता था। वे सहम जाते और यहाँ–वहाँ हो जाते। पर फिर आकर इस कुत्ते को देखने लगते।

मेज़बान ने कहा, ''यह हमेशा का सिलसिला है। जब भी यह अपना कुत्ता बाहर आता है, वे दोनों कुत्ते इसे देखते रहते हैं।''

मैंने कहा, ''पर इसे उन पर भौंकना नहीं चाहिए। यह पट्टे और जंजीरवाला है। सुविधाभोगी है। वे कुत्ते भुखमरे और आवारा हैं। इसकी और उनकी बराबरी नहीं है। फिर यह क्यों चुनौती देता है।''

रात को हम बाहर ही सोए। ज़ंजीर से बँधा कुत्ता भी पास ही अपने तख़्त पर सो रहा था। अब हुआ यह कि आसपास जब भी वे कुत्ते भौंकते, यह कुत्ता भी भौंकता। आख़िर यह उनके साथ क्यों भौंकता है? यह तो उन पर भौंकता है। जब वे मुहल्ले में भौंकते हैं तो यह भी उनकी आवाज़ मिलाने लगता है, जैसे उन्हें आश्वासन देता हो कि मैं यहाँ हूँ, तुम्हारे साथ हूँ।

मुझे इसके वर्ग पर शक होने लगा है। यह उच्चवर्गीय कुत्ता नहीं है। मेरे पड़ोस में ही एक साहब के पास थे दो कुत्ते। उनका रोब ही निराला! मैंने उन्हें कभी भौंकते नहीं सुना। आसपास कुत्ते भौंकते रहते, पर वे ध्यान नहीं देते थे। लोग निकलते, पर वे झपटते भी नहीं थे। कभी मैंने उनकी एक धीमी गुर्राहट ही सुनी होगी। वे बैठे रहते या घूमते रहते। फाटक खुला होता तो भी बाहर नहीं निकलते थे। बड़े रोबीले, अहंकारी और आत्मतुष्ट।

यह कुत्ता उन सर्वहारा कुत्तों पर भौंकता भी है और उनकी आवाज़ में आवाज़ भी मिलाता है। कहता है– मैं तुममें शामिल हूँ। उच्चवर्गीय झूठा रोब भी और संकट के आभास पर सर्वहारा के साथ भी। यह चरित्र है इस कुत्ते का। यह मध्यवर्गीय चरित्र है। यह मध्यवर्गीय कुत्ता है। उच्चवर्गीय होने का ढोंग भी करता है और सर्वहारा के साथ मिलकर भौंकता भी है।

तीसरे दिन रात को हम लौटे तो देखा, कुत्ता त्रस्त पड़ा है। हमारी आहट पर वह भौंका नहीं, थोड़ा–सा मरी आवाज़ में गुर्राया। आसपास वे आवारा कुत्ते भौंक रहे थे, पर यह उनके साथ भौंका नहीं। थोड़ा गुर्राया और फिर निढाल पड़ गया।

मेरे मेज़बान ने बताया, ''आज यह बुरी हालत में है। हुआ यह कि नौकर की गफ़लत के कारण यह फाटक के बाहर निकल गया। वे दोनों कुत्ते तो घात में थे ही। दोनों ने इसे घेर लिया। इसे रगेदा। दोनों इस पर चढ़ बैठे। इसे काटा। हालत ख़राब हो गई। नौकर इसे बचाकर लाया। तभी से यह सुस्त पड़ा है और घाव सहला रहा है। डॉक्टर श्रीवास्तव से कल इसे इंजेक्शन दिलाऊँगा।''

मैंने कुत्ते की तरफ़ देखा। दीन भाव से पड़ा था। मैंने अंदाजा लगाया। हुआ यों होगा–

यह अकड़ से फाटक के बाहर निकला होगा। उन कुत्तों पर भौंका होगा। उन कुत्तों ने कहा होगा– 'अबे, अपना वर्ग नहीं पहचानता। ढोंग रचता है। ये पट्टा और ज़ंजीर लगाए है। मुफ्त का खाता है। लॉन पर टहलता है। हमें ठसक दिखाता है। पर रात को जब किसी आसन्न संकट पर हम भौंकते हैं, तो तू भी हमारे साथ हो जाता है। संकट में हमारे साथ है, मगर यों हम पर भौंकेगा। हममें से है तो निकल बाहर। छोड़ यह पट्टा और ज़ंजीर। छोड़ यह आराम। घूर पर पड़ा अन्ना खा या चुराकर रोटी खा। धूल में लोट।'

इसे रगेदा, पटका, काटा और धूल खिलाई।

कुत्ता चुपचाप पड़ा अपने सही वर्ग के बारे में चिंतन कर रहा है।

– हरिशंकर परसाई

कुछ करने को

1. यह लेख हरिशंकर परसाई की रचना है जो हिन्दी के महान व्यंग्यकार माने जाते हैं। जैसा कि इस लेख में आपने देखा वे अपने आसपास की साधारण चीजों और घटनाओं पर इस तरह लिखते थे कि पढ़ने वाले को हँसी आ जाए। इस तरह हँसाने वाली भाषा का इस्तेमाल करते हुए एक छोटा लेख अपने आसपास की किसी चीज़ या घटना के बारे में लिखें।

डी.एल.एड. प्रथम वर्ष के लिए

विषय–सूची

इकाई IV

अध्याय 13: बातें करना

इस विडियो में शिक्षिका बच्चों के साथ उनके अनुभव पर बातचीत कर रही हैं। देखने के लिए इस QR कोड का उपयोग करें।

इस विडियो में शिक्षिका बच्चों के साथ एक चित्र पर बातचीत कर रही हैं। देखने के लिए इस QR कोड का उपयोग करें।

इकाई V

अध्याय 17: पढ़ना कैसे सिखाया जाय?

इस विडियो में शिक्षिका बच्चों को किताब पढ़कर सुना रही हैं। देखने के लिए इस QR कोड का उपयोग करें।

इस विडियो में शिक्षिका बड़ी किताब के साथ बच्चों से बातचीत कर रही हैं। देखने के लिए इस QR कोड का उपयोग करें।

इस विडियो में बच्चे शिक्षक के साथ पढ़ते हुए कुछ–कुछ शब्दों को पहचान रहे हैं। देखने के लिए इस QR कोड का उपयोग करें।

अध्याय 20: पढ़ना सिखाना

'पढ़ना किसे कहते हैं' समझने के लिए इस पीपीटी को देखें। देखने के लिए QR कोड का उपयोग करें।

इकाई VI

अध्याय 24: लिखना—बातचीत

यह विडियो बच्चों के उभरते लेखन से सम्बंधित है। देखने के लिए इस QR कोड का उपयोग करें।

इस विडियो में बच्चों के साथ साझा लेखन की गतिविधि है। देखने के लिए इस QR कोड का उपयोग करें।